नागरीप्रचारिणी ग्रथमाला सं० १७

भूष ग्रंथावली

(सटिप्पण)

संपादक तथा टीकाकार
स्वर्गवासी रावराजा डाक्टर साहित्यवाचस्पति
पं० श्यामबिहारी मिश्र, एम० ए०, डी० लिट्०,

और

रायबहादुर साहित्यवाचस्पति
ं० शुकदेवबिहारी मिश्र, बी० ए०
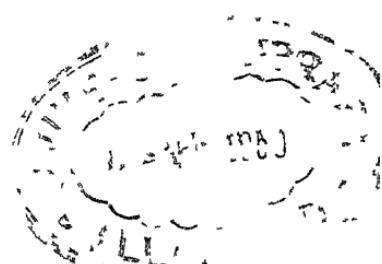
षष्ठ संस्करण का वक्तव्य

महाकवि भूषण की रचना पर हम लोग बहुत काल से मनन और परिश्रम करते आए थे। भूषण ग्रंथावली का प्रथम संस्करण प्रायः तीस वर्ष हुए, प्रकाशित हुआ था। इसके प्रायः ५ वर्ष पूर्व से हम लोग इस विषय पर परिश्रम करते आए थे। समय के साथ नवीन घटनाओं तथा ऐतिहासिक विषयों का ज्ञान प्राप्त होने से इस कविरत्न के संबंध में दिनों दिन विचार परिष्कृत होते गए। इन्ही के अनुसार दूसरी तथा तीसरी आवृत्तियो मे नवीन मतानुसार संशोधन होते गए। अनंतर भाषा-साहित्य-प्रेमियो ने इस प्राचीन विषय पर खंडनात्मक तथा मडनात्मक दोनों प्रकार के लेख कुछ प्रचुरता से लिखे। केलूसकर तथा तकाखौ नामक दो महाराष्ट्र लेखको ने शिवाजी महाराज की बहुत ही श्रेष्ठ जीवनी लिखी। सरकार महोदय का इसी विषय पर जो ग्रंथरत्न है, उसके भी अधिक अवलोकन की आवश्यकता हुई। सं० १९९५ तक समाज को महाराज शिवाजी संबंधी ऐतिहासिक ज्ञानवृद्धि बहुत अच्छी हुई। इन्हीं सब कारणों से हमें भी शिवाजी संबंधी इतिहास पर विशेष ध्यान देना पड़ा। केलूसकर तथा तकाखौ महाशयों का ग्रंथ इतना रोचक है कि निष्कारण भी उसे दो बार पढ़े बिना चित्त प्रसन्न न हुआ। इन सब खोजो का फल इस षष्ठ संस्करण में रखा गया है। भूमिका तथा टिप्पणी दोनों मे प्रचुरता से संशोधन किया गया है। नए नोट भी बहुत कुछ बढ़ाये गए

है। नवीन ऐतिहासिक खोजों से कुछ प्राचीन छंदों के न
समझ पड़े हैं जो नोटों में लिखे गए हैं। कुछ नए छंद भी
जो स्फुट छंदो मे संनिविष्ट हुए है। महाकवि भूषण के स
बहुत कुछ नया विचार हुआ और इनके तीन भ्राताओ से
पर भी कुछ सज्जनो ने संदेह प्रकट किया था, सो इस विषय
किया गया है। इसी विषय पर अपने नवीन ग्रंथ सुमनांजलि
खंड मे हम तीन बड़े लेखों में अपना मत प्रकट कर चुके हैं
प्रयाग के बेलवेडियर प्रेस ने हाल ही में प्रकाशित किया है।

विषय-सूची

(१) षष्ठ संस्करण का वक्तव्य

(२) शिवराज भूषण ग्रंथ

भूषण-ग्रंथावली की

भूमिका

—o—

"एक लहैं तप पुजन के फल ज्यों तुलसी अरु सूर गोसाईं ।
एकन को बहु सपति केशव भूषन ज्यों बलबीर बड़ाई ॥
एकन को जस ही सों प्रयोजन है रसखानि रहीम कि नाईं ।
दास कबित्तन की चरचा गुनवंतन को सुखदै सब ठाईं" ॥

वास्तव में सन् १७३४ के कवि दासजी का उपर्युक्त सवैया भूषणजी के विषय में जो कुछ कहता है, वह बिलकुल ठीक है। जैसी कुछ संपत्ति और बड़ाई कविता से भूषणजी को प्राप्त हुई, वैसी प्रायः औरों को नहीं मिली।

हमारे भाषा साहित्य में वीर, रौद्र, तथा भयानक रसों का सर्वोच्च पद है, क्योंकि उत्कृष्ट हिंदी कविता इन्हीं रसों का अवलंब ले पृथ्वी पर अवतीर्ण हुई है। सब से प्रथम जिस प्रकृष्ट ग्रंथ के निर्मित होने का हाल हम लोगों को ज्ञात है, वह चंद कृत पृथ्वीराजरासो है और वह विशेषतया इन्हीं रसों के वर्णनों का भांडार है। जज्जल, शार्ङ्गधर आदि ने भी ऐसे ही विषयों का मान किया। मलिक मुहम्मद जायसी ने भी पद्मावत मे यत्र तत्र उपर्युक्त ग्रंथों की भाँति इन रसों का समावेश किया है। तदनंतर "चौथे पन जाइय नृप कानन" की बात स्मरण कर चौथे की कौन कहे, श्रीरामचंद्र जी की भाँति प्रायः पहले ही पन में हमारी भाषा काव्यकानन को चल दी और भगवत भजन करने लगी। अतः ऐसे रसों को छोड़ तुलसीदास, सूरदास, कबीर इत्यादि कवीश्वरों की

सहायता से इसने शांत[1] रस के बड़े ही मनोरंजक राग अलापे; परतु असमय की कोई बात चिरस्थायी नहीं होती। सो हमारे साहित्य का चित्त भी शांत रस मे न लगा। शांत रस का वास्तविक प्रादुर्भाव तो श्रृंगार के पश्चात् होता है। जब विषयों का उपभोग कर प्राणी कुछ थक सा जाता है, तभी उसके चित्त में, राजा ययाति की भाँति, उन विषयों की तृष्णा हटती है और निर्वेद का राज्य होता है। सो हमारे साहित्य ने अपना पुराना उत्साह तो छोड़ ही दिया था, अब वह निर्वेद को भी तिलांजलि दे अपना श्रृंगार करने मे पूर्णतया प्रवृत्त हो गया और हमारे कवियो ने पुण्यात्मा सरस्वती देवी को "नायिकाओ" के गुणकथन मे लगाया। इस कार्य मे उनको विषयी और उद्योगशून्य राजाओ से विशेष सहायता मिली। श्रृंगार रस के वर्णन मे उसी समय से अब तक हमारी कविता ऐसी कुछ उलझ पड़ी है कि उसका छुटकारा होना ही कठिन दिखाई देता है[2]। यहाँ तो जहाँ देखिए, पति अथवा उपपति और पत्नी का विहार, मान, दूतीत्व, पश्चात्ताप, विरह की उसासे, उपपतियों और जारों की ताक झाँक, सुरतांत के लटके, नायिकाओं के नखशिख और विशेष करके कटि, नेत्र व नितंबों के वर्णन, उलाहने, गणिकाओं का अधिक धन वसूल करने का प्रयत्न इत्यादि इत्यादि, विशेषतः यही सब हमारी कविता हमको दिखा रही थी! हमारे इस प्रबंध के नायक भूषण महाराज ऐसे ही समय मे उत्पन्न हुए थे, पर इन्हें ऐसे वर्णन पसंद न थे, अतः ये लिखते हैं—

> ब्रह्म के आनन ते निकसे ते अत्यंत पुनीत तिहूँ पुर मानी।
> राम युधिष्ठिर के बरने बलमीकि हु व्यास के संग सोहानी॥

---

१ अवश्य ही सूरदास ने श्रृंगार एवं अन्य कतिपय कवियों ने और रसों की भी कविता की है, पर प्रधानता शात रस की ही रही।

२ अब हमारी कविता श्रृंगार छोड़कर देशप्रेम में आ गई है।

भूषन यों कलि के कविराजन राजन के गुन पाय नसानी।
पुन्य चरित्र सिवा सरजा-सर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी॥

हमारे भूषण महाराज का यह भी एक बड़ा गुण है कि शृगार को ही नहीं वरन् सभी अनुपयोगी विषयों को लात मारकर इन्होने भारत-मुखोज्वलकारी महाराज शिवाजी भोंसला एवं छत्रसाल बुँदेला जैसे महापुरुषो के गुणगान मे अपनी अलौकिक कवित्व शक्ति लगाई और ऐसे उपयोगी वर्णनों की ओर लोगों को रुचि आकर्षित की, यहाँ तक कि उन्होने सिवा कतिपय छंदो के शृंगार रस के वर्णन में और कुछ न कहा। एक शृंगार छंद मे भी मानो प्रायश्चित्तार्थ, उन्होने युद्ध का ही रूपक बाँधा है (स्फुट कविता देखिए)।

हर्ष की बात है कि जैसे इन्होने शृंगार एवं अन्य अनुपयोगी विषयों को लात मारकर वीर-रौद्र तथा भयानक रसों ही को प्रधानता देकर अन्य कवियों को सदुपदेश सा दिया, वैसे ही इनका मान भी ऐसा हुआ, जैसा इनसे श्रेष्ठतर कवियो का भी कभी स्वप्न तक में न हुआ, जैसा कि दासजो के शिरोभाग मे उद्धृत छंद से प्रकट होता है। बिहारीलालजी सदैव कलियुग के दानियों की निंदा ही करते रहे ("तुम हूँ कान्ह मनो भए आजु कालिह के दानि")। परंतु उन्होंने यह न विचार किया कि उन्हींके समकालीन भूषण कवि किस प्रकार की कविता करने से किस स्थान को पहुँच गए है। अस्तु।

शिवसिंह-सरोज तथा अन्य पुस्तकों मे इन महाशय के बनाए चार ग्रंथ लिखे है—(१) शिवराज भूषण, (२) भूषण-हजारा, (३) भूषण उल्लास, और (४) दूषण उल्लास। इनमे अंतिम तीन ग्रंथों को अद्यावधि मुद्रण का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ है, और न हमने उन्हें कहीं देखा ही है। नहीं मालूम उनके रचयिता भूषण जी हैं या नहीं। एक यह भी प्रश्न है कि शिवाबावनी एवं छत्रसालदशक कोई स्वतंत्र ग्रंथ है अथवा भूषण की स्फुट कविता के संग्रह मात्र। प्रथम प्रश्न के

उठने का यह कारण है कि किसी महाशय ने भूषणजी के उक्त चार ग्रंथ होने का कोई प्रमाण नहीं दिया है। उन्होने केवल यही कह दिया है कि भूषण के ये चार ग्रंथ हैं। यदि वे लिखते कि उन्होने इन चारो ग्रंथो को देखा है अथवा उनका होना किसी स्थान विशेष पर किसी प्रामाणिक रीति पर सुना है, तो उनका कथन अधिक मान्य होता। हमारा इस विषय मे यह मत है कि यद्यपि हम नहीं कह सकते कि भूषण महाराज के कौन कौन और ग्रंथ हैं ("हजारा" का होना कालिदास त्रिवेदी ने लिखा है, और उसका नाम यों भी बहुत सुन पड़ता है) तथापि इसमे संदेह नहीं कि इन्होंने कुछ अन्य ग्रंथ निर्माण अवश्य किए होगे। इस मत की पुष्टि मे निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं—

(१) भूषणजो ने शिवाजी के सन् १६७४ वाले राज्याभिषेक के वर्णन में एक ही छंद लिखा हो, यह संभव नहीं। ऐसे प्रधान उत्सव मे कविजी अवश्य ही संमिलित हुए होगे अथवा घर से लौटने पर उसका पूर्ण वृत्तांत तो उन्होने सुना ही होगा। अवश्य ही भूषण शिवाजी को सदैव से राजा और महाराज कहते थे, पर शिवाजी भी तो ऐसा ही करते थे। सो जब उन्होंने अपना विधिवत् शास्त्रानुकूल अभिषेक बड़ी धूम धाम से करना आवश्यक समझा, तब भूषणजी उसका वर्णन करना कैसे अनुचित मानते? जान पड़ता है कि कहीं न कहीं भूषणजी ने इसका वर्णन किया ही होगा; पर जिस ग्रंथ में यह वर्णन होगा, वह अभी तक कहीं छिपा ही पड़ा हुआ प्रतीत होता है।

(२) इन महाशय ने कितनी ही अन्य सुप्रसिद्ध घटनाओं का अपने विदित ग्रंथों में समावेश नहीं किया है। सो यदि इनके अन्य ग्रंथों का प्रस्तुत होना न मानें, तो आश्चर्य्यसागर मे मग्न होना पड़ेगा। इसी प्रकार उस समय के कितने ही निकटस्थ प्रसिद्ध व्यक्तियों के नाम तक इनके विदित ग्रंथों में नहीं मिलते। भला, शिवाजी और छत्रसाल

की भेंट का हाल भूषणजी कैसे न लिखते ? अथवा तानाजी, मोरोपंत एवं गुरुवर श्रीरामदासजी तथा कविवर तुकारामजी का हाल लिखे बिना भूषणजी कैसे रहते ? शंभाजी के प्रधान कृपापात्र कुलूष[1] नामक एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे, जिन्हें औरंगजेब ने पकड़कर मरवा डाला था। भूषण भी कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। क्या वे कहीं कुलूष का नाम ही न लिखते ? शिवाजी का शील स्वभाव बनाने में उनके पालक दादाजी कोणदेव तथा उनकी माता जीजाबाई का बड़ा प्रभाव पड़ा था। क्या भूषणजी इनका कहीं नाम तक न लेते ? क्या यह संभव है कि भूषणजी ब्राह्मण होकर महात्मा रामदास के एवं कवि होकर मराठी कवियों के शिरोमणि तुकारामजी के विषय मे एक दम मौन धारण कर लेते ? भूषणजी, जैसा कि आगे लिखा जायगा, साहूजी के राजत्व काल तक अवश्य जीवित थे; परंतु इनके प्रस्तुत ग्रंथों में साहूजी के विषय मे केवल एक छंद मिलता है। इन सब बातो से स्पष्ट विदित होता है कि भूषणजी के कई ग्रंथ देखने का अभी हम लोगो को सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ है।

(३) भूषणजी दीर्घजीवी हुए है, और प्रायः १०५ वर्ष की अवस्था में उनका देहांत हुआ। पर शिवराजभूषण उन्होंने केवल छः सात साल के भीतर (सन् १६६७ से १६७३ ईसवी तक) बना डाला। उसके ६०–६५ वर्ष पीछे तक वे जीवित रहे। क्या इतने दिनो मे उन्होंने दो चार भी अन्य ग्रंथ न लिखे होगे ? यह तो विदित ही है कि अंतिम समय तक वे कविता करते रहे।

शिवाबावनी एवं छत्रसालदशक के विषय मे हमारा यह मत है कि वे स्वतंत्र ग्रंथ नहीं है, वरन् भूषणजी के अन्य ग्रंथो अथवा स्फुट कविताओं से संगृहीत हुए है।

---

१ वास्तव मे इनकी उपाधि कवि कुलेश थी, किंतु महाराष्ट्र लोग ईर्ष्यावश इनको कलुष अथवा कुलूष कहते थे।

कवि की जीवनी

भूषण महाराज कान्यकुब्ज ब्राह्मण, कश्यप गोत्री त्रिपाठी (तिवारी) थे। इनके पिता का नाम रत्नाकर था और ये त्रिविक्रमपुर (वर्तमान तिकवाँपुर) मे रहते थे। यह तिकवांपुर यमुना नदी के बाएँ किनारे पर जिला कानपुर, पर्गना व डाकखाना घाटमपुर में मौजा "अकबरपुर बीरबल" से दो मील की दूरी पर बसा है। कानपुर से जो पक्की सड़क हमीरपुर को गई है, उसके किनारे कानपुर से ३० एवं घाटमपुर से ७ मील पर 'सजेती' नामक एक ग्राम है जहाँ से तिकवाँपुर केवल दो मील रह जाता है। "अकबरपुर बीरबल" अब भी एक अच्छा मौजा है जहाँ अकबर बादशाह के सुप्रसिद्ध मंत्री और मुसाहब महाराज बीरबल उत्पन्न हुए (शायद तब इसका कुछ और नाम हो) और रहते थे (शि० भू० के छंद नं० २६ व २७ देखिए)।

सुना जाता है कि उक्त रत्नाकरजी श्रीदेवीजी के बड़े भक्त थे और उन्हीं की कृपा से इनके चार पुत्र उत्पन्न हुए—अर्थात् चिंतामणि, भूषण, मतिराम और नीलकंठ उपनाम जटाशंकर।

शिवसिंह-सरोज में भूषणजी का जन्मकाल संवत् १७३८ विक्रमी लिखा है, परंतु यह अशुद्ध है। शिवसिंहजी भूषण महाराज का शिवाजी एवं छत्रसाल के दरबारों मे रहना मानते हैं; पर शिवाजी सन् १६८० ईसवी (अर्थात् १७३६-३७ विक्रमी) में गोलोकवासी हुए थे। तो क्या भूषणजी अपने जन्म के साल डेढ़ साल पहले ही शिवाजी के यहाँ पहुँच गए? भूषणजी लिखते है कि संवत् १७३० मे उन्होंने शिवराज भूषण समाप्त किया; पर शिवसिंहजी भूषण एवं मतिराम दोनों ही का जन्म-संवत् १७३८ का लिखते हैं! कुछ लोगों का विचार है कि सरोज के "उ" से उत्पत्ति न मान कर उदय अर्थात् प्रभाव का समय मानना चाहिए। दुःख का विषय है कि भूषण के

ग्रंथों से उनके जन्मकाल का कुछ भी पता नहीं चलता, न मतिराम-कृत रसराज और ललितललाम अथवा चिंतामणि-कृत कविकुल-कल्पतरु से ही कुछ सहायता मिलती है। मतिराम और चिंतामणि-कृत (अपूर्ण) पिंगलों में भी इसका कुछ पता नहीं चलता। भूषणग्रंथावली की बंगवासीवाली प्रति की भूमिका में लिखा है कि चिंतामणिजी के ग्रंथ सन् १६२७ से १६५६ ईसवी तक बने। हम नहीं कह सकते कि इस कथन का क्या प्रमाण है; परंतु यदि यह सत्य मान लिया जाय तो चिंतामणि का जन्म सन् १६११ ईसवी के पीछे का नहीं माना जा सकता; क्योंकि १६ वर्ष की अवस्था के पहले कोई मनुष्य कदाचित् ही काव्यग्रंथ रच सके। इस हिसाब से भूषण का जन्म सन् १६१४ ईसवी के आसपास या उससे पहले का मानना पड़ेगा। हमने आगे सप्रमाण लिखा है कि भूषणजी प्रायः सन् १७४० ईसवी तक जीवित रहे। यदि बंगवासीवाली बात ठीक हो तो भूषण का एक सौ वर्ष से कुछ अधिक काल तक जीवित रहना पाया जायगा। भूषण के छोटे भाई जटाशंकर का अमरेश-विलास ग्रंथ संवत् १६९८ या सन् १६४१ में बना, ऐसा खोज में मिला है। इससे भी भूषण का जन्म-काल सन् १६१५ के लगभग बैठता है, किंतु यह निष्कर्ष संदिग्ध है क्योंकि जटाशंकर का भूषण का भाई होना अनिश्चित है।

यह बात प्रसिद्ध है कि पहले भूषणजी बिल्कुल अपढ़ और निकम्मे थे एवं चिंतामणिजी कमासुत और कुटुंब के आधार थे। भूषण सदा घर बैठे बैठे बगलें बजाया करते और बड़े भाई की कमाई से पेट भरा करते थे। एक दिन भोजन करते समय भूषण ने अपनी भावज से लवण माँगा। उसने क्रोध से कहा—"हाँ, बहुत सा नमक तुमने कमाकर रख दिया है न, जो उठा लाऊँ!" यह बात इन्हें असह्य हो गई और इन्होंने मुँह का ग्रास उगलकर कहा—"अच्छा, अब जब नमक कमा कर लावेंगे, तभी यहाँ भोजन करेंगे।" ऐसा कह भूषणजी खाली हाथ

घर से यों ही निकल पड़े और कहते हैं कि इन्होंने अपनी जिह्वा काट कर श्रीजगदंबाजी पर चढ़ा दी और ये एक दम भारी कवीश्वर हो गए। इस बीसवीं शताब्दी मे लोग शायद ऐसी बातों पर विश्वास न कर सकें, पर कम से कम जीभ का काटना संभव हो सकता है। हमने एक भाट को देखा है, जिसने इसी भाँति श्रीदेवीजी पर अपनी जिह्वा कुछ ही दिन पूर्व चढ़ाई थी। दासापुर के बलदेव कवि ने भी अपनी जिह्वा काटकर देवीजी पर चढ़ाई थी। उनकी कटी हुई जिह्वा हमने देखी है। अस्तु जो हो, इसमे संदेह नहीं कि भूषण जी ने इसी समय से विद्याध्ययन मे बहुत चित्त लगाया और वे थोड़े ही दिनो में कविता करने लगे।

इसके बाद वे चित्रकूटाधिपति हृदयराम के पुत्र रुद्रराम सोलंकी के आश्रय मे कुछ दिन रहे। इनकी कवित्व शक्ति से प्रसन्न हो रुद्रराम ने इन्हें सन् १६६६ के लगभग "कविभूषण" की उपाधि दी और तभी से ये भूषण कहलाने लगे, यहाँ तक कि इनके मुख्य नाम का अब पता भी नहीं लगता (शि० भू० छंद २८ देखिए)। जान पड़ता है कि पहले भी ये अपना उपनाम भूषण रखते थे और यही इन्हें उपाधि भी मिली। रुद्रराम सोलंकी का पता तो इतिहासों मे नहीं लगता, किंतु इनके पिता हृदयराम का लगता है। आप गहोरा के राजा थे और आप के राज्य मे १०४३३ ग्राम थे एवं बीस लाख वार्षिक आय थी। गहोरा चित्रकूट से तेरह मील पर है। चित्रकूट पर भी आप का राज्य समझ पड़ता है। करवी का उसमें संमिलित होना लिखा ही है और वह चित्रकूट से तीन ही मील पर है। सन् १६७१ के लगभग महाराज छत्रसाल ने शेष बुंदेलखंड के साथ इस राज्य पर भी अधिकार कर लिया। सन् १७३१ के लगभग महाराज छत्रसाल के राज्य का बटवारा हुआ। उक्त बातें मध्य भारत, बाँदा, हमीरपुर, रीवाँ तथा पन्ना के गजेटियरों से विदित होती हैं। मुंशी श्यामलाल के इतिहास से विदित

होता है कि उपर्युक्त बटवारे मे गहोरा का राज्य महाराज छत्रसाल के बड़े बेटे हृदयशाह के भाग मे पडा था। सोलंकियो का राज्य एक बार छूटकर गहोरा पर फिर न हुआ। गहोरा के सोलंकियो को सुरकी कहते थे। अब जिला बाँदा मे प्राय एक सहस्र सुरकी ठाकुर है।

यहाँ से भूषणजी महाराज शिवाजी के दरबार मे गए। यह वह समय था जब शिवाजी दक्षिण के अनेक दुर्ग जीतकर रायगढ़ मे राजधानी नियत कर चुके थे (शि० भू० छद १४ देखिए) अर्थात् सन् १६६२ ईसवी के पश्चात्। इस समय भूषणजी प्राय २७ वर्ष के थे। इससे जान पडता है कि इधर उधर बहुत न रहकर आप शिवाजी के यहाँ गए थे। अनुमान होता है कि भूषणजी महाराज शिवाजी के यहाँ उस समय के कुछ ही पीछे पहुँचे थे, जब वे आगरे से निकल आए थे और छत्रसाल बुँदेला से मिल चुके थे अर्थात् सन् १६६७ ईसवी के अत मे। निम्नलिखित विचारो से इस अनुमान की पुष्टि होती है—

(१) शिवाजी के यहाँ पहुँचने पर भूषणजी उनका वर्तमान निवासस्थान रायगढ बतलाते है और सिवाय उसके और कहीं शिवाजी का रहना नहीं लिखते। शिवाजी सन् १६६२ ईसवी मे रायगढ आए थे, अत भूषणजी उनके दरबार मे सन् १६६२ के पश्चात् पहुँचे होगे (शि० भू० छद १४ व १६)।

(२) शिवाजी सन् १६६६ मे आगरे गए थे और वहाँ से लौटकर घर तक पहुँचने मे उन्हे नौ मास लगे थे। अत यदि इस समय के पहले भूषणजी शिवाजी के यहाँ पहुँचे होते, तो इन नौ मासो के बीच मे हतोत्साह होकर वे घर लौट आते। उन्होने सन् १६७३ ईसवी मे शिवराजभूषण समाप्त किया, और जान पडता है कि सन् १६६७ ईसवी मे ही उसका निर्माण प्रारभ कर दिया था, क्योकि ग्र थारभ ही मे तीन बडे प्रभावशाली छदो मे शिवाजी के दिल्लीश्वर से साक्षात्कार का वर्णन है (छद नबर ३४, ३५ व ३८ देखिए)। यदि भूषणजी सन्

१६६६ के पहले शिवाजी के यहाँ पहुँचे होते और हतोत्साह होकर लौट आते, तो इतने शीघ्र, एक ही साल के भीतर, उस समय के भयावने मार्ग का इतना लंबा सफर करके अपने घर से फिर महाराष्ट्र देश तक न पहुँच सकते। इससे विदित होता है कि शिवाजी के आगरे से लौटने के पश्चात् भूषण उनके दरबार मे हाजिर हुए (अर्थात् प्रायः सन् १६६७ मे)।

(३) यदि भूषणजी सन् १६६७ के बीच तक शिवाजी के यहाँ पहुँच गए होते, जब कि छत्रसाल बुँदेला ने शिवाजी से भेंट की थी (लालकृत छत्रप्रकाश देखिए), तो वे इस भेंट का हाल शिवराजभूषण मे ही कहीं न कहीं अवश्य लिखते। इससे जान पड़ता है कि १६६७ ईसवी के अंत मे भूषणजी शिवाजी के यहाँ पहुँचे होंगे।

भूषणजी के जन्म से लेकर रुद्रराम सोलंकी के यहाँ जाने तक मे तो कोई दो मत नहीं है, पर यहाँ से कतिपय लोग इनका दिल्लीश्वर औरंगजेब के यहाँ जाना बतलाते हैं और बादशाह से लड़ाई झगड़े की बातें करके इनका शिवाजी के यहाँ जाना मानते हैं; पर ये बाते अग्राह्य सी है। चिटणीस की बखर मे लिखा है कि चिंतामणि के भाई भूषण कवि शिवाजी के दरबार मे जाकर और वहाँ कुछ काल तक रहकर शिवाजी की प्रशंसा के बहुत से छंद रचकर अपने घर वापस गए। अनंतर वे दिल्ली मे औरंगजेब के दरबार मे पहुँचे। वहाँ जो घटनाएँ घटीं, उनके विषय मे बखर-कार यो लिखता है—"भूषणजी ने औरंगजेब से यह कहा कि मेरे भाई (चिंतामणिजी) की शृंगार रस की कविता सुनकर आपका हाथ ठौर कुठौर पड़ता होगा; पर मेरा वीर काव्य सुनकर वह मोछों पर पड़ेगा। सो पहले पानी से धोकर हाथ शुद्ध कर लीजिए"। इस पर बादशाह ने कहा कि यदि हाथ मूँछ पर न गया, तो तुम्हें मृत्यु दंड मिलेगा। इतना कहकर हाथ धोकर वह छंद सुनने लगा। भूषण ने भी वीर रस के ऐसे ऐसे बढ़िया छंद शिवाजी की प्रशंसा

के पढ़े कि उनमे शत्रुयश का गान होते हुए भी औरंगजेब का हाथ मूँछ पर गया। यह हाल महाराज शिवाजी को सुन पड़ा। तब उन्होंने भूषण को फिर अपने दरबार में बुलाया और वे वहाँ पधारे। यह कथा कुछ आश्चर्यमयी अवश्य है किंतु असंभव नहीं। मुगल दरबार मे हिंदी कवि भी मान पाते थे। कालिदास त्रिपाठी ने औरंगजेब के दरबार मे जाकर उसकी प्रशंसा के छंद बनाए थे, जिनमे से एक 'मिश्र-बंधुविनोद' मे भी लिखा है। बखर के उक्त कथन से सिद्ध है कि भूषण शिवाजी के यहाँ जाकर पीछे से औरंगजेब के यहाँ गए थे। एक भँडौवा भी सुना गया है जो यों है—

तिमिरलग लइ मोल रही बाबर के हलके।
चली हुमाऊ संग गई अकबर के दल के॥
जहाँगीर जस लियो पीठि को भार हटायो।
शाहजहाँ करि न्याव ताहि पुनि माँड़ चटायो॥
बलरहित भई पौरुष थक्यो दुरी फिरत बन स्यार डर।
औरगजेब करिनी सोई लै दीन्ही कबिराज कर॥

इस भँडौवा मे किसी कवि का नाम नहीं और न यही ध्यान में आता है कि इतना बड़ा बादशाह किसी कवि को ऐसी बुड्ढी हस्तिनी देता। संभव है कि किसी उर्दू या फारसी के कवि को बादशाह ने कोई हस्तिनी दी हो, क्योंकि कवि यह नहीं कहता कि स्वयं उसी ने वह करिणी पाई; अथवा यह भी संभव है कि औरंगजेब की कट्टरता से नाराज होकर किसी ने उसका उपहास करने को यों भी भँडौवा बना डाला हो। अस्तु।

शिवाजी की राजधानी मे पहुँचकर भूषणजी संध्या को एक देवा-लय में ठहरे। कुछ रात बीते महाराज शिवाजी भी अकेले ही वहाँ पूजनार्थ पहुँचे। भूषण से उन्होने पूछा और हाल जानकर कहा कि शिवराज के दरबार मे पहुँचने के पूर्व हमें भी कोई छंद सुनाइए। भूषण

ने बड़ी कड़क से शि० भू० का छं० नं० ५६ पढ़ा। शिवाजी ने उनकी प्रशंसा कर उस छंद को फिर सुनना चाहा और भूषण ने कह सुनाया। इसी भाँति १८[1] बार इसी छंद को पढ़कर भूषणजी थक गए और १९ वीं बार आगंतुक (शिवाजी) की पुनः प्रार्थना पर भी न पढ़ सके। तब शिवाजी ने अपना नाम बतलाकर कहा कि हमने प्रतिज्ञा की थी कि जितनी बार आप यह छंद पढ़ेंगे उतने लक्ष मुद्रा, उतने हाथी और उतने ही ग्राम हम आपको देंगे। अधिक मिलना आपके भाग्य मे न था। भूषणजी ने उतने ही पर पूर्ण संतोष प्रकट कर कहा कि अब विशेष मुझे क्या चाहिए[2]? निदान इसी समय से शिवाजी के यहाँ जा वे राजकवि बने। इसी समय (१६६७ ईसवी के अंत) से ये महाशय धीरे धीरे सन् १६७३ ईसवी (संवत् १७३०) तक "शिवराज भूषण" ग्रंथ के छंद अलंकारों के हिसाब पर बनाते रहे (इस विषय पर शिवराज भूषण संबंधी भूमिकांश देखिए)।

सन् १६७४ या ७५ ईसवी के आसपास भूषणजी कुछ दिनों के लिये अपने घर लौटे और रास्ते मे छत्रसाल बुँदेला के यहाँ पहुँचे। उन्होंने संभवतः छत्रसाल-दशक के दो प्रारंभिक दोहे एवं छंद नं० ३ इस अवसर पर पढ़े और बड़े संमान के साथ वे कुछ दिन वहीं रहे। चलते

---

१ कोई कोई कहते हैं कि १८ नहीं ५२ बार भूषण ने ५२ भिन्न भिन्न छंद पढ़े और वे ही छंद शिवाबावनी के नाम से प्रसिद्ध हुए, पर यह नितांत अशुद्ध है (शिवाबावनी सबधी भूमिकाश देखिए)। कुछ लोग यह भी कहते है कि एक ही छंद ५२ बार पढ़ा गया; पर १८ बार ही पढ़ा जाना अधिक मान्य प्रतीत होता है। शिवाजी का दान निम्नलिखित छदों में वर्णित है जो उपर्युक्त बड़े दान की सत्यता सिद्ध करते है, यथा शि० भू० छंद १४०, १७१, १७५, २१५, ३२६, २२१, २८०, २८३, ३३६, ३४०, इत्यादि इत्यादि।

२ सं० १७६० के लोकनाथ कवि भूषण को ५२ हाथी मात्र मिलना लिखते हैं। इससे ग्रामों तथा १८ लाख की कथा संदिग्ध है। प्रचुर धन मात्र ठीक है।

समय छत्रसालजी ने भूषण के शिवाजी कृत संमान का ध्यान कर उनकी पालकी का डंडा स्वयं अपने कंधे पर रख लिया। तब तो भूषण-जी अत्यंत प्रसन्न हो चट पालकी से कूद पड़े और "बस महाराज! बस" कहते हुए दशक के संभवतः छंद नं० ४ व ५ एव दो चार अन्य कवित्त, जो अप्राप्य हैं, तत्काल पढ़े होंगे। छंद नं० ३ मे उन्होने छत्रसाल जी को "लाल छितिपाल" क्या ही ठीक कहा है, क्योकि उन महाराज की अवस्था उस समय केवल २४, २५ साल की थी। वैसे ही छंद नं० ४ व ५ में भी किसी घटना विशेष की बात न कहकर यों ही छत्रसालजी की प्रशंसा की गई है। छत्रसाल ने तब तक कोई ऐसी बड़ी लड़ाई नहीं जीती थी जो सलहेरि परनालो इत्यादि युद्धों के द्रष्टा और वर्णनकर्ता भूषणजी की निगाह मे जॅचती। बुॅदेला महाराज की उस समय भूषणजी ने छत्रसाल हाड़ा (महाराज बूॅदी) से तुलना करके भी मानो प्रशंसा ही की है; क्योकि तब तक वास्तव मे वे ५२ युद्धों में संमिलित रहने और लड़नेवाले वीरवर हाड़ा महाराज के बराबर कदापि न थे, यद्यपि आगे चलकर बूॅदीनरेश से बहुत अधिक बढ़ गए।

कुछ दिन अपने घर रहकर भूषणजी ने कमाऊँ महाराज के यहाँ जाकर स्फुट छंद नं० ६ पढ़ा। महाराज ने समझा कि भूषणजी के संमान की जो बातें शिवाजी के संबंध मे उन्होने सुनीं, वे शायद ठीक न होंगी। सो वे कविजी की वैसी खातिर बात किए बिना ही उन्हें एक लक्ष रुपए का दान देने लगे। तब भूषणजी ने कहा कि अब रुपए की चाह नहीं; हम तो केवल यह देखने आए थे कि महाराज शिवराज का यश यहाँ तक पहुॅचा है या नहीं। यह कह भूषणजी रुपया लिए बिना घर लौट आए। जान पड़ता है कि इसी प्रकार भूषणजी छत्रसाल-जी के यहाँ भी गए थे; पर अभूतपूर्व संमान से मुग्ध हो उन्हें शिवाजी के जीते जी भी छत्रसाल को अपनी सरकार मानना ही पड़ा।

थोड़े दिनों बाद ये महाराज शिवाजी के यहाँ फिर गए और समय

समय पर उनके कवित्त बनाते रहे जिनमें शिवाबावनी के छंद भी हैं। संभव है कि इन दिनो इन्होने शिवाजी पर दो एक और ग्रंथ भी बना डाले हों जिनका अब पता नहीं चलता। सन् १६८० ईसवी मे शिवाजी के स्वर्गवासी होने पर कदाचित् छत्रसालजी के यहाँ होते हुए ये फिर घर लौट आए और उक्त छत्रसालजी के यहाँ आते जाते रहे। सन् १७०७ ई० मे जब साहूजी ने दिल्लीश्वर की कैद से छूटकर अपना राज्य पाया, तब भूषणजी अवश्य ही उनके यहाँ गए होंगे और सदा की भाँति संमानित हुए होंगे। साल डेढ़ साल वहाँ रहकर भूषणजी फिर घर लौट आए और आनंद से रहने लगे होंगे।

जान पड़ता है कि सन् १७१० ई० के निकट अपने अनुज मतिरामजी के कहने से ये महाशय बूँदीनरेश राव बुद्धसिह के दरबार मे गए और उनके वृद्ध प्रपितामह सुप्रसिद्ध महाराज छत्रसाल हाड़ा के दो छंद (छ० सा० दशक, छंद १ व २) और स्वयं राव बुद्ध का एक कवित्त (स्फुट नंबर ३) पढ़ा। अवश्य ही जैसी खातिर बात बूँदी मे मतिरामजी की होती थी, उससे कुछ विशेष भूषणजी की हुई होगी। पर भूषण महाराज का चित्त तो बढ़ा हुआ था। उन्हें वह खातिर कुछ जँची नहीं और वे असंतुष्ट रहे। यों तो भूषणजी वहीं कुछ कहे बिना न रहते (जैसा कि कमाऊँ मे किया था), पर मतिरामजी की हानि के विचार से कुछ न बोले होंगे और महेवा या पन्ना होकर छत्रसाल से मिलते हुए घर लौटे होंगे। इसी मौके पर "और राव राजा एक मन मैं न ल्याऊँ अब साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को" वाला छंद (छ० सा० दशक नं० १०) बना होगा। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि सन् १७०७ ईसवी मे जाजऊ का समर जीतने पर औरंगजेब के पुत्र बहादुर शाह बादशाह ने राव बुद्ध को "राव राजा" की उपाधि दी थी, सो भूषणजी के उपर्युक्त कवित्त में "राव राजा" शब्दों से राव बुद्ध का साफ इशारा है, एवं कहने को ये शब्द किसी राव या राजा पर घटित

किए जा सकते हैं। राव बुद्ध सन् १७०६ ई० के लगभग गद्दी पर बैठे थे।

जान पड़ता है कि मतिराम जी अपना संमान बढ़ाने के लिये ही भूषण जैसे राजसंमानित एवं जगत् प्रसिद्ध कवि को अपनी सरकार मे हठ करके ले गए होंगे; नहीं तो प्राय: ७१ वर्ष की अवस्था में उस समय की तीन चार सौ मील की दुर्गम यात्रा करके भूषण जी बूँदी जाने का श्रम कदापि न उठाते। संभव है कि राव बुद्ध ही कारणवश इस ओर आए हों और तब भेंट हुई हो। यह इस बात का भी प्रमाण है कि मतिराम अवश्य भूषण जी के भाई थे। राव बुद्ध हिंदी के रसिक थे, क्योकि मतिरामजी इनके दरबार मे रहते ही थे और इनके प्रपितामह के अग्रज राव भाऊसिंह के यहाँ रहकर 'ललितललाम' बना चुके थे, एवं आगे चलकर कवींद्रजी ने भी राव बुद्ध की प्रशंसा मे कई कवित्त कहे है। तो भी भूषणजी राव बुद्ध की खातिर बात से बिलकुल अप्रसन्न रहे, यहाँ तक कि इसके पश्चात् उन्होने साफ कह दिया कि अब कोई रावराजा मन मे भी न लाऊँगा। इससे स्पष्ट विदित होता है कि छत्रसाल बुँदेला ने लड़कपन के जोश मे इनकी पालकी का डंडा अवश्य कंधे पर रख लिया होगा, क्योकि ये शिवाजी द्वारा भी संमानित थे और छत्रसाल शिवाजी को बहुत ही पूज्य दृष्टि से देखते थे, जैसा कि लालकृत "छत्रप्रकाश" से विदित होता है। इसी छंद मे इन्होंने छत्रसाल के पहले साहू को सराहने की प्रतिज्ञा की है, सो भी ऐसे समय मे जब ये स्वयं छत्रसाल के यहाँ विद्यमान थे। इससे स्पष्ट है कि साहूजी ने भी इनका पूरा संमान किया होगा। लगभग सन् १७१५ ई० मे एक बार भूषणजी फिर साहूजी के दरबार में गए होंगे। इसी समय स्फुट छंद नंबर ७ बनाया गया होगा। यह छंद उस समय का है कि जब साहूजी का राज्य भली भाँति स्थापित हो चुका था और उन्होने उत्तर का धावा किया था। यह छंद मुद्रित प्रतियों में भी छपा है।

भूषणजी की कविता अथवा किसी अन्य प्रसंग से उनके सन् १७४०

के पीछे जीवित रहने का कोई प्रमाण नहीं मिलता। उनके छंदो मे इस समय तक के महापुरुषों के कथन है। अब हम यही समझते हैं कि भूषणजी सन् १७४० ई० के लगभग १०५ वर्ष की अवस्था मे स्वर्गवासी हुए होगे। इधर साहित्यप्रेमियो ने भूषणजी के विषय मे नवीन ढूढ़ खोज की और हमने भी बहुत कुछ नवीन ऐतिहासिक सामग्री एकत्र की। भूषणजी ने उन दाराशिकोह के विभव का पूर्ण वर्णन किया है जिन्हें सन् १६५८ या १६५९ में औरंगजेब ने मरवा डाला था। इससे सन् १६५७ के लगभग इनके रचनाकाल का आरंभ समझ पड़ेगा। मिर्जा राजा जयसिह और उनके पुत्र महाराज रामसिह की प्रशंसा में भी इनके छंद मिले हैं। जयसिंह सन् १६२३ में आमेर (जयपुर) की गद्दी पर बैठे थे और रामसिंह सन् १६६७ मे। महाराज अवधूतसिंह सन् १७०० से १७५५ तक रीवाँ के नरेश रहे। ये केवल छः मास की अवस्था मे गद्दी पर बैठे थे। इनकी प्रशंसा का भूषण-कृत एक बहुत बढ़िया छंद स्फुट कविता में लिखा है। यह सन् १७१५ के लगभग बना होगा। असोथर के महाराज भगवंतराय खीची सन् १७४० में मरे। उनकी मृत्यु पर शोक प्रकट करनेवाला स्फुट छंद नम्बर ८ भूषण-कृत कहा जाता है।

यद्यपि इस छंद की शैली कुछ कुछ तो भूषण की कविता से मिलती जुलती है, तथापि ऐसे प्रभावपूर्ण थोड़े बहुत छंद कई अन्य हिंदी कवियों ने भी बनाए है। इस छंद को भूषण विषयक वाद मे एक महाशय ने लिखा था, जिसमें पहले जसवंतराय का नाम लिखा था और पीछे भगवंतराय का बतलाया गया। छंद मध्य देश के किसी राजा का कथन करता है, किंतु भगवंतराय युक्तप्रांत के निवासी थे। आर्य्य काल में युक्त प्रांत भी मध्य देश कहलाता था। छंद मुक्तक मात्र है और किसी प्रामाणिक रीति से इसका भूषण-कृत होना सिद्ध नहीं किया गया है। यही छंद कुछ लोग 'भूधर' कवि का रचा बतलाते हैं।

भूधर भगवंतराय के आश्रित भी थे। कुल बातों पर विचार करके भूषण का मृत्यु-काल सन् १७४० के लगभग बैठता है। सन् १६४६ में उत्पन्न होनेवाले छत्रसाल को आप लाल छितिपाल अर्थात् लड़के कहते हैं, इससे तथा अन्य विचारो से हमने इनका जन्म-काल सन् १६३५ के इधर उधर माना है। खेद का विषय है कि भूषणजी के घरेलू चरित्रों से हम नितांत अनभिज्ञ हैं। इनके विवाह अथवा पुत्रों, पुत्रियों एवं मित्रों के विषय में हम कुछ भी नहीं कह सकते। केवल इतना कह सकते हैं कि इनका विवाह अवश्य हुआ था और ये पुत्रवान् भी थे; क्योंकि सुना जाता है कि प्रसिद्ध दोहाकार वृंद कवि एवं सीतल कबि इन्हीं के वंशधर थे; और तिकवाँपुर मे जाँच करने से विदित हुआ कि जिला फतेहपुर एवं कहीं मध्य प्रदेश मे भूषणजी के वंशज अब भी वर्तमान है। इसका ठीक पता कुछ भी नहीं है। नाती को हाथी दयो जापै ढुरकति ढाल। साहू के जस कलस पै ध्वज बाँधी छतसाल॥ इस छंद मे भूषण ने अपने नाती के मान का कथन किया है। भूषण महाराज धनसंपन्न थे और बड़े आदमियों की भाँति रहते थे। देश भर मे और राजा महाराजो के यहाँ इनका सदैव बड़ा मान रहा। इनकी कविता से इतना और भी ज्ञात होता है कि इन्होने देशाटन बहुत किया था, क्योकि इनके छंदों में सैकड़ों स्थानों एवं तत्कालीन ऐतिहासिक मनुष्यों के नाम आए हैं।

प्राचीन ग्रंथों मे भूषण के वंश का कुछ वर्णन मिलता है। वंश-भास्कर सन् १८४० का ग्रंथ है जिसमे लिखा है कि 'जेठो भ्राता भूषनरु मध्य मतिराम तीजो चितामनि विदित भये ये कविता प्रवीन'। मनो-हरप्रकाश सन् १८९५ का ग्रंथ है जो चितामणि, भूषण, मतिराम और जटाशंकर को इसी क्रम से भाई मानता है। यही मत शिवसिह-सरोज का भी है जो इससे १८ वर्ष पुराना ग्रंथ है। मतिराम के वंशधर बिहारीलाल ने संवत् १८७२ में रस-चंद्रिका नाम्नी एक टीका की पुस्तक

लिखी। उसमें आपने लिखा है कि मेरे पिता का नाम जगन्नाथ, पितामह का सीतल तथा प्रपितामह का मतिराम था। आप अपने को कश्यप गोत्री कान्यकुब्ज तिवारी कहते हैं और यह भी लिखते है कि भूषण, चिंतामणि तथा मतिराम को नृप हमीर ने संमान से जमुना किनारे त्रिविक्रमपुर मे बसाया था। इन्ही बिहारीलाल के समकालीन नवीन कवि भी इन्हें मतिराम का बंशधर मानते हैं। पंडित मयाशंकर जी याज्ञिक ने चिंतामणि-कृत रामाश्वमेध ग्रंथ मे यह देखा है कि चिंतामणि अपने को कान्यकुब्ज, कश्यपगोत्री, मनोह के तिवारी कहते है। बिलग्राम के विद्वान् गुलाम अली ने सन् १७५२ मे 'तजकिरा-सर्व-आजाद-हिंद' ग्रंथ लिखा। उसमे आप लिखते है कि चिंतामणि के भाई मतिराम और भूषण थे। सन् १७०३ के लोकनाथ कवि ने लिखा है कि शिवाजी ने भूषण को ५२ हाथी देकर संमानित किया। सन् १७३४ के दास कवि ने लिखा है कि भूषण ने कविता से प्रचुर संपत्ति कमाई। इन बातो से भूषण संबंधी कई घटनाएँ दृढ़ता के साथ ज्ञात होती है।

एक महाशय ने किसी वत्स गोत्री तिवारी मतिराम की बनाई हुई वृत्त कौमुदी का कथन किया है। इन मतिराम का निवासस्थान बनपुर था और इनके पिता विश्वनाथ थे। पहले तो इस ग्रंथ का अस्तित्व ही संदिग्ध है, क्योंकि जिन्होने इसका कथन किया है, वे कहते हैं कि अब यह मिल नहीं रहा है। यदि इसका अस्तित्व मानें भी तो इसके रचयिता वत्स गोत्री मतिराम थे जो कश्यप गोत्री हमारे मतिराम से भिन्न ही थे। अतएव वृत्त-कौमुदी के कथनों से भूषण और मतिराम के भ्रातृत्व मे कोई संदेह नहीं पड़ता। सूर्यमल्ल बूँदी दरबार के कवि थे। उनके सन् १८४० के ग्रंथ वंशभास्कर में लिखा है कि मतिराम को बूँदी दरबार से समस्त वस्त्र, आभूषण, चार हजार रुपए, ३२ हाथी तथा रिड़ी और चिड़ी नामक दो ग्राम मिले थे। इतना पाने पर भी भूषण के आगे मतिराम का संपत्तिशाली कवियों मे कुछ भी बखान नहीं हुआ। इससे

भी जान पड़ता है कि भूषण ने कविता से मतिराम की अपेक्षा बहुत ही अधिक संपत्ति कमाई थी। इन महाकवि की कविता से प्रकट होता है कि ये बड़े ही सत्यप्रिय और यथार्थ-भाषी थे, यहाँ तक कि इन्होंने शिवाजी की पराजय का भी वर्णन किसी न किसी रीति से कर ही दिया; और जहाँ शिवाजी ने कोई बेजा काम किया है, उसे भी कह दिया (देखिए शि० भू० छंद नं० ७५, २१२, २१३, २७२)। भूषणजी को हिंदू जातीयता का सदैव पूरा विचार रहता था। ये बड़े ही प्रभावशाली कवि हो गए हैं और इनका जैसा संमान अथवा धन किसी कवि ने कविता से अद्यापि उपार्जित नहीं किया।

भूषणजी के प्रस्तुत ग्रंथो मे शिवराजभूषण, श्रीशिवाबावनी, छत्रसालदशक तथा स्फुट कवित्त इस ग्रंथ मे दिए गए है। इनके ग्रंथो से उस समय के राजाओं एवं मुगल साम्राज्य की भी दशा विदित होती है। अतः सब से प्रथम हम भूषण की प्रस्तुत कविता से उस समय का जो कुछ हाल ज्ञात होता है, वह लिखते है। हर्ष का विषय है कि भूषणजी का वर्णन इतिहास के विरुद्ध नहीं है, क्योंकि इन्हें इतिहास विरुद्ध बनाकर बातें लिखना पसंद न था। इनका लिखा हुआ हाल इतिहास से अधिक विस्तृत अवश्य है, क्योंकि कवि जितने विस्तार और समारोह के साथ कोई घटना लिखता है, वैसा इतिहासकार प्रायः नही करता। इसमे केवल सन् संवत् का ब्योरा और घटनाओं का क्रम हम अपनी ओर से लिखते है, शेष सब भूषण के छंदों से लिखा जाता है। इनके लिखे अनुसार उस समय का इतिहास यों है।

सूर्य बंश पृथ्वी पर विख्यात है जिसमे परमेश्वर ने बार बार अवतार लिया। इसी बंश मे एक बड़ा प्रतापी राजा हुआ जिसने अपना सिर शंकरजी पर चढ़ाकर अपने और स्ववंशजों के लिये सीसोदिया (हिंदूपति महाराणा उदयपुर एवं नैपाल के राजा इसी उज्ज्वल बंश के है) की उपाधि

प्राप्त की[1]। उसी वंश मे एक बड़ा पराक्रमी पुरुष माल मकरंद हुआ जिसके पुत्र राजा शाहजी भौसला हुए। शाहजी बड़े दानी और बहादुर थे और उन्हीं के पुत्र महाराज शिवराज छत्रपति (शिवाजी) हुए जो भवानी और श्रीशंकरजी के बड़े भक्त थे और जिन्हें शव कथाओं के सुनने से बड़ा प्रेम था। वे बड़े ही उदार दानी थे एवं उनके साहस की कोई सीमा ही न थी। उस समय दक्षिण मे आदिलशाही, कुतुबशाही, निजामशाही, इमादशाही और बारीदशाही नामक पाँच[2] राजघराने

---

१ वास्तव मे सिसोदावासी होने से ये लोग सीसोदिया कहलाते थे।

२ ये पाँचो राजघराने दक्षिण की बहमनी राज्य के टूटने पर बने थे। बहमनी राज्य सन् १३४७ ईसवी मे स्थापित हुआ था और १५२५ तक रहा। यह राज्य प्रायः वर्तमान हैदराबाद रियासत पर विस्तृत था। बीजापुर सन् १४८६ में स्थापित हुआ और औरगजेब ने इसे १६८६ मे छीन लिया। गोलकुडा सन् १५१२ ई० मे स्थापित हुआ और इसे भी औरंगजेब ने सन् १६८८ मे जीत लिया। अहमदनगर का राज्य सन् १४६० में स्थापित हुआ और १६३६ ई० में इसे शाहजहाँ ने जीत लिया। एलिचपुर सन् १४८४ में स्थापित हुआ और १६५२ ई० मे मुगल राज्य मे मिला लिया गया। बिदर राज्य १४६८ मे स्थापित हुआ और १६५७ में इसे औरंगजेब ने जीत लिया। इन सब मे बीजापुर और गोलकुंडा प्रधान थे। शिवाजी के पिता शाहजी पहले निजामशाही बादशाहो के यहाँ एक प्रधान कारबारी थे और शाहजहाँ से उन्होंने घोर युद्ध किया था और क्रमशः कई बादशाहों को तख्त पर बैठाकर अपने ही बाहु और बुद्धिबल से शाहजहाँ को हैरान कर रक्खा था। तभी तो भूषणजी ने उन्हे 'साहिनिजामसखा' (शिव० भू० छंद न० ७) और "साहिन को सरन सिपाहिन को तकिया" (छंद नं० १०) कहा है। इसके बाद ये बीजापुर में नौकर हो गए और तंजौर के निकटस्थ राज्य में अपनी मृत्यु पर्यंत गवर्नरी (शासन) करते रहे। पीछे इनके द्वितीय पुत्र बेंकोजी तंजौर के स्वतंत्र

शाह कहलाते थे, जिनके राजस्थान यथाक्रम बीजापुर, गोलकुडा, अहमदनगर, एलिचपुर और बिदर थे। उत्तर मे मुगलो का सुविशाल साम्राज्य था। उस समय श्रीनगर, नैपाल, मेवार, ढुढार, मारवाड, बुँदेलखड, झारखड और पूर्व पश्चिम सब देशो के राजे अर्थात् राना, हाड़ा, राठौर, कछवाहे, गौर इत्यादि सब मुगलो से दबते और उनकी प्रजा के समान थे। वे राज्य तो अवश्य करते थे, परतु अपनी स्वतन्त्रता खो बैठे थे।

ऐसे भयावने समय मे शिवाजी ने मुसलमानो का सामना करने का साहस किया। उनकी उच्च अभिलाषा चक्रवर्ती राज्य स्थापित करने की थी। इस परिश्रम का यह फल हुआ कि उन्होने बाल्यावस्था ही मे बीजापुर तथा गोलकुडा को जीतकर युवावस्था मे दिल्लीपति को पराजित किया और उनके राज्य का प्रजा तथा हिंदू समाज पर यह प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा कि वेद पुराणो की चर्चा एव द्विजदेवो की अर्चा की प्रथा फिर लोक मे फैल गई। शिवाजी ने पहले बीजापुर के बादशाह से लडना आरभ किया। सन् १६५५ मे उन्होने चद्रावल (चद्रराव मोरे) को मारकर जावली जब्त कर ली। फिर ये और छोटे छोटे दुर्ग लेते रहे। सन् १६५७ मे शिवाजी ने अहमदनगर पर मुगलो के सरदार नौशेरीखाँ तथा कारतलब खॉ से युद्ध किया। सन् १६५८ मे औरगजेब अपने भाई दारा एव मुराद को मरवा, शाह शुजा को अराकान भगा और अपने पिता शाहजहॉ को कारागार मे डालकर राज्य करने लगा। सन् १६५९ मे आदिल शाह ने शिवाजी से लडने को एक बड़ी सेना के साथ अफजल खॉ को भेजा। इस पर सधि की बातचीत चली और

राजा हो गए थे। उनके वशधरो से यह राज्य उन्नीसवी शताब्दी मे अगरेजों ने छीन लिया। लार्ड डलहौजी ने तंजौर के राजा की पोलिटिकल पेशन भी बद कर दी।

यह स्थिर हुआ कि शिवाजी अफजल खाँ से अकेले मे मिले। इस अवसर पर अफजल ने दगा करके शिवाजी पर कटार का वार किया। शिवाजी पहले ही से खाँ को मारना चाहते थे, सो उन्होंने खाँ की पसली लोहे के बने हुए शेर के पंजे से नोच ली और फिर गड़बड़ मे खड्ग से उसे तथा उसके शरीररक्षक सैयद बंदा को मार डाला। फिर आपने उसकी सब सेना को भी परास्त किया। यह सुनकर उसी सन् में औरंगजेब ने रुस्तमेजमाँ को भेजा, परंतु इनसे उसे भी पराजित होना पड़ा। सन् १६६१ मे इन्होंने शृंगारपुर को जीत लिया। १६६२ मे (अपने पिता शाहजी की संमति से) इन्होंने रायगढ़[1] को अपना निवासस्थान स्थिर किया और राजगढ़ को छोड़ दिया। इस समय ये दक्षिण के सब क़िले जीत चुके थे। शिवाजी की सभा बहुत ही अच्छी और दुर्ग बड़ा ऊँचा तथा दृढ़ था। आपने बहुत से दुर्ग बनवाए और अपना राज्य अनेकानेक विजयों द्वारा बहुत बढ़ाया।

---

१ भूषणजी ने रायगढ का ही हाल लिखा है, परतु उसका नाम राजगढ लिखा है। शिवाजी सन् १६४७ से १६६२ तक राजगढ मे रहे थे और १६६२ ई० से मरण पर्यंत (१६८०) रायगढ़ में। भूषणजी ने लिखा है कि शिवाजी ने दक्षिण के सब दुर्ग जीतकर राजगढ में वास किया (शि० भू० छद न० १४)। फिर शिवराज भूषण ग्रथ में राजगढ का वास वर्तमान काल में वर्णित है। यह ग्रथ सन् १६६७ या १६६८ मे प्रारंभ और सन् १६७३ में समाप्त हुआ था, जब शिवाजी राजगढ़ मे न थे। इसीसे विदित है कि "राजगढ" लिखने से भूषण का रायगढ का प्रयोजन था, नहीं तो उनका राजगढ संबंधी समस्त वर्णन अशुद्ध हो जाता है। अतः यही मानना चाहिए कि य और ज मे भेद न मानकर भूषण ने रायगढ़ को राजगढ़ लिखा है अथवा लेखकों के भ्रम से उनका वास्तविक शब्द रायगढ़ राजगढ हो गया। दूसरा अनुमान ही ठीक जॅचता है। इसीलिए हमने मूल मे शुद्ध शब्द का प्रयोग किया है।

सन् १६६३ मे मुगलों ने इनका बल बहुत बढ़ता देखकर जोधपुर के महाराज जसवंतसिंह और शाइस्ता खाँ को इनके विरुद्ध एक बड़ी भारी फौज के साथ भेजा। शाइस्ता खाँ एक लाख फौज के साथ पूना में आकर ठहरा। शिवाजी ने उसे बड़ी बुद्धिमानी से परास्त किया। सन् १६६४ में इन्होने मुगलों के राज्य मे घुसकर सूरत को लूटा और फिर मक्का जानेवाले बहुत से सैयदों की नौकाएँ लूट लीं तथा दंड लेकर उन्हें छोड़ा। इसपर औरंगजेब ने बड़ा क्रोध करके एक बड़ा दल जयपुर के महाराज मिर्जा राजा जयसिंह के आधिपत्य मे शिवाजी से लड़ने को भेजा। अब इन पर बड़ा संकट पड़ा, क्योंकि ये हिंदू का खून बहाना नहीं चाहते थे। अतः सन् १६६६ मे इन्होने जयसिंह को कुछ गढ़ दिए और फिर ये आगरे भी गए। औरंगजेब ने अभिमान करके इन्हें पंचहजारी सरदारों मे खड़ा किया। इस पर इन्होंने शाह को सलाम नहीं किया और मूँछ पर ताव देकर अपनी स्वतंत्रता एवं क्रोध प्रकाश किया। इनके रोब से दरबार मे सन्नाटा पड़ गया। इनके हाथ मे कोई अस्त्र न था, नहीं तो वहीं मार काट होने लगती। निरस्त्र होने से क्रोध के मारे आप मूर्छित हो गए और तब लोग इन्हें गुसलखाने मे ले जाकर होश मे लाए। इन्हीं कारणों से भूषणजी ने कई स्थानों पर गुसलखाने का वर्णन किया है। फिर आप तरकीब से आगरे से निकल आए और अपना राज्य करने लगे।

सन् १६६९ मे औरंगजेब ने हिंदुओं के असंख्य मंदिर खुदवाए, मथुरा को ध्वस्त करके देहरा केशवराय तुड़वा डाला और स्वयं काशी विश्वनाथ के मंदिर तक को नष्ट करके उसके स्थान पर मसजिद बनवाई (शिवा० बा० छंद नं० २०, २१, २२ देखिए)[१]। सन् १६७० में शिवाजी

---

१ उस समय शिवाजी और महाराणा राजसिंह ने औरंगजेब को जो पत्र लिखे थे, वे देखने योग्य हैं। ग्राट डफ कृत मरहठों के इतिहास और टॉड राजस्थान में उनके अनुवाद दिए हुए हैं।

ने फिर सूरत लूटी। उसी साल आपने उदैभान राठौर को मारकर सिंहगढ़ मुगलों से छीन लिया। यह दुर्ग आपने सन् १६६६ में जयसिंह को दिया था।

मुगलों ने शिवाजी की यह प्रचंड धृष्टता देख बड़ा क्रोध करके एक विकराल सेना दिलेर खाँ और खानजहाँ बहादुर के आधिपत्य में भेजी, परंतु सन् १६७२ ई० में शिवाजी ने सल्हेरि पर इस बृहत् सेना को पूर्णतया परास्त किया। इस युद्ध में दिल्ली के तैंतीस बड़े सेनापतियों को इन्होंने पकड़ लिया और कोटा बूँदी के राजकुमार किशोरसिंह, मोहकमसिंह, इखलास खाँ आदि को परास्त करके समस्त दिल्ली दल का बड़ा ही विकराल कतले आम किया। इसी युद्ध में कितने ही रुहेले, सैय्यद, पठान, चंदावत, आदि मारे गए। तदनंतर दिलेर खाँ को पराजित करके शिवाजी ने रामनगर एवं जवार पर बैरियों को परास्त किया और गुजरात को भी नीचा दिखाया।

इसके पश्चात् आपने सन् १६७३ में मृत आदिलशाह के नाबालिग पुत्र के पालक एवं समस्त राज्य के प्रबंधकर्त्ता खवास खाँ से कुछ देश माँग भेजे, परंतु वजीरों ने न दिए। तब दो ही दिनों में दौड़कर आपने बहलोल खाँ को हराकर परनाले का किला छीन लिया। इस पर खवास खाँ ने बहलोल खाँ को आप से लड़ने को फिर भेजा, परंतु उसे मरहठों ने घेर लिया और कृपा करके जाने दिया। फरवरी मार्च सन् १६७४ में शिवाजी के सेनापति हंसाजी मोहिते ने जसारी पर बहलोल खाँ को पूर्णतया पराजित किया। इस समय बीजापुर समान शत्रु नहीं रहा था, इसीलिए भूषण लिखते हैं कि "बापुरो एदिलसाहि कहाँ कहाँ दिल्ली को दामनगीर शिवाजी।"[१]

---

१ इस समय जून सन् १६७४ में शिवाजी ने अपना अभिषेक कराया और अपने नाम का सिक्का चलाया। सन् १६६७ ई० में प्रसिद्ध छत्रसाल बुँदेला

इस प्रकार अपना बल भली भाँति स्थापित करके शिवाजी सन् १६७६ से ७८ तक अठारह महीने करनाटक वश करने मे लगे रहे। ऐसी प्रचंड और प्रभावपूरित इनकी कोई और चढ़ाई नहीं हुई थी और इसका वर्णन भी कवि ने बड़े उत्कृष्ट छंदों में किया है (शि० बा० के छंद नं० ४२, ४५, ४६ देखिए)।

इस समय इनकी ऐसी धाक बँध गई थी कि पुर्तगालवासी तक इन महाशय को नज़रे भेजते थे, बीजापुर एवं गोलकुंडावाले पीछे दबते थे (वरन् पाँच लक्ष और तीन लक्ष रुपए सालाना कर भी देते थे) तथा औरंगजेब का राज्य नर्मदा के उत्तर तक रह गया था। इसी समय भूषणजी ने औरंगजेब को ललकारा था (शि० बा० नं० ३६ देखिए) शिवराज के प्रयत्नो का फल स्वरूप भूषण ने यथार्थ छंद कहा है "वेद राखे विदित" इत्यादि (शि० बा० नं० ५१ देखिए)। भूषणजी का लिखा हुआ इतिहास इसी जगह समाप्त होता है[1]।

अब हम पाठको के लाभार्थ उस समय के ऐसे इतिहास को भी सूक्ष्मतया लिखते है जिससे उन्हें भूषण के काव्य का पूर्ण प्रभाव समझने मे सुभीता हो।

शिवाजी का जन्म सन् १६२७ ई० मे हुआ था। इनकी माता का नाम जीजाबाई था। शाहजी ने एक दूसरा भी विवाह कर लिया और वे अपनी नवीन स्त्री के साथ तंजौर म रहने लगे। इसी स्त्री के पुत्र वेंकोजी थे। जीजाबाई अपने पुत्र शिवाजी के साथ शाहजी के मुख्य

शिवाजी से मिलने आए थे और इनसे प्रोत्साहित होकर मुगलों से लड़ने लगे थे। सन् १६७४ तक वे महाराज भी कई छोटे छोटे दलो को जीत बुदेलों का दल जोड़ मुगलो से बडे बल के साथ लड़ने लगे थे।

१ पाठकगण देख सकते हैं कि ऊपर के इतिहास मे, "काव्य" की कुछ तड़क भड़क छोड़, प्रायः सभी बाते सत्य हैं।

निवासस्थान पूने में रहती थी और शाहजी की पैतृक जागीर का प्रबंध करती थी। इस समय शाहजी ने दादाजी कोणदेव को शिवाजी के पालनार्थ एवं पैतृक संपत्ति के रक्षणार्थ नियत कर रक्खा था। यह जागीर दो लाख रुपये सालाना आय की थी। बालक शिवाजी का पढ़ने लिखने में जी नहीं लगता था, परंतु अस्त्रविद्या के सीखने एवं दौड़ धूप के कामों में उसे अधिक उत्साह रहता था। उसका जी गौओं, ब्राह्मणों और देवालयों की बुरी दशा देख मुसलमानों की ओर से बहुत हट गया था और वह बाल्यावस्था से ही हिंदू राज्य स्थापित करने एवं म्लेच्छों को मार भगाने के स्वप्न देखने लगा था[१]। शाहजी मुसलमानों के नौकर थे, अतः उन्हें शिवाजी का यह हाल सुनकर बड़ा भय उपस्थित हुआ, और उन्होंने दादाजी को इसका निषेध करने को लिख भेजा, परंतु पिता और पालक दोनों के निषेध करने पर भी बालक शिवाजी ने अपना ढंग नहीं बदला। वह किलेदारों से एक एक करके दुर्ग लेने लगा। बड़ा आदमी होता हुआ भी छोटे छोटे लोगों के यहाँ तक यह चला जाता था, और इसीलिए वे लोग इसे बहुत चाहने लगे और सच्चे चित्त से इसके अनुयायी हो गए। इसी समय दादाजी कोण-देव मृत्युशय्या पर पड़े और मरने के पहले उन्होंने शिवाजी को हृदय से लगाकर इसे मुसलमानों से युद्धार्थ प्रोत्साहित किया।

इसी समय से शिवाजी और भी साहस के काम करने लगे। अब आप आदिल शाह से खुल्लमखुल्ला लड़ने में प्रवृत्त हुए, यद्यपि उस समय भी शाहजी उन्हीं आदिल शाह के ही नौकर थे। अंत में शाह ने शिवाजी के विरोध में शाहजी की भी गुप्त संमति का भ्रम करके उन्हें कारागृह में डाल दिया, परंतु शिवाजी ने शाहजहाँ को नौकरी करना स्वीकार करके उसके दबाव से अपने पिता को बीजापुर के कारागार से

---

१ वह समय ही ऐसा अनिश्चित था।

छुड़वा लिया। इसके कुछ पीछे शाह जान गया कि शिवाजी अपने बादशाह ही का नहीं वरन् पिता का भी विरोधी है; अतः उसने शाहजी को फिर तंजौर भेज दिया। शिवाजी ५३ वर्ष की अवस्था में सन् १६८० ई० में स्वर्गवासी हुए। मरते समय आपने पाँच करोड़ रुपए वार्षिक आय का राज्य छोड़ा। किसी किसी ने शिवाजी को सोलंकी कहा है, परंतु सोलंकी अग्निवंशी हैं और शिवाजी सूर्य्यवंशी थे।

इसी सन् में उदयपुर के महाराणा राजसिंह ने मुगलों की अधीनता को लात मारकर औरंगजेब का सामना करके चार घोर युद्धों में उसे परास्त किया। प्रथम युद्ध नालघाटी के पास हुआ जिसमें मुगलों की पचास हजार सेना औरंगजेब के पुत्र अकबर के साथ थी। दूसरी लड़ाई देसौरीघाटी के आगे हुई। उसमें भी मुगलों की उतनी ही सेना शाहजादा अकबर को बचाने गई थी। तीसरे युद्ध में स्वयं औरंगजेब शाहजादा आजम के साथ मुगलों का मुख्य दल लिए अकबर और दिलेरखाँ की बाट जोहता था। इस तीसरे युद्ध में औरंगजेब को बड़ी ही कायरता से भागना पड़ा और शाही झंडा, हाथी और साज सामान राणाजी के हाथ लगे। जब औरंगजेब भागकर अजमेर पहुँचा, तब उसने वहाँ से खान रुहेला को बारह हजार सेना के साथ साँवलदास से लड़ने भेजा; परंतु यह दल भी पुरमंडल में पराजित हुआ। इसी समय पर राणाजी ने अपने प्रधान अमात्य दयालसाह को भेजा और उन्होंने मालवा से नर्मदा और बेतवा तक का देश लूटा। फिर सारंगपुर, देवास, सारोंज, मंडी, उज्जैन और चँदेरी भी लूटे गए। इसी समय उसने अपना दल महाराणा के बड़े पुत्र जयसिंह की सेना से मिलाकर शाहजादा आजम को चित्तौर के समीप परास्त किया। तब महाराणा के द्वितीय पुत्र भीम ने अपना दल जोधपुर के राठौरों के दल से मिलाकर शाहजादा अकबर और तहौवरखाँ को गनोरा पर हराया। इस प्रकार मुगलों की प्रचंड हार से प्रोत्साहित होकर सीसोदियों और

राठौरों ने शाहज़ादा अकबर को अपनी ओर मिलाकर औरंगजेब को तख्त से उतार देने का प्रबंध किया, परंतु दुर्भाग्यवश इनको यह संदेह हो गया कि अकबर गुप्त रीति से अपने पिता से मिला हुआ है; अतः जीत जिताकर ये अपने इरादे से हट गए और औरंगजेब बच गया।

इस युद्ध में सीसौदियों और राठौरो ने मिलकर औरंगजेब से युद्ध किया। राठौरों के मिलने का यह कारण था कि उनके महाराज जसवंतसिंह भीतरी सूरत से औरंगजेब के घोर शत्रु थे, परंतु दिखाने को उससे मिले हुए थे। इसका कारण इनका हिंदुओं से प्रेम एवं औरंगजेब की कट्टरता थी। जब ये महाराज मुगलों की ओर से सन् १६६३ ई० मे शाइस्ताखाँ के साथ शिवाजी से लड़ने गए थे, तब शिवाजी से मिलकर इन्होने शाइस्ताखाँ के दल की दुर्गति करा डाली थी। इसी प्रकार शाहशुजा से मिलकर इन्होने औरंगजेब को धोखा दिया था। इन कारणों से औरंगजेब इनसे बहुत कुढ़ता था, परंतु कई उचित कारणों से इनसे खुल्लमखुल्ला लड़ना अच्छा नहीं समझता था। इसी कारण उसने इन्हें काबुल में लड़ने के लिये भेज दिया और वहाँ जब ये महाराज सन् १६८० में मर गए, तब उसने राठौरों पर क्रोध प्रकट किया। महाराज जसवंतसिंह के सब पुत्र मर चुके थे, केवल एक कई मास का लड़का, जो काबुल में पैदा हुआ था, जीवित था। जब राठौर लोग काबुल से लौटकर दिल्ली आए, तब औरंगजेब ने उन्हें घेर लिया और उस लड़के सहित उन्हें मार डालने का पूर्ण प्रयत्न किया। परंतु राठौरों ने उस बच्चे को किसी प्रकार बचा लिया और मुगलों से लड़ते भिड़ते वे जोधपुर जा पहुँचे। मुगलों ने उनका पिंड जोधपुर मे भी न छोड़ा और प्रायः समस्त मारवाड़ पर अपना दखल जमा लिया, परंतु दुर्गादास के आधिपत्य मे राठौर लोग अपने बालक महाराज को पहाड़ों में छिपाए हुए औरंगजेब से लड़ते रहे। यही बालक समय पाकर राठौरों का प्रसिद्ध और प्रतिभाशाली अजीतसिंह नामक महाराजा हुआ। बहुत

वर्ष मुगलो से लड़कर अजीत ने अपना राज्य फिर पाया था। इसी कारण राठौर लोग महाराणा के साथ मिलकर मुगलों से लड़े थे। राठौरों का यह युद्ध सन् १७१० ई० तक चलता रहा था।

जब क्षत्रियों ने शाहजादा अकबर को छोड़ दिया, तब अपने पिता से सिवा प्राणदंड के और किसी बात की आशा न होने के कारण वह फिर राठौरों की शरण मे गया। इस पर दुर्गादास बालक अजीत को अपने भाई के साथ छोड़ अकबर को लेकर दक्षिण चला गया। अकबर के दक्षिण निकल जाने से औरंगजेब को बड़ा भय हुआ और उसने महाराज राजसिह से संधि करके दक्षिण जाने का दृढ़ संकल्प कर लिया। अतः वह अपने दल का मुख्यांश लेकर दक्षिण चला गया और इधर छत्रसाल बुँदेला से लड़ने को तहौवर खाँ को आज्ञा देता गया। अकबर औरंगजेब के दक्षिण जाने से फारस भाग गया। तब औरंगजेब ने बीजापुर और गोलकुंडा पर चढ़ाई करके दो साल के युद्ध मे सन् १६८८ ई० मे उन्हें स्ववश कर लिया। सन् १६८९ मे उसने मरहठों पर धावा करके शिवाजी के पुत्र शंभाजी को भी बंदी कर बड़ी निर्दयता से मरवा डाला। शंभाजी के पुत्र साहूजी को भी शाह ने पकड़ लिया था; परंतु उसके एक छोटा बच्चा होने के कारण वध न करके उसे अपने यहाँ के एक महाराष्ट्र ब्राह्मण के सिपुर्द कर दिया। साहूजी का भी नाम शिवाजी था, परंतु औरंगजेब ही ने उसका नाम "साहु" यह कहकर रक्खा कि इस बच्चे के पिता और पितामह चोर थे, परंतु यह चोर नहीं, साह है। मरहठो ने उस समय भी धैर्य्य नहीं छोड़ा और शिवाजी के द्वितीय पुत्र राजाराम को राजा बनाकर वे मुगलों से लड़ने लगे। लड़ते लड़ते यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ दौड़ते हुए राजाराम यथा-साध्य स्वतंत्रता की रक्षा करते रहे। थोड़े ही दिनों में राजाराम का भी शरीरांत हो गया, किंतु उनकी स्त्री ताराबाई ने अंत पर्यंत युद्ध करके महाराष्ट्र राज्य का रक्षण किया। ताराबाई शिवाजी के प्रसिद्ध सरदार

प्रतापराय गूजर की पुत्री थी। मरहठे मुगलों की बृहत् सेना से संमुख नहीं लड़ सकते थे, परंतु इधर उधर लगे रहते थे। छोटे छोटे दलों को छिन्न भिन्न करके लूट लेते थे और सेना देखकर भाग जाते थे। इनका किसी खास स्थान पर राज्य नहीं रह गया था, परंतु जहाँ मुगल नहीं होते थे, वहीं ये लूट मार करते और वहीं के राजा से देख पड़ते थे। एक बार सन् १६९५ में भीमा नदी ने बढ़कर शाह के १२००० दल को डुबो दिया। औरंगजेब ने सत्ताईस वर्ष उत्तर की भी कुल आय इसी दक्षिण के युद्ध में व्यय की, परंतु फिर भी कुल मरहठों को वह ध्वस्त न कर सका। एक बार इसकी फौज गड़बड़ दशा में थी। मरहठों ने एकाएक धावा करके उसे पूर्ण पराजय दे दी। औरंगजेब कुछ आगे था और उसके पास बहुत ही कम मनुष्य थे, परंतु दुर्भाग्यवश उसकी यह दशा मरहठों पर विदित न थी, नहीं तो वे उसे तुरत बंदी कर लेते। इन विपत्तियों से मुगल सेना बहुत ही विकल और हताश हो गई और मरहठों के युद्ध-कौशल से मुगल-विजय की आशा जाती रही। दिनों दिन उनका बल मंद पड़ता जाता था और मरहठों की विजय-वैजयंती फहराती जाती थी।

औरंगजेब ने देखा कि यदि अब यहाँ और रहूँगा, तो समस्त सेना पराजित हो जायगी और मैं पकड़ लिया जाऊँगा। यह सोचकर वह अहमदनगर चला गया और इन आपदाओं से उसका हृदय ऐसा विदीर्ण हो गया कि ८८ वर्ष की अवस्था में वह सन् १७०७ में परलोक-वासी हुआ। उसने अपने पुत्रों में बखेड़ा बचाने के विचार से राज्य के तीन भाग कर दिए, परंतु शाहजादों ने यह न माना। दक्षिण में मँझला शाहजादा आजम औरंगजेब के साथ था। उसने अपने बड़े भाई मुअज्जम से, जो दिल्ली में था, युद्ध करना निश्चय किया। इस कारण उसने मरहठों में झगड़ा पैदा कर देने के विचार से साहूजी को छोड़ दिया, परंतु मरहठों ने बिना किसी विशेष झगड़े के साहूजी को अपना

महाराज मान लिया और राजाराम के पुत्र कोल्हापुर के महाराज हो गए। उनके वंशधर अब भी कोल्हापुर के महाराज हैं। आजम और मुअज्जम का सन् १७०७ ई० मे जाजऊ पर घोर युद्ध हुआ जिसमे आजम मारा गया और मुअज्जम बहादुरशाह की उपाधि धारण करके बादशाह हुआ।

अब औरंगजेब के तीसरे पुत्र कामबख्श ने बहादुरशाह का सामना किया, परंतु वह हार गया और फिर युद्ध के घावो से मर भी गया। इस प्रकार जो भारी मुगल दल औरंगजेब दक्षिण जीतने को ले गया था, वह मरहठो तथा शाहजादो के झगड़ो से अशेष हो गया। मुगलो के इस घरेलू बखेड़े के कारण उनकी शक्ति बहुत मंद पड़ गई थी और अच्छा समय था कि मरहठे अपना बल बढ़ाते, परंतु साहूजी स्वयं लड़कपन से मुगलों के यहाँ रहा था, अतः वह बड़ा आलसी और आरामपसंद था। यह समझ पड़ने लगा कि महाराष्ट्र शक्ति घरेलू झगड़ो और अकर्मण्यता के कारण नष्ट हो जायगी, परंतु इसी समय (१७१२ ई० मे) भाग्यवश साहूजी ने बालाजी विश्वनाथ को अपना पेशवा (प्रधान मंत्री) बनाया। ये महाराज बड़े ही बुद्धिसंपन्न व्यक्ति थे और हर बात में प्रवीण थे। इन्हीं के प्रयत्नो से महाराष्ट्र शक्ति मुगलों के अधःपतन के साथ ही साथ ऐसी बढ़ी कि मरहठों का पूरा साम्राज्य स्थापित हो गया। इन्होने सन् १७१६ ई० के लगभग दिल्ली पर आक्रमण करके बादशाह फर्रुखसियर को पदच्युत किया और दूसरे बादशाह को गद्दी पर बैठाया। इनके गुणों और कर्मों से मोहित होकर साहूजी ने पेशवा का पद इनके वंश मे स्थिर कर दिया। पेशवा बालाजी विश्वनाथ सन् १७२० ई० में स्वर्गवासी हुए और बाजीराव पेशवा नियत हुए।

बुँदेलों का इतिहास

सूर्यवंश में रामचन्द्र और उनके पुत्र कुश के वंश में काशी और कतित के गहिरवार राजा हुए। इस वंश का पूरा वर्णन बहुत से पूर्व पुरुषों के नामों समेत लाल कवि ने अपने छत्र-प्रकाश नामक ग्रन्थ में किया है। इसी वंश में महाराज पंचमसिंह उत्पन्न हुए। उनके चारों भाइयों ने उनका राज्य छीन लिया और वे विंध्याचल पर जाकर विंध्य-वासिनी देवी की उपासना करने लगे। एक दिन वे अपना ही बलिदान करने को प्रस्तुत हुए। कहा जाता है कि ज्यों ही उन्होंने अपने शरीर में एक घाव लगाया त्यों ही देवीजी ने प्रकट होकर उनका हाथ पकड लिया और उन्हें राज्य मिलने का वरदान दिया। उसी समय देवीकृपा से उनके सिर से जो घाव द्वारा रक्तबिंदु गिरा था उसमें एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम बुँदेला पडा। अस्तु जो कुछ हो।

बुँदेला का वंश इस प्रकार चला –

बुँदेला
|
करण उपनाम बलवंत
|
अर्जुनपाल
|
सहनपाल
|
सहजइंद्र
|
नौनिकदेव
|
पृथ्वीराज

सन १६२७ में चंपतिराय और वीरसिंहदेव शाहजहाँ से लड़ने लगे। चंपतिराय का बड़ा पुत्र सारवाहन मुगलों द्वारा मारा गया। इस बात का इन्हें बडा दुःख हुआ। इसी समय इनकी रानी को स्वप्न हुआ कि मानो सारवाहन कहता है कि मैं फिर तेरी सौति
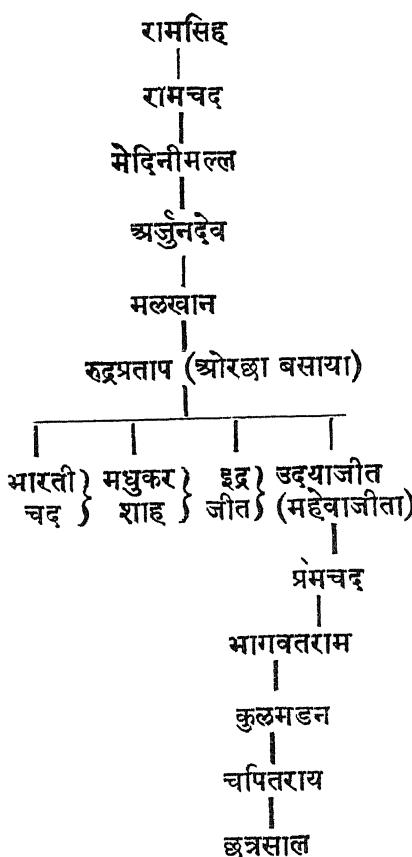
की कोख से पैदा होकर मुगलो से अपना बैर लूँगा । कुछ दिनो मे उनके यहाँ छत्रसाल १६५० ई० मे उत्पन्न हुए ।

शाहजहाँ ने चपतिराय पर महावत खाँ खानजहाँ और अब्दुल्ला के आधिपत्य मे तीन सेनाएँ भेजीं । उस समय ये पहाडो मे छिपे रहे, परतु उनके कुछ हटते ही फिर निकलकर उनकी छोटी छोटी टुकड़ियों को इन्होने हराया । अत मे उन सब को एक साथ ही बड़े विकराल युद्ध मे ध्वस्त करके आपने उनकी सेना को खूब ही काटा । शाहजहाँ ने फिर एक सेना भेजी । तब इन्होने बादशाह की सेवा स्वीकार कर ली और तीन लाख की मालगुजारी पर कोच का परगना पाया । एक बार चपतिराय दारा के साथ काबुल मे लडने गये । वहाँ इन्होने बडी वीरता दिखाई, परतु दारा के चित्त मे हर्ष के स्थान पर चपति से ईर्ष्या उत्पन्न हुई, यद्यपि इन्हीं के कारण उन्हे

कई विजय प्राप्त हुई थीं। तब दारा ने ओड़छे के राजा पहाड़सिंह को नौ लाख की मालगुजारी पर कोंच का परगना दे दिया। इस कारण चंपति और दारा मे द्रोह हो गया। इसके थोड़े ही दिन पीछे दारा और औरंगजेब मे राज्यार्थ सन् १६५८ में धौलपुर में घोर युद्ध हुआ। इस युद्ध में चपतिराय ने औरंगजेब का साथ दिया और उसकी सेना के हरौल मे रहकर ये लड़े। दारा के हरौल में बूँदीनरेश हाड़ा छत्रसाल थे। इसमे दारा की पराजय हुई और छत्रसाल हाड़ा घोर युद्ध करके मरे। इसी युद्ध का वर्णन भूषण ने छत्रसाल दशक के प्रथम दो छंदों मे किया है। इस युद्ध के फलस्वरूप औरंगजेब ने चंपतिराय को बारह-हजारी का मनसब और ऐरछ, शाहजादपुर, कोंच और कनार जागीर में दिए। तब चंपति अपने घर चले आए। कुछ दिनों बाद औरंगजेब ने कहला भेजा कि अगर घर मे बैठे रहोगे, तो मनसब घट जायगा और नुकसान उठाओगे। इस बात पर चपतिराय को बड़ा क्रोध चढ़ा और ये महाराज मुगलों से लड़ने लगे। मुगलो के आक्रमण से चंपति को सब राजपाट छोड़कर भागना पड़ा। ये अपनी बहिन के यहाँ बीमारी की दशा मे गए, परंतु जब ज्ञात हुआ कि बहिन के नौकर इन्हें पकड़कर मुगलों के यहाँ भेजा चाहते है, तब सन् १६६४ ई० मे आपने आत्महत्या कर ली।

इसी समय से छत्रसाल को पिता का बदला लेने और खोया हुआ राज्य फिर प्राप्त करने की प्रबल इच्छा हुई। पहले इन्होंने जयसिंह के नीचे मुगलों की सेवा कर ली और देवगढ़ के घेरा करने मे ये बड़ी बहादुरी से घायल हुए पर अच्छा संमान न होने से इन्होंने सेवा छोड़कर शिवाजी से मिलना निश्चय किया, क्योकि इनकी समझ में मुगलों से

"ऐंड़ एक शिवराज निबाही। करै आपने चित की चाही॥
आठ पातसाही झकझोरै। सूबन बाँधि दंड लै छोरै"॥

(लालकृत छत्रप्रकाश)

इन्होंने शिवाजी से मिलकर अपना सब हाल कहा तो,
"सिवा किसा सुनि कै कही तुम छत्री सिरताज।
"जीति आपनी भूमि को करौ देस को राज॥
"करौ देस को राज छतारे। हम तुमतें कबहूँ नहि न्यारे॥
"तुरकन की परतीति न मानौ। तुम के हरि तुरकन गज जानौ॥
"हम तुरकन पर कसी कृपानी। मारि करैंगे कीचक घानी॥
"तुमहूँ जाय देस दल जोरौ। तुरुक मारि तरवारिन तोरौ॥
"छत्रिन की यह बृत्ति सदाई। नित्य तेग की खायँ कमाई॥
"गाय बेद विप्रन प्रतिपालैं। घाव ऐंड़धारिन पर घालैं॥
"तुम हौ महाबीर मरदाने। करिहौ भूमि भोग हम जाने॥
"जो इतही तुम को हम राखैं। तौ सब सुजस हमारो भाखैं॥
"ताते जाय मुगल दल मारौ। सुनिये श्रवननि सुजस तिहारौ॥
"यह कहि तेग मँगाय बँधाई। बीर बदन दूनी दुति आई"॥

(लालकृत छत्रप्रकाश)

शिवाजी के आगरे से लौटने से कुछ ही दिन पीछे सन् १६६७ मे छत्रसाल उनसे मिले थे। शिवाजी से इस प्रकार प्रोत्साहित होकर छत्र साल अपने देश मे आए और सेना एकत्र करके मुगलों से लड़ने लगे।

सन् १६७१ ई० के लगभग इन्होने बहुत सी लड़ाइयाँ जीत कर गढ़ाकोटा का किला ले लिया और क्रमशः अपना प्रभुत्व प्रायः समस्त बुंदेलखंड पर जमा लिया। जब इन्होंने दक्षिण से जाता हुआ सो गाड़ियों भर शाही सामान लूटा, तब औरंगजेब ने क्रोध करके तहौवरखाँ को एक बड़ी सेना लेकर भेजा, पर सिरावा के युद्ध मे छत्रसाल ने उसकी सारी सेना काट डाली। उसने दूसरी सेना लेकर आक्रमण किया और सन् १६८० में वह फिर पराजित हुआ। तदनंतर छत्रसाल ने अनवरखाँ, सदरुद्दीन और हमीदखाँ को परास्त किया और बुंदेलखंड के उन राजाओं को भी, जो इनका साथ नहीं देते थे, खूब सताया। सन् १६९०

में औरंगजेब ने एक बड़ी सेना के साथ अब्दुस्समद को भेजा, परंतु छत्रसाल ने बेतवै नदी के किनारे उसे भी पराजित किया। तब बहलोल खाँ गवर्नर और जगतसिंह ने छत्रसाल पर धावा किया, परंतु जगतसिंह मारा गया और बहलोल को भागना पड़ा। बहलोल ने मारे लज्जा के आत्मघात कर लिया। तदनंतर छत्रसाल ने मुरादखाँ को हराया और दलेलखाँ को भी पराजित किया। पीछे आपने मटौंध को घेर कर जीत लिया। फिर सैयद अफगन के आधिपत्य में एक महती सेना आई। इससे एक बार छत्रसाल हार गया, परंतु पुनः सेना एकत्र करके बुंदेलराज ने इसे भी पराजित किया। तब शाहकुली इससे लड़ने को भेजा गया, परंतु वह भी हारा।

अब छत्रसाल यमुना और चंबल के दक्षिण ओर के सारे देश का स्वामी बन गया[1]।

सन् १७०७ ई० मे बहादुर शाह ने इन्हें बुलाकर उस इलाके का स्वामी होना स्वीकार किया। तब इन्होंने बादशाह को लोहगढ़ जीत दिया।

सन् १७२२ ई० मे फर्रुखाबाद का गवर्नर मुहम्मदखाँ बंगश छत्र-साल से लड़कर सारा देश उजाड़ने लगा। उसने चित्रकूट के पास से युद्धारंभ किया। महाराज छत्रसाल रीवाँ का बहुत राज्य छीन चुके थे। इसी से रीवाँनरेश महाराज अवधूतसिंह ने भी इस समय बंगश का साथ दिया। इस कुदशा मे छत्रसाल ने (जो अब ७५–७६ वर्ष के बुड्ढे थे) पेशवा बाजीराव को एक पत्र में सब वृत्तांत लिखकर अंत मे लिखा—

"जो गति ग्राह गजेंद्र की सो गति जानहु आज।
बाजी जात बुँदेल की राखौ बाजी लाज"॥

---

१. इसकी वार्षिक निकासी प्रायः डेढ़ दो करोड़ मुद्रा थी।

इस प्रकार बुँदेलों के बाजी हारने का भय सुनकर पेशवा बाजीराव ने एक महती सेना भेजी और उसकी सहायता से छत्रसाल ने सन् १७२९ मे बंगश को परास्त किया। बंगश इस युद्ध मे हारा, परंतु मारा नहीं गया।

छत्रसाल ने इस उपकार के बदले बाजीराव को अपना एक तिहाई राज्य दे दिया और शेष अपने दो मुख्य लड़कों मे बाँट दिया। इनके प्रायः ५२ लड़कों मे केवल हृदयशाह, जगतराज, पद्मसिंह और भारतीचंद औरस पुत्र थे और शेष चेरियों से उत्पन्न हुए थे। हृदयशाह को पन्ना का राज्य मिला और जगतराज को जैतपुर का। छत्रसाल सन् १७३३ में स्वर्गवासी हुए और अबतक मऊ (छत्रपुर) में उनका विशाल समाधिस्थान बना हुआ है। बुदेलखंड मे अब २२ देशी रियासतें है जिनमे निम्नलिखित आठ रियासतों के राजा छत्रसाल वंशोद्भव हैं—जिगनी, पन्ना, लोगासी, सरीला, अजैगढ़, चरखारी, बिजावर और जसो। सन् १७३३ के लगभग महाराज हृदयशाह ने महाराज अवधूतसिंह को हरा कर रीवाँ राज्य पर अधिकार कर लिया। यह अधिकार सन् १७४० तक रहकर समाप्त हो गया और महाराज अवधूतसिंह का राज्य रीवाँ में फिर से दृढ़ हुआ।

शिवराज-भूषण

इस ग्रंथ का नाम शिवराज-भूषण बड़ा ही समीचीन है। इसमे शिवराज का यश वर्णित है; अतः यह उनको भूषित करता है। यह भूषणों (अलंकारों) का ग्रंथ है और इसे भूषणजी ने बनाया है। ये सभी बातें "शिवराज-भूषण" पद से पूर्णतया विदित हो जाती हैं। सब से पहले यह प्रश्न उठता है कि इसका ठीक निर्माणकाल क्या है? इतना तो निश्चय है कि यह सन् १६७३ ईसवी में समाप्त हुआ; पर इसके प्रारंभ होने के विषय मे निम्नलिखित चार बातें कही जा सकती हैं—

(१) भूषणजी इस ग्रंथ के छंदों को स्फुट रूप से समय समय पर, बिना किसी अलंकारादि के विचार से, बनाते गए; और अंत मे इतने छदो को क्रमबद्ध कर के और कुछ नए छंद जोड़ कर उन्होने इन्हें ग्रंथ रूप मे कर दिया।

(२) उन्होंने इसके छंद अलंकारो के विचार से ही समय समय पर बनाए और फिर उन्हें ग्रंथ रूप में परिणत कर दिया।

(३) अपने आने के समय से ही इस ग्रंथ को इसी रूप में बनाना कवि ने प्रारंभ कर दिया और सन् १६७३ ई० मे इसे समाप्त किया।

(४) सन् १६७३ ई० ही मे अथवा उसके कुछ ही पहले यह ग्रंथ बनना प्रारंभ हुआ और कुछ ही महीनों में समाप्त हो गया।

इन प्रश्नो के उत्तर देने में निम्नलिखित चक्र से बहुत कुछ सहायता मिल सकती है—

मुख्यतया किस सन् की घटना	छंद नंबर
१६२७	११, १३
१६४८	२१३
१६५५	२०६
१६५७	७७, १०३, ३०७
१६५८	२१७
१६५९	४२, ६३, ९६, ९९, १०७, २०७, २३९, २५२, ३०५, ३३७
१६६१	२०६
१६६२	१४, २४, २४२, २६१, २८८
१६६३	७७, ९६, १०३, १८९, ३२३, ३३७, ३३८, ३६४
१६६५	२१२, २१३

१६६६	३४, ३५, ३८, ७९, १४८, १८६, १९८, २०४, २०६, २६५, ३०९, ३१०
१६६९	२५८
१६७०	१००, १५५, २००, २१३, २३९, २५९, २८५, ३३४, ३५४, ३५७
१६७१	६३
१६७२	९७, १०३, १०७, १५५, २२५, २२६, २३६, २७५, २९२, ३२०, ३३१, ३३८, ३५५, ३५६, ३५७
१६७३	६६, १६१, २०६, २५४, ३१२, ३२८, ३३७, ३५६, ३५७, ३५८, ३५९

इस चक्र के देखने से विदित होता है कि शिवराज-भूषण मे भूषण-जी ने सन् १६५७ के ३ छंद, १६५९ के १०, १६६२ के ५, १६६३ के ८, १६६५ के २, १६६६ के १२, १६७० के १०, १६७२ के १५ छंद और १६७३ के ११ कहे हैं। सन् १६४८, १६५५, १६५८, १६६६, १६६९ तथा १६७१ के भी एक एक छंद है तथा १६७२ के दो।

अब हम शिवराज-भूषण के समय संबंधी उपर्युक्त चारों प्रश्नों पर विचार करते हैं।

(१) यह अनुमान यथार्थ नहीं कहा जा सकता, क्योंकि भूषण के अधिकांश उदाहरणो मे एक एक छंद में वही अलंकार कई कई बार आया है और सिवा उसके दूसरा अलंकार स्पष्ट रूप से नहीं आने पाया है। फिर प्रत्येक अलंकार अपने उदाहरण में बड़े ही स्पष्ट रूप से निकलता है और किसी के निकालने मे क्लिष्ट कल्पना नहीं करनी पड़ती। अन्य अधिकांश आचार्यों के उदाहरणों में ऐसी स्पष्टता कम पाई जाती है। अतः कोई यह नहीं कह सकता कि भूषणजी के उदाहरण अलंकारों के लिये नहीं बनाए गए थे और उनमे अलंकार आप ही आप निकल आए। वे स्वयं कहते हैं—

"शिव-चरित्र लखि यों भयो कवि भूपण के चित्त।
भाँति भाँति भूषनन सों भूषित करौं कवित्त" ॥

(२) यह अनुमान कुछ कुछ यथार्थ जान पड़ता है। इसके कारण पीछे लिखे जायँगे।

(३) यह ग्रंथ इसी रूप में सक्रम नहीं बनाया गया है; क्योंकि यदि सन् १६६७ ई० से इसे भूषणजी लिखने लगते तो छंद नं० ९६ व ९७ में ही सन् १६७३ का वर्णन कैसे आ जाता? क्योंकि यदि यह मानिए कि सन् १६६७ से सन् १६७३ तक यह ग्रंथ सक्रम बनता रहा, तो यह भी मानना पड़ेगा कि सन् १६७३ में केवल अंत के प्रायः पचास छंद बने होंगे। इसी प्रकार और सब की भी दशा है। अतः यह ज्ञात होता है कि इस ग्रंथ के छंद सिलसिलेवार नहीं बनाए गए हैं; परंतु कुछ अंश में यह विचार यथार्थ भी है, जैसा कि आगे दिखाया जायगा।

(४) यह अनुमान भी ठीक नहीं जँचता। भूषण ने जिस समय जो ग्रंथ या छंद बनाया है, उसी समय की घटनाओं का वर्णन उसमें बाहुल्य से है और यही बात प्राकृतिक भी है। भूषणजी ने शिवराज-भूषण के १२ छंदों में शिवाजी के आगरा-गमन का वर्णन किया है और इनमें से बहुतेरे छंद ग्रंथ के प्रारंभ में पाए जाते हैं। ग्रंथ के अंत मे सन् १६७२ और १६७३ के वर्णन बहुतायत से हैं। यदि कहिए कि आगरा-गमन को भूषणजी बड़ी भारी बात समझते थे और इसीलिये उसका वर्णन अधिक है, तो इसका उत्तर यह है कि शिवाबावनी में इस घटना के दो ही छंद है। फिर बहलोल का युद्ध ऐसा बड़ा न था; परंतु उसके कई छंद भूषणजी ने लिखे हैं। सन् १६७३ की घटनाएँ बडी भारी न थीं; परंतु उनका भी वर्णन अधिक है। इससे विदित होता है कि इस ग्रंथ के आदि का भाग सन् १६७० के पहले लिखा गया और अंत का सन् १६७२ और १६७३ में बना; एवं इसका मध्य भाग सन् १६७० और १६७१ के लगभग बनाया गया।

इन सब विचारों से विदित होता है कि भूषणजी ने यह ग्रंथ सन् १६६७ ई० के लगभग प्रारंभ किया था और इसी क्रम से जो हम आज देखते है यह ग्रंथ बना; परंतु कुछ कुछ अलंकारो के उदाहरण उस समय नहीं बनाए गए थे या शिथिलता के कारण पीछे ग्रंथ से निकाल दिये गये। वे अलंकार पीछे कहे गए। इसी कारण कही कहीं आदि मे भी सन् १६७० के पीछे तक की घटनाएँ आ गई हैं। कहीं कहीं प्रथम उदाहरण मे उस समय की घटनाओ का वर्णन है, और फिर अंत में द्वितीय उदाहरण पीछे की घटनाओं से भरा हुआ रख दिया गया है। कहीं कहीं संभव है कि द्वितीय उदाहरण भूषणजी को ऐसा अच्छा लगा हो कि उन्होने पहला उदाहरण ग्रंथ से निकाल दिया हो अथवा पहले उदाहरण के पूर्व रख दिया हो। पाठकों को उपर्युक्त चक्र देखने से विदित होगा कि अधिकतर ज्यो ज्यों ग्रंथ बढ़ता गया है, उसी प्रकार सन् भी बढ़ते गए हैं। इन सब विचारो से इस कुल ग्रंथ का एक ही डेढ साल में बनना मानना ठीक नहीं जँचता। फिर यदि भूषणजी ग्रंथ इतने शीघ्र बनाते होते कि डेढ़ साल मे इतना बड़ा ग्रंथ बना डालते, तो अपने शेष कवित्व-काल के ६५ सालों मे जाने कितना बनाते।

छंद नबर २०७ मे करनाटक की चढ़ाई के वर्णन का भ्रम हो सकता है; परंतु होना न चाहिए, क्योकि वहाँ शब्द देश जीते नहीं लिखा है, वरन् बिबूँचे है, जिससे आफत या गड़बड़ का प्रयोजन है। सन् १६५६ में आपने परनालो लिया और १६६१–६२ मे करनाटक मे घोर विद्रोह हुआ। बिबूँचे का यही अभिप्राय है। पूर्वी करनाटक शिवाजी ने सन् १६७६–७८ में जीता किंतु पच्छिमी करनाटक मे १६७३ के पूर्व लूट खसोट की थी। उसका भी इशारा इसमे समझा जा सकता है।

मुद्रित प्रतियों मे प्रायः तीन सौ छंद पाए जाते है, पर हमने शिवराज-भूषण की इस प्रति में ३८२ छंद दिए है। जितने छंद इस प्रति मे बढ़े हैं, उनका मुख्यांश कवि गोविद गिल्लाभाईजी की हस्तलिखित

प्रति से लिया गया है। गिल्लाभाईजी की प्रति मे कई ऐसे अलंकारो के लक्षण और उदाहरण है जो भूषणजी की दी हुई अलंकार-नामावली (छंद नं० ३७१-३७९) के बाहर है। उन अलंकारो के लक्षणों को हमने भूषणकृत नहीं समझा, परंतु उदाहरणों को "शिवाबावनी" एवं "स्फुट" मे रख दिया है। जान पड़ता है कि भूपण के इन कवित्तों मे अलंकार निकलते देख लोगो ने इन्हें "शिवराजभूपण" में उन अलंकारों के लक्षण अपनी ओर से जोड़कर रख दिए। इन नए कवित्तो में से दो चार के विषय में हमे भूषणकृत होने मे भी संदेह है। संभव है कि उन्हें किसी ने अपनी ओर से बना कर लिख दिया हो, पर शेष छंद अवश्य ही भूषण के प्रतीत होते है।

भूपणजी ने युद्ध-प्रधान ग्रंथ होने के कारण इसमे श्री भगवतीजी की एक बड़े ही प्रभावोत्पादक छंद द्वारा स्तुति की है। इस ग्रंथ मे कवि ने अधिकांश अलंकारो के लक्षण और उदाहरण दिए है और उदाहरणों मे विशेषता यह रक्खी है कि प्रत्येक मे शिवाजी का यश वर्णित है। इनके पहले किसी कवि ने अपने नायक के ही यशवर्णन में कोई ऐसा ग्रंथ नही रचा। ग्रंथ के आरंभ मे रायगढ़ का बड़ा ही मनोहर वर्णन है; और अलंकार का बंधन रखकर भी भूषणजी शिवराज के यशवर्णन और तत्कालीन मनुष्यों के वास्तविक भावों के चित्र खींचने में पूर्णतया कृतकार्य हुए हैं। अलंकारो के उदाहरण भी इनके स्पष्ट है और एक ही छंद मे कभी कभी दो चार बार तक उसी अलंकार के उदाहरण आते हैं। भूषणजी प्रायः सभी अलंकार इस ग्रंथ मे लाए हैं, केवल निम्न-लिखित छूट गए हैं—

धर्म्म लुप्ता से इतर लुप्तोपमा, तद्रूप रूपक, संबंधातिशयोक्ति, पदावृत्ति एवं अर्थावृत्ति दीपक, असदर्थ एवं सदर्थ निदर्शना, समव्यतिरेक, न्यूनव्यतिरेक, प्रस्तुतांकुर, द्वितीय पर्य्यायोक्ति, निषेधाभास, व्यक्ताच्छेप, तृतीय विषम, द्वितीय एवं तृतीय सम, प्रथम अधिक, अल्प, द्वितीय

तथा तृतीय विशेष, द्वितीय व्याघात, कारक दीपक, द्वितीय अर्थांतर-न्यास, विकस्वर, ललित, प्रथम एवं तृतीय प्रहर्षण, मुद्रा, रत्नावली, गूढ़ोत्तर, सूक्ष्म, गूढ़ोक्ति, विवृतोक्ति, युक्ति और प्रतिषेध ।

अलंकारों की इस नामावली में बहुत से ऐसे है जिनमे मुख्य अलंकार का वर्णन हुआ है, परंतु उसके किसी विभाग का नहीं हुआ। ऐसा ग्रंथ के संक्षिप्त बनने के कारण किया गया है। कुछ अलंकार ऐसे है जिनके न वर्णित होने का कोई कारण नहीं है। यही कहा जा सकता है कि वे ऐसे विदित अथवा आवश्यक नहीं है जिनके वर्णन करने को कवि् बाध्य हो।

तद्रूप रूपक का भी वर्णन भूषणजी ने नहीं किया है। बिहारी ने भी सैकड़ो रूपक लिखने पर एक भी तद्रूप रूपक नहीं लिखा। वास्तव मे तद्रूप रूपक एक निषिद्ध प्रकार का रूपक है। रूपक का मुख्य प्रयोजन है उसी रूप का होना। फिर कोई वस्तु किसी द्वितीय की पूर्ण प्रकारेण अनुरूप तभी हो सकती है जब उन दोनों वस्तुओं में कुछ भी भेद न हो। अतः मुख्यशः अभेद रूपक ही शुद्ध रूपक है। जब दो पदार्थों में विभिन्नता विद्यमान है, जैसा कि तद्रूप रूपक मे होता है, तब रूपक श्रेष्ठ कैसे हो सकता है ?

भूषण महाराज के भ्रम विकल्प एवं सामान्य के उदाहरण अशुद्ध हो गये है। इनके भ्रम मे गड़बड़ हो ही गया है। विकल्प में संदेह ही संदेह रहना चाहिए, निश्चय न होना चाहिए ।

(शि० भू० छं० २४९)

मोरँग जाहु कि जाहु कुमाऊँ सिरीनगरै कि कवित्त बनाये।

....

भूषन गाय फिरौ महि मैं बनिहै चित चाह शिवाहि रिझाये ॥

इस छंद मे भूषण ने अंत मे निश्चय कर दिया; सो अलंकार बन बना कर बिगड़ गया; परंतु यहाँ इनका दूषण क्षम्य है; क्योंकि इनका

अलंकार बन चुका था, तथापि इन्होंने स्वयं उसे नायक के कारण बिगाड़ दिया।

सामान्य = सादृश्य के कारण जहाँ भिन्न वस्तुओं मे भेद न जान पड़े। (शि० भू० छंद नं० ३०५ देखिए)। इसमें तोपो की चमक का चपला की भाँति चमकने से भेद खुल गया और अलंकार बिगड़ गया।

भूषणजी ने छंद नं० २६४ व २६७ मे अर्थांतरन्यास और प्रौढ़ोक्ति के लक्षण कई और कवियो के विरुद्ध लिखे है। आपने छंद नं० ३७९ मे लिखा है कि मैंने अपने लक्षण अलंकार ग्रंथ देखकर और "निज मतो" से बनाए है, सो यहाँ उनका मत समझना चाहिए। शिव० भूषण नं० ६०, १४६ और २५५ में भी ऐसे ही लक्षण हैं।

इस महाकवि ने लुप्तोपमा, उत्प्रेक्षा, चंचलातिशयोक्ति, असंगति, विरोधाभास, विरोध और पूर्वरूप आदि के बड़े ही उत्कृष्ट उदाहरण दिये है। ध्यानपूर्वक देखने और हठपूर्वक बात करने से इनके कई आलंकारिक उदाहरणों मे दोष दिखलाया जा सकता है। वास्तव मे भूषण अलंकारो के भारी आचार्य न होकर काव्योत्कर्ष में महान् है। आचार्य्यता मे मतिराम की विशेषता है।

शिवराज भूषण मे कवि ने अलंकारो ही पर पूर्ण ध्यान दिया है; अतः युद्धप्रधान ग्रंथ होने पर भी पूर्ण वीररस के बहुत अच्छे उदाहरण इस ग्रंथ मे नहीं मिलते। हाँ, भयानक तथा रौद्र रसों के उत्तम उदाहरण भी यत्र तत्र देख पड़ते है, मुख्यशः भयानक रस के, जिस (रस) के वर्णन मे भूषण महाराज बड़े पटु है। इन्होंने शिवाजी के दल का वर्णन इतना नहीं किया है जितना कि शत्रुओं पर उसकी धाक का। इसी हेतु इनके ग्रंथ में भयानक रस का बहुत अधिक समावेश है। रसों के उदाहरण शिवाबावनी मे अधिक उत्कृष्ट देख पड़ते है। भूषणजी अमृतध्वनि खूब अच्छी बना सकते थे। अन्य कवियों

की अमृतध्वनियों मे निरर्थक शब्द बहुत आ जाते हैं, परंतु भूषणजी के छंदों मे ऐसा नहीं है।

सब बातों पर विचार करने से विदित होता है कि "शिवराज-भूषण" एक बड़ा ही प्रशंसनीय ग्रंथ है। इसमे प्रायः समस्त सत्य घटनाओं ही का वर्णन है और शिवाजी का शील गुण आद्योपांत एक रस निर्वाह कर दिया गया है। इतिहास देखने से जो जो गुण शिवाजी में पाए जाते है, उन सब का पूर्ण विवरण इस ग्रंथ में मिलता है। हाँ, एक में अवश्य विभेद है; और वह इस प्रकार है कि इतिहास से प्रकट होता है कि शिवाजी भवानी के बड़े भक्त थे और प्रायः समस्त बड़े कार्य उन्हीं की आज्ञा से करते थे, परंतु भूषणजी ने इन्हें केवल शिव-भक्त बताया है। शिवाजी के शैव होने के विषय मे छंद नं० १४, १५८, २३६ और ३२६ देखिए। शिवाजी शिव तथा भवानी दोनों के भक्त थे, ऐसा इतिहास मे आया है।

हमारे भारतवर्ष मे पृथ्वीराज के पश्चात् चार स्वतंत्र राजे बड़े प्रभावशाली एवं पराक्रमी हुए, अर्थात् महाराज हम्मीर देव, महाराणा प्रतापसिंह, महाराज शिवाजी और महाराज रणजीत सिंह। इन सब में हम लोगों से दूरतम वासी शिवाजी ही थे; तथापि एतद्देशीय साधारण हिंदू समाज मे सबसे अधिक प्रसिद्ध वे ही महाराज हैं। इस असाधारण प्रख्याति का कारण यही भूषण जी का ग्रंथ है। यद्यपि महाराज रणजीत सिंह के सबसे पीछे होने के कारण उनका नाम लोग यहाँ जानते हैं, तथापि उनकी भी विजय-यात्राओ का हाल यहाँ बहुत कम मनुष्यों पर विदित है; परंतु शिवाजी की लड़ाइयो का समाचार ग्राम ग्राम तथा घर घर पूछ लीजिए।

एक यह भी प्रश्न है कि "शिवराज-भूषण" कब समाप्त हुआ। छंद नं० ३८० मे भूषणजी ने संवत् १७३० बुध सुदि १३ को इसका समाप्त होना लिखा है। हमारी प्रार्थना पर महामहोपाध्याय श्री पंडित सुधाकरजी

ने १७३० का पूर्ण पंचांग बनाकर हमारे पास भेज दिया था जिसके लिये हम उनके अत्यंत कृतज्ञ हैं। इससे विदित होता है कि श्रावण और कार्तिक मास मे शुक्ला त्रयोदशी बुधवार को उक्त संवत् मे पड़ी थी। कार्तिक में १४ दंड ५५ पल वह तिथि बुध के दिन थी और श्रावण मे ३६ दंड ४० पल। जान पड़ता है कि कार्तिक मास मे ग्रंथ समाप्त हुआ था, क्योकि कुआर कार्तिक तक की घटनाएँ उसमे कथित है।

श्रीशिवाबावनी

जैसा कि हम ऊपर लिख चुके है, यह कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं, अथच भूषण के बावन छंदो का संग्रह मात्र है। मुद्रित प्रतियो मे शिवराज-भूषण के छंद नं० २ और ५६ एवं स्फुट काव्य के छद नं० २, ४, ७ और ८ भी इसी ग्रंथ मे समिलित है; परंतु हमने प्रथम दो को अन्य ग्रंथ के छंद होने के कारण और शेष चार को अन्य पुरुषो की प्रशंसा के छंद होने के कारण शिवाबावनी से निकाल दिया। इसमें तो शिवाजी ही की प्रशंसा के छंद होने चाहिएँ; परंतु इन चारो में सुलकी, अवधूत-सिह, साहूजी और शंभाजी का यश वर्णित है। इस ग्रंथ का संग्रह होने के कारण हमने ऐसा करने मे कोई दूषण भी नहीं समझा। हमने वर्तमान ग्रंथ के छंद नं० १, २८, ३१, ३८, ४०, ४१ और ५० स्फुट कविता से निकालकर इस ग्रंथ मे रख दिए है। इनमें से छंद नं० ३८ व ४० को छोड़कर शेप कवि गोविद गिल्लाभाई की प्रति से मिले है।

शिवाबावनी की मुद्रित प्रतियों मे कोई क्रम नहीं था, अतः हमने ऐतिहासिक घटनाओं तथा साहित्यिक कथनों के विचार से पूर्वापर के अनुसार इसे क्रमबद्ध कर दिया है। इसमें बहुत सा वर्णन शिवराज के अभिषेकानंतर का है। यह समय ऐसा था कि जब शिवाजी बीजापुर तथा गोलकुंडा को भलीभाँति पददलित कर चुके थे और ये दोनो

राज्य उनके प्रभुत्व को स्वीकार करके ५ लाख तथा ३ लाख रुपए वार्षिक कर उन्हें देने लगे थे। इसी कारण इस ग्रंथ मे इन दोनों बादशाहियों का स्वल्प रूप से कथन हुआ है और मुख्यांश में शिवाजी के दिल्ली से झगड़े का वर्णन है।

इस ग्रंथ के छंदो के स्वतंत्रतापूर्वक निर्मित होने के कारण इसमे प्राबल्य और गौरव विशेष आए है, और रसों के पूर्ण उदाहरण भी बहुत पाए जाते हैं; परंतु यहाँ भी भयानक रस का प्राधान्य है। रौद्र रस के छंद भी यत्र तत्र दृष्टिगोचर होते हैं, तथापि इसमे शुद्ध वीर रस के दो ही चार छंद है। इसमें भूषण ने शत्रुओ की दुर्गति का बड़ा सुंदर चित्र खींचा है और शिवराज के प्रताप और आतंक के वर्णन भी बड़े ही विशद हैं।

यह छोटा सा ग्रंथ बड़ा ही मनोहर है और इसके छंद कहीं कहीं शिवराजभूषण के छंदो से भी अधिक प्रभावोत्पादक हैं। इसकी जहाँ तक प्रशंसा की जाय, थोड़ी है।

बावनी मे कही हुई घटनाओ का चक्र इतिहासानुसार नीचे लिखा जाता है—

किस सन् की घटना	छंद नबर
१६५५	३०
१६५८	१४, १५
१६५९	२७, ३०, ३३
१६६३	२८
१६६६	१६, १७
१६६९	२०, २२
१६७०	२७

१६७२	२५, १६
१६७४	३४ (अभिषेक)
१६७५	३६
१६७७	३२, ४४, ४५

शिवाबावनी के विषय मे बहुत लोगो का यह भी मत है कि जब भूषण पहले पहल शिवाजी के पास गए और उन्हें "इंद्र जिमि जंभ" वाला छंद सुनाया, तब परम प्रसन्न होकर उन्होने कहा—"फिर कहो" (शि० भू० छं० नं० ५६)। इस पर भूषण ने एक अन्य छंद पढ़ा। पुनः "और कहो" की आज्ञा पाकर एक और छंद सुनाया। इसी प्रकार एक एक करके ५२ बार ५२ छंद पढ़ कर वे थक गए। वही ५२ छंद शिवाबावनी के नाम से प्रसिद्ध हुए। यह मत किसी अंश मे शुद्ध नहीं है; कारण यह कि इस ग्रंथ में करनाटक की चढ़ाई का भी वर्णन है जो सन् १६७६–७८ ई० मे हुई थी। अतः इस मतानुसार यह सिद्ध होता है कि भूषण पहले पहल शिवाजी के यहाँ सन् १६७८ के पश्चात् गए थे; परंतु ये स्वयं लिखते है कि इन्होने संवत् १७३० (अर्थात् सन् १६७३ ईसवी) मे शिवराजभूषण ग्रंथ समाप्त किया। फिर इस बावनी मे एक छंद सुलंकी ("हृदयराम सुत रुद्र") और एक अवधूतसिह की प्रशंसा मे लिखा था जिससे प्रत्यक्ष प्रतीत होता है कि वह शिवाजी को ग्रंथरूप में कदापि नहीं सुनाई गई। इसके स्वतंत्र ग्रंथ होने के विरुद्ध यह भी प्रमाण है कि इसका वंदनावाला छंद ही शिवराजभूषण से लिया गया था, एवं दो एक और भी छंद ऐसे ही थे। इसमे आद्योपांत कोई प्रबंध भी नहीं है, और न किसी ने इसे स्वतंत्र ग्रंथ कहा ही है। यह उत्कृष्ट ग्रंथ है और हिंदी में इसके जोड़ के बहुत ग्रंथ न मिलेगे।

छत्रसाल-दशक

जान पड़ता है कि भूषण महाराज ने छत्रसाल के विषय में बहुत

से छंद बनाए थे; क्योंकि उन्होंने सन् १६८० से सन् १७०५ तक सिवाय छत्रसाल के और किसी का अधिकता से यश वर्णन नहीं किया। उन्हीं छंदों में से आठ घनाक्षरी और दो दोहे इस ग्रंथ मे रक्खे गए हैं; और दो घनाक्षरी बूँदी नरेश महाराज छत्रसाल हाड़ा विषयक इसमे है। इसकी मुद्रित प्रतियों में राव राजा बुद्धसिंह विषयक एक छंद भी था जो अब हमने स्फुट काव्य के तीसरे नंबर पर रख दिया है। उसके स्थान पर छंद नंबर ९ इसमें स्फुट कविता से लाकर हमने रक्खा है।

इस ग्रंथ का भी क्रम हमने इतिहास के विचार से पूर्वापर क्रमानुसार कर दिया है। बूँदी नरेश के दोनों छंद प्रथम रख देने का कारण भी स्पष्ट है। यद्यपि वे सन् १७१० के लगभग बनाए गए थे, तथापि उनमे घटना सन् १६५८ की वर्णित है। तृतीय छंद हमारे अनुमान में सन् १६७५ में बनाया गया था और उसी सन् मे चतुर्थ और पंचम छंद बने (बुंदेलों के इतिहास संबंधी भूमिकांश देखिए)। छंद नं० ६ सन् १६९० एवं नंबर सात १७०० की घटनाओं से संबंध रखता है। छंद नंबर आठ और नौ संभवतः सन् १७०८ मे बने और नंबर दस सन् १७११ के लगभग बना।

इस ग्रंथ के छंद भूषण की कविता मे सर्वोत्कृष्ट है, और एक भी छंद सिवा उत्तम के मध्यम श्रेणी तक का इसमें नहीं है। भूषण ने शिवराज और छत्रसाल सरीखे भारतमुखोज्वलकारी युगल मित्रो का वर्णन करके देशवासियों और हिंदी रसिकों का बड़ा उपकार किया है। यह बात प्रसिद्ध है कि भूषणजी जब महाराज शिवराज के यहाँ से संमानित हो छत्रसाल के यहाँ पधारे, तो इन्होंने कविजी का बहुत आदर सत्कार किया और चलते समय यह कह कर कि "अब हम आपको क्या बिदाई दे सकते है!" उनकी पालकी का डंडा स्वयं अपने कंधे पर रख लिया! तब भूषणजी अत्यंत प्रसन्न हो चट पालकी से कूद पड़े और "बस महाराज! बस" कहते हुए उनकी प्रशंसासूचक कविता

तत्काल बना चले। वे ही कवित्त छत्रसाल-दशक के नाम से प्रसिद्ध हुए; परंतु जान पड़ता है कि भूषणजी ने इस समय कोई और ही छंद बनाए होंगे। इस ग्रंथ के छंद किसी ग्रंथ रूप मे नहीं बने क्योंकि न तो इनमें वंदना है, न सन् संवत् का ब्योरा और न कोई क्रम विशेष, वरन् ये स्फुट कवित्त मात्र हैं और बाद को लोगो ने इन छंदों में भूषणकृत छत्रसाल विषयक दो एक और छंद मिलाकर "छत्रसाल दशक" नामक १०–१२ छंदों का "ग्रंथ" पूरा कर दिया, क्योंकि इसमे छत्रसालजी बूँदी नरेश के भी दो छंद है, जिनको छत्रसाल बुंदेला के ग्रंथ में न होना चाहिए था। यह छोटा सा ग्रंथ ओज-प्राबल्य मे एकदम अद्वितीय है।

स्फुट काव्य

इसमें भूषण के ५४ छंद (जो हमे मिले) लिखे गए हैं। इसमें कोई ऐतिहासिक क्रम नहीं रक्खा गया है; क्योंकि प्रथम नंबर पर शिवाजी की प्रशंसा का छंद रखना हमे भला मालूम पड़ा।

इन छंदों के विषय में विशेष हमे कुछ वक्तव्य नहीं है। जैसे प्रभावपूरित भूषणजी के और छंद हुआ करते है, वसे ही ये भी हैं। स्फुट काव्य के संबंध मे हमे केवल निम्नलिखित छंद पर विचार करना है—

मालती सवैया

"बालपने में तहौवरखान को सैन समेत अँचै गयो भाई।
ज्वानी में रुंडी औ खुंडी हने त्यों समुद्र अँचै कछु बार न लाई॥
बैस बुढ़ापे कि भूँख बढ़ी गयो बंगस बंस समेत चबाई।
खाये मलिच्छन के छोकरा पै तबौ डोकरा को डकार न आई॥"

यह छंद मुद्रित प्रतियों में भूषण के स्फुट छंदों में लिखा हुआ है। इसमें छत्रसाल का वर्णन है; क्योकि तहौवरखाँ, समुद्र (अब्दुस्सम्मद) और बंगश से वे ही तीस वर्ष, चालीस वर्ष और उन्नासी वर्ष की

अवस्थाओ मे क्रमश लडे थे। बगश का युद्ध सन् १७२९ मे हुआ था, सो यदि यह छद भूषणकृत माने तो उनकी पूरी अवस्था ६४ साल से कम नहीं मान सकते। अत हमे कुछ सदेह है कि यह छद भूषणकृत नहीं है। भूषणजी छत्रसाल से कई साल बड़े थे। वे बुँदेला महाराज को "डोकरा" कभी न कहते। यह छंद किसी छोटी अवस्था के कवि ने बनाया होगा। इसमे भूषण का नाम भी नहीं है।

भूषण की कविता का परिचय

हम भूषण महाशय के चारो ग्रथो के विषय मे अलग अलग अपने विचार प्रकट कर चुके। अब चारो ग्रथ मिला कर इनकी समस्त रचना पर जो कुछ विशेष कथनीय है, वह नीचे लिखा जाता है।

भाषा—इनकी भाषा विशेषतया ब्रजभाषा है, जैसी कि उस समय के प्राय सभी कवियो की थी। जान पडता है कि उस समय के कुछ महाराष्ट्रवासी भी हिदी भाषा को भली भाँति समझते थे, नहीं तो भूषण की कविता का ऐसा आदर शिवाजी की सभा मे कैसे होता? युद्धकाव्य लिखने के कारण भूषणजी को ब्रजभाषा के साथ प्राकृत मिश्रित भाषा भी लिखनी पडी है, तथापि इन्होने उस समय के अन्य युद्ध-काव्य रचयिताओ से बहुत कम इस भाषा का प्रयोग किया है। यह भूषण के कवित्व-शक्ति-सपन्न होने का प्रमाण है। वीर कविता मे अन्य कवियो को प्राकृत भाषा का अधिक प्रयोग करना पडा है। फिर अन्य कवियो की युद्ध कविता मे माधुर्य्य और प्रसाद गुणो की बडी न्यूनता रहती है, परतु भूषण महाशय इन गुणो को भी अपनी कविता मे बहुतायत से ला सके है।

प्राकृतवत् भाषा और ब्रजभाषा के अतिरिक्त भूषण ने कहीं कहीं बुदेलखडी तथा खडी बोली का भी प्रयोग किया है।

प्राकृतवत् भाषा के उदाहरणार्थ शि० भू० छंद न० १४७ और खडी बोली के उदाहरणार्थ न० १६१ तथा २०६ देखिए।

भूषणजी ने अपनी कविता मे यत्र तत्र फारसी के असाधारण शब्द रक्खे हैं, यथा— जाबता करन हारें व तुजुक (शि० भू० नं० ३८), दरियाव (शि० भू० नं० १०८), गाजी, जशन, तुजुक व इलाम (शि० भू० नं० १९८), मुहीम (शि० भू० नं० १८०), बेइलाज (शि० भू० नं० २७९), गुस्लखाना, सिलहखाना, हरमखाना, शुतुरखाना, करंजखाना व खिलवतखाना (शि० भू० नं० ३६१) इत्यादि। इससे विदित होता है कि भूषणजी फारसी भी जानते थे; परंतु अच्छी तरह नहीं, क्योंकि उपर्युक्त उदाहरणों मे इन्होने जाबता करन हारे, इलाम तथा बेइलाज का प्रयोग बेमहाविरे किया है। उपर्युक्त उदाहरणो के अतिरिक्त निम्न-लिखित छंदो मे फारसी के असाधारण शब्द आए हैं। इनमे कई स्थानों पर शब्दो का अशुद्ध प्रयोग है:—शिवराज-भूषण छंद नंबर ३४, १०३, ११४, १५९, २०९, २४२, २५८, २८३, २९९, ३१५, ३६०, शिवाबावनी छंद नंबर २, ६, १०, १४, १७, २०, २१, २२, २३, २९, ३०, ३३, ३४, ४०, ४१, छत्रसाल-दशक, छंद नंबर १०।

भूषणजी ने कहीं कहीं असाधारण एवं विकृत रूप के शब्द भी लिखे है; यथा—छिया (१०), कुरुख (३४), कहाव (५१), जोब (५२, १४२, १९८), धरबी (१५५ बुंदेलखंडी भाषा), छंद नंबर ३५४, ३५५, ३५६, ३५७ का बृहद्दंश, खोम (३६०), जंपत (१५), चकत्ता, खुमान, अमाल (७३), गारो (१८६), ऐल (शिवा बा० नं० २), बप (शि० बा० नं० १५), इत्यादि।

उपर्युक्त उदाहरणों में जहाँ केवल अंक लिखे हैं और ग्रंथ का नाम नहीं लिखा है, वहाँ शिवराजभूषण वाले छंदों के नंबर समझने चाहिएँ। इतने ग्रंथ और विशेष करके युद्ध वर्णन में यदि उन्होंने इतने अथवा कुछ और शब्दों का अव्यवहृत एवं विकृत रूप में समावेश किया, तो आश्चर्य की बात नहीं है, वरन् आश्चर्य तो यह है कि भूषण ने इतने कम शब्द मरोड़ कर अपना काम कैसे चला लिया।

यदि इस कवि के कुल शब्द गिने जायँ तो अन्य अनेक ग्रंथ रचनेवालो की अपेक्षा इसका शब्द समूह बड़ा ठहरेगा। अंगरेजी के सुप्रसिद्ध कवि शेक्सपियर ने इंगलैंड के हर एक कवि से अधिक शब्दों का प्रयोग किया है और यह उसकी कविता का एक बड़ा गुण समझा जाता है। यही गुण भूषण मे भी विद्यमान है। इनकी कविता मे अनुप्रास यद्यपि बहुतायत से आए है, तथापि वीरताप्रधान ग्रंथो के रचयिता होने के कारण इन पर कोई दोषारोपण नहीं कर सकता। फिर इन्होंने पद्माकरजी की भाँति अनुप्रास एवं यमक का स्वाँग भी नहीं बनाया है। उदाहरण ये है— शिवराजभूषण मे छंद नंबर १, ३८ ४२, ४८, ५६, ६८, ७३, ७७, ८३, १०१, ११०, १३०, १३३, १३४, १६१, १६२, १६६, १८९, २१५, २२६, २४७, २५४, २६६, ३३६, ३४०, ३५१, ३५४, से ३५९ तक, ३६०, ३६१, ३६४, शिवाबावनी मे छंद नंबर २, ३, ६, ८, २६, ३७, ३८, ४०, ४२, ४३, ४५, ४८, छत्रसालदशक के छंद नंबर १, ३, ४, ८।

भूषणजी ने कुल मिलाकर दस प्रकार के छंद लिखे है जिनके नाम नीचे लिखे जाते हैं। शिवराज भूषण के जिस नंबर के छंद के नोट मे छंद विशेष का लक्षण दिया है, उसका ब्योरा ब्रैकेट मे यहाँ लिख दिया गया है।

छंदों के नाम ये हैं

मनहरण (१), छप्पय (२), दोहा (३), मालती सवैया (१५), हरिगीतिका (१६), लीलावती (१३६), किरीटी सवैया (३२०), अमृतध्वनि (३५४), माधवी सवैया (३६८), और गीतिका (३७१)। भूषण ने अपने ग्रंथो का मुख्यांश मालती सवैया और मनहरण मे लिखा है। अलंकारो के लक्षण ये दोहे मे लिखते थे। छप्पय भी कुछ अधिकता से पाए जाते है। शेष छंदो का प्रयोग बहुत कम हुआ है। उस समय

के कवियों मे इसी प्रकार के छंद लिखने का कुछ नियम सा पड़ गया था, जो प्राचीन प्रणाली के कवियो में आज तक चला आता है।

भूषणजी पदांत में विश्राम चिह्न रहित छंद बहुत कम लिखते थे; परंतु शि० भू० के छंद नंबर ३४९, ३६३ में ऐसा हुआ है। इसी को अँगरेजी मे Run-on-line कहते हैं। भूषण की कविता में विश्राम चिह्नों पर विशेष ध्यान देना चाहिए। कोई कोई छंद ऐसे है कि जिनमें विश्रामो पर ध्यान न देने से अर्थ मे गड़बड़ पड़ सकती है। उदाहरण, शिवराजभूषण छंद नंबर १, ३, ४०, ४८, ८१, १०७, २४७, ३०९, ३६६, ३८१ इत्यादि। कुल बातों पर ध्यान देने से विदित होता है कि भूषण की भाषा तथा शब्दयोजना की रीति बहुत ही प्रशंसनीय है।

भूषण महाराज ने विषय और विशेषतया नायक चुनने में बड़ी बुद्धिमत्ता से काम लिया है। शिवाजी और छत्रसाल से महानुभावों के पवित्र चरित्रों का वर्णन करनेवाले की जहाँ तक प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। शिवाजी ने एक जिमींदार और बीजापुराधीश के नौकर के पुत्र होकर चक्रवर्ती राज्य स्थापित करने की इच्छा को पूर्ण सा कर दिखाया और छत्रसाल बुंदेला ने जिस समय मुगलो का सामना करने का साहस किया था, उस समय उनके पास केवल पाँच सवार और पचीस पैदल थे। इसी "सेना" से इस महानुभाव ने दिल्ली का सामना करने की हिम्मत की और मरते समय अपने उत्तराधिकारियों के लिये दो करोड़ वार्षिक मुनाफे का स्वतंत्र राज्य छोड़ा।

भूषण महाराज अन्य कवियों की भाँति ऐसे छंद कम बनाते थे जो केवल नायक का नाम बदल देने से किसी की प्रशंसा के हो सकते हों। इनकी कविता में सहस्रों घटनाओं का समावेश है। हर स्थान पर इन्होंने कितने ही ऐतिहासिक व्यक्तियो और स्थानो का वर्णन छंदो में किया है। इतने लोगों के नाम काव्य मे ये महाशय लाए हैं कि कितने ही के विषय में अनेक भारी भारी ऐतिहासिक ग्रंथ ढूँढ़ने पर भी किसी तरह

का पता लगाए नहीं लगता। मनुष्यों के नाम लिखने मे प्रायः उनके पिता का नाम, जाति और वासस्थान का भी पता भूषणजी लिख दिया करते थे। आपने प्रबंधध्वनि (Allusions) भी बहुत रक्खी है।

ऐतिहासिक घटनाएँ लिखने के साथ ही साथ आपकी सत्यप्रियता भी विशेष सराहनीय है। यद्यपि शिवाजी ने इन्हें लाखों रुपये दिए, तथापि इन्होंने उनके हारने तक का वर्णन किसी न किसी प्रकार कर ही दिया; और जो बातें उनकी सत्यता एवं महत्व के प्रतिकूल थीं, उन्हें भी कह दिया है (शि० भू० छंद नं० २१२, २१३, देखिए)। इसी प्रकार जब ये महाशय छत्रसाल के यहाँ बैठे थे, तब भी इन्होंने कहा कि "साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को"। इनके चित्त में साहू का ख्याल अधिक था और छत्रसाल का उनके बाद। इस विचार को इन्होंने स्वयं छत्रसाल तक पर प्रकट करने में संकोच नहीं किया। कमाऊँ महाराज के यहाँ भी अपनी अप्रसन्नता प्रकट कर दी। इसको स्वतंत्रता भी कह सकते हैं; परंतु सत्यप्रियता का भी इन बातों मे बहुत कुछ अंश है। इन्होने शिवाजी के शत्रुओ को उनसे मेल करने की बहुत सलाह दी है। शि० भू० नंबर १५०, २६१, २७६, २७९, ३१२ तथा शि० बा० नं० ३१ देखिए।

भूषण महाराज ने घटनाओं के साथ कभी कभी खयाली अथवा भड़कीला वर्णन कर दिया है; पर ऐसी बातों को उन्होने सत्य बातों की भाँति नहीं कहा है और न उन्हें असत्य प्रमाणित करके उनकी सत्य-प्रियता के प्रतिकूल कुछ कहना ही चाहा है। वे केवल कविता का चमत्कार दिखाने और शत्रुओ का उपहास करने के निमित्त कही गई है। उदाहरण—शिवराजभूषण के छंद नंबर ८९, ९०, ९३, ९४, ९६, १०५, २०९, २२८, २६३, २७०, २७६, ३२३, ३२४, व शिवाबावनी के छंद नं० १३, २९, ४१।

भूषणजी ने शिवाबावनी के छंद नंबर १२ में अमीर औरतों के

विषय मे कहा है कि "किसमिस जिनको अहार" एवं "नासपाती खातीं ते बनासपाती खाती है"। नासपाती अथवा किसमिस का आहार कोई बड़ी बात नहीं है। या तो भूषण ने ये बातें मजाक मे कही है या उस समय नासपाती और किसमिस बहुमूल्य और अमीरपसंद वस्तुएँ होंगी।

भूषणजी ने कई जगह "गुसलखाना" का वर्णन किया है (शि० भू० नं० ३४, ७९, २०४, २०९, २६५, व शि० बा० नं० १६ देखिए) परंतु साफ साफ कहीं नहीं कहा कि गुसलखाने मे क्या हुआ। यह भी कई जगह कहा गया है कि दरबार में जाकर शिवाजी ने औरंगजेब को सलाम नहीं किया (शि० भू० नं० १८६, १९८, ३०९ शि० बा० छंद नंबर १६)। एक उपन्यास मे हमने यह देखा है कि औरंगजेब ने जब सुना कि शिवाजी का इरादा उसे सलाम करने का नहीं है, तो उसने फाटक मे आराइश के कई सामान लगा कर उसे ऐसा छोटा कर दिया कि बिना सर झुकाये कोई मनुष्य उसके भीतर घुस न सके। इस पर शिवाजी ने तनकर अपना छाता इतना बाहर निकाल दिया कि सिर शेष देह के पीछे हो गया। तब उसने पहले अपना पैर अंदर रख के कुल देह अंदर निकाल कर तब सर फाटक के भीतर किया जिससे कि उसे सिर झुकाना नहीं पड़ा। टॉड राजस्थान मे लिखा है कि सिरोही के महाराज ने लगभग सन् १६८० ई० मे औरंगजेब के ही राजत्व काल में बिलकुल ऐसा ही किया। इससे विदित होता है कि उस समय भी दरबार में जाकर अकड़ के कारण सलाम न करना संभव था। इसी प्रकार मारवाड़ के प्रसिद्ध अमरसिह ने शाहजहाँ के सामने उसके मुसाहब सलाबतखाँ को दरबार ही में मार डाला था। तब शाहजहाँ मारे डर के जनाने मे भाग गया था। अतः शिवाजी ने सलाम न किया हो तो कोई आश्चर्य्य नहीं। फिर भी तकाखव तक मे सलाम किया जाना लिखा है। भूषणजी जब अपने नायक की ख्याति बढ़ाने को कोई असंभव अथवा असत्य बात कहते थे, तो उसे एकाध बार दबी जबान

कहकर छोड़ देते थे (शि० भू० नं० ६२) और बार बार बड़ा जोर देकर नहीं कहते थे। फारस के अब्बास शाह से शिवाजी से कभी लड़ाई नहीं हुई; अतः एक बार कहकर फिर भूषण ने उसका नाम भी न लिया; परंतु इस गुसलखाने के विषय में कई छंद बड़े जोर के कहे हैं और यही हालत सलाम की है। इतिहास भी इन बातों का बहुत कुछ समर्थन करता है। भूषण के कथन में केवल एक स्थान पर इतिहास से प्रतिकूलता पाई जाती है और वह यह है कि इतिहासों ने शिवाजी को भवानी का भक्त माना है और भूषण ने शिव का (शि० भू० नं० १४, १५८, २३६, ३२६, देखिये)। इसके विषय में एक बहुत बड़ा आश्चर्य यह होता है कि भूषणजी स्वयं भवानी के भक्त थे (शि० भू० नं० २ देखिए) और कहा जाता है कि उनके पिता के चार पुत्र भवानी ही की कृपा से हुए थे। तब यदि शिवाजी भी भवानी के भक्त होते तो भूषण ऐसा क्यों न कहते (भूषण ने शिवाजी को सिवा शिव के और किसी का भक्त नहीं बताया है। इधर कई इतिहासो के अतिरिक्त स्वयं रानड़े महोदय ने उन्हें भवानी का भक्त कहा है। हमारे अनुमान में भूषण ने किसी गुप्त कारण से (जैसे शिवाजी की आज्ञा से) अपनी कविता में भवानी का वर्णन नहीं किया। शिवाजी भवानी और शिव दोनों के भक्त थे।

भूषण ने शिवाजी की और बड़ाइयों में उन्हें अवतार भी माना है (शि० भू० नं० ११, १२, ७५, ८७, १०४, १४२, १६६, २२८, २६५, ३१३, ३४८, ३८१, देखिए)। यों तो प्रत्येक मनुष्य मे आत्मा परमेश्वर का अंश है, और इसलिये हर आदमी अवतार कहा जा सकता है; परंतु भूषण ने शिवाजी को कई बार हरि का अवतार कहा है। ऐसा करने मे भूषण ने ठकुरसोहाती को सीमा के पार पहुँचा दिया। शि० भू० नं० ३२६ में शिवराज का बहुत ही यथार्थ वर्णन पाया जाता है।

इनकी कविता की उद्दंडता दर्शनीय है। इन्होंने शिवाजी की

चढ़ाइयो का बड़ा उद्दंड एवं शत्रुओ पर उनके प्रभाव का बड़ा भयानक वर्णन किया है ।

उत्तम छंद

भूषणजी की कविता मे बहुत से उत्तम छंद है। हम उनके परमोत्कृष्ट छंदों की एक सूची नीचे देते है। इनमे से कई छंदो मे उद्दंडता भी पाई जायगी। शिवराजभूषण के उत्तम छंद १६ से २३ तक, ३५, ३७, ३८, ४२, ४८, ५६, ६८, ८७, ९७, ९९, १००, १२३, १२५, १३०, १३४, १५०, १७१, १७६, १८२, १८६, २००, २०६, २०७, २२६, २४५, २४७, २५२, २५४, २५८, २७५, २८८, २९०, २९३, २९५, ३०१, ३०५, ३०७, ३१०, ३२६, ३२८, ३३१, ३३२, ३३४, ३४८, ३५०, ३६०, ३६१, ३७० । शिवा-बावनी के छंद २, ३, ६, १७, २३, २४, २६, २७, ३२, ३५, ३७, ३८, ३९, ४०, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५०, ५१ । छत्रसाल दशक के छंद १ से १० तक सभी ।

स्फुट काव्य के छंद २, ८, १४, १६, १७, १८, १९, २०, २२, २३, २८, २९, ३४, ३५, ४४, ४६, ४८ ।

जातीयता

भूषण महाराज को जातीयता का सदैव बड़ा ध्यान रहता था (शि० भू० नं० १०, १२, ६१, ६९, ७३, १३०, १४३, १४६, २३६, २४५, २५८, २७५, २९३, ३३६, ३३७। शि० बा० नं० २०, २१, २२, २५, ४८, ५१, ५२। छत्र० दशक नं० ६ स्फुट नं० २१)। इनके जातीयता विषयक इतने छंद होते हुए भी किसी ने शि० बा० छंद नं० ४६ मे "हिंदुवानो हिंदुन को हियो हहरत है" लिख दिया था। भूषण की लेखनी से ऐसे घृणित शब्द निकलने से "रुहिलाने रुहिलन हियो हहरत है" यथार्थ समझ पड़ता है। भूषण जी पूरे जातीय (National) कवि थे और टेनिसन की भाँति इन्हें भी प्रतिनिधि कवि (Representative

poet) कहना चाहिए। जातीयता, जातिगौरव और हिंदूपने का जितना इन्हें ध्यान रहता था, उतना हिंदी के अधिकांश कवियों को नहीं था। इसका एक भारी प्रमाण यह भी है कि इन्होंने छत्रसाल बुँदेला के सुप्रसिद्ध पिता चंपतिराय पर (जिन्होंने कुछ दिनों के लिये औरंगजेब की सेवा स्वीकार कर ली थी) एक भी कवित्त नहीं बनाया, पर उनके प्रतिद्वंद्वी छत्रसाल हाड़ा पर दो कवित्त कहे है; क्योंकि हाड़ा महाराज औरंगजेब से लड़े थे। औरंगजेब से भूषणजी इस कारण विशेष नाराज थे कि वह हिंदुओं को सताता था।

यद्यपि वर्त्तमान समय की दृष्टि से इस कवि की मुसलमानों के प्रति कटूक्तियाँ अनुचित एवं विषगर्भित ज्ञात होती है, तथापि हम लोगों को इनकी कविता को इस दृष्टि से न जाँचना चाहिए। उस समय औरंगजेब के अधम बर्ताव के कारण हिंदू मुसलमानों मे मूषक मार्जार की भाँति स्वाभाविक शत्रुता थी। अतः इन्होने चाहे जो कुछ कहा, उस समय वह अनुचित न था। फिर उस काल मे शत्रुओ के विषय मे परम कटु शब्द कहने की कुछ रीति सी पड़ गई थी, यहाँ तक कि मुसलमान इतिहास-कार शिवाजी एवं मुसलमानो के अन्य शत्रुओ के विषय मे साधारणतः यों लिखा करते थे कि "वह कुत्ता खाँ साहब से पूना में लड़ा", "उस कुत्ते ने" अमुक स्थान पर अमुक खाँ साहब से लड़कर पराजय पाई। "उस कुत्ते ने" फलाँ साहब सूबा को बड़ी बहादुरी से लड़ कर पराजित किया। मुसलमान इतिहास-लेखकों ने एक महारानी तक के विषय में लिखा है कि "उस स्थान के कुल कुत्ते उस कुतिया पर बड़ी भक्ति रखते थे"। इस प्रकार के वर्णन ईलियट-कृत मुसलमान समय के इतिहास के मुसलमानी इतिहासों के उल्थाओ में प्रायः पाए जायेंगे। जब उस काल के इतिहास लेखक ऐसे सभ्य थे, तब कवियों से कोई कहाँ तक आशा कर सकता है? भूषणजी की कविता में जहाँ देखिए, शिवाजी की विजयो से हिंदुओं का

प्रभुत्व बढ़ता देख पड़ता है। जिन दो एक हिंदुओ से शिवाजी का युद्ध भी हुआ, उनके विषय मे इन्होने यही कहा कि "हिंदु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौं कोउ टूटै"। शिवाजी ने राजा जयसिंह से युद्ध न करके अपनी हार मान ली और उन्हें अपने कुछ गढ़ दिए; परंतु युद्ध करके हिंदू खून नहीं बहाया। इस पर यद्यपि शिवाजी की पराजय हुई, तथापि भूषण की राय मे उसका यश वर्द्धित हुआ।

"तैं जयसिंहहि गढ़ दिये शिव सरजा जस हेत"।

फिर यद्यपि शाहजी मुसलमानो के नौकर थे, तथापि इन्होंने उनके राजपद की प्रशंसा न करके उन्हें—

"साहस अपार हिंदुवान को अधार धीर सकल सिसौदिया सपूत कुल को दिया" (शि० भू० नं० १०) कहा है। नौकरी के विषय में केवल इतना इशारा है कि "शाहि निजाम सखा भयो"।

इनके नायक छत्रसाल थे, तथापि इन्होंने उनके पिता चंपतिराय पर एक भी छंद न बनाया, क्योंकि वे धौलपुर मे औरंगजेब की ओर से लड़े थे जो हिंदुओं का घोर शत्रु था। उसी युद्ध में छत्रसाल हाड़ा यद्यपि चंपति के प्रतिकूल लड़े थे, तो भी इन्होंने चंपति की प्रशंसा न करके छत्र-साल हाड़ा की प्रशंसा की; क्योंकि वे महाराज हिंदुओं के शत्रु (औरंगजेब) के प्रतिकूल लड़े थे। वास्तव मे भूषण की कविता के नायक हिंदू हैं। जो मनुष्य हिंदुओं के पक्ष मे लड़ता था, उसी का भूषण ने वर्णन किया है, चाहे वह शिवराज हो या छत्रसाल या रावबुद्ध या अवधूत-सिंह या शंभाजी या साहूजी। इनको जातीयता का ऐसा ध्यान था कि इन्होंने शिवाजी के हिंदू शत्रु उदयभानु आदि तक का प्रभावपूरित वर्णन किया है, यद्यपि वह मुसलमान हो चुका था।

परिणाम

इन महाशय की कविता में कोई कहने योग्य दोष नहीं है। भाषा

कवियों मे इनका स्थान बहुत ऊँचा है और इनकी भाँति समान कविता से किसी का नहीं हुआ। वास्तव मे युद्धकाव्य करने मे इन्होने बडी ही कृतकार्य्यता पाई है। युद्ध का ऐसा उत्तम वर्णन किसी कवि ने नहीं किया।

भूषण के विषय मे शिवसिह सेगर का मत यह है—"रौद्र, वीर, भयानक ये तीनो रस जैसे इनके काव्य में है, ऐसे और कवि लोगों की कविता मे नहीं पाये जाते"—(इन्होने)"ऐसे ऐसे शिवराज के कवित्त बनाये हैं जिनके बराबर किसी कवि ने वीर यश नही बना पाया।" इनकी युद्ध कविता के विषय मे इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इन्होने सर वाल्टर स्काट की भाँति किसी युद्ध का पूरा वर्णन नहीं किया। स्यात् इनका ध्यान इस ओर कभी आकृष्ट नही हुआ, नही तो जब ये महाराज शिवराज के साथ रहा करते थे और कितने ही युद्ध इन्होने अपने नेत्रो से देखे होगे, तब उनका वर्णन करना इन जैसे बडे कवि के लिये कितनी वात थी! यह हिदी साहित्य का दुर्भाग्य था कि इन महाशय न इस ओर ध्यान नही दिया। आज कल कतिपय महाराष्ट्र महानुभाव हिदी की अच्छी सेवा कर रहे है, सो मानो उनके उत्साह वर्द्धनार्थ भूषण ने पहले ही से हिदी मे महाराष्ट्र-कुल-चूड़ामणि महाराज शिवाजी का यश वर्णन कर रक्खा है। जैसे अपने नायको की प्रशसा मे भूषण ने केवल कोरी बडाई न करके सत्य घटनाओ का वर्णन किया है, वैसे ही यदि अन्य कविगण भी करते तो हिदुओ की ओर से भी भारतवर्ष का यथार्थ इतिहास लिखने मे कोई कठिनाई न पडती। इस कवि की नरकाव्य करने मे कुछ ऐसी हथौटी सी बँध गई थी कि जिसका यह यश वर्णन करता था, उसका रोम रोम प्रफुल्लित हो जाता था। इसी कारण इनका हर जगह असाधारण सत्कार होता था।

सब मिला कर निष्कर्ष यह निकलता है कि भूषण महाराज का

काव्य वास्तव मे हिंदी साहित्य का भूषण है। स्थिर लक्षणानुसार चाहे इनकी कविता को कोई महा-काव्य संस्कृत रीति ग्रंथों मे न कह सके; परंतु तो भी इन्हें हम बिना महाकवि कहे नहीं रह सकते।

हमारा ग्रंथ-संपादन

भूषणजी की इस ग्रथावली के संपादन करने मे हमने निम्नलिखित पुस्तकों से विशेष सहायता ली है—

(१) भूषण ग्रंथावली, बंगवासी प्रेस, कलकत्ता।
(२) शिवराजभूषण, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ।
(३) " " पूनावाली प्रति।
(४) " " निर्णयसागर प्रेस, बम्बई।
(५) श्री शिवाबावनी व छत्रसालदशाक (व स्फुट कविता) श्री कल्पतरु प्रेस, बम्बई।
(६) शिवराजभूषण. बाराबंकी में मुद्रित।
(७) " " हस्तलिखित स्वर्गीय पं० युगलकिशोर जी मिश्र के पुस्तकालय गंधौली (सीतापुर) की प्रति।
(८) " " हस्तलिखित स्वर्गीय कवि गोविंद गिल्ला-भाई जी काठियावाड़ के पुस्तकालय की।
(९) ग्रैंट डफ कृत महाराष्ट्र जाति का इतिहास।
(१०) रानड़े महोदय-कृत महाराष्ट्र शक्ति का अभ्युदय।
(११) टॉड-कृत राजस्थान।
(१२) शिवसिंह-सरोज।
(१३) बुंदेलखंड गजेटियर।
(१४) ईलियट-कृत मुसलमानो के समय का इतिहास।
(१५) लाल कवि कृत छत्र-प्रकाश।
(१६) हंटर कृत भारतीय इतिहास।

(१७) बर्नियर के ग्रंथ में औरंगजेब का हाल।
(१८) प्रो० यदुनाथ सरकार कृत औरंगजेब तथा शिवाजी।
(१९) केलूसकर तथा तकाखव कृत शिवाजी।
(२०) मध्य भारत, रीवाँ, पन्ना, ओरछा, छतरपुर, बाँदा तथा हमीरपुर के गजेटियर।
(२१) मुंशी श्यामलाल-कृत बुंदेलखंड का इतिहास।
(२२) नंदकुमार देव कृत वीरकेसरी शिवाजी।

इन सब मे केलूसकर महाशय कृत शिवाजी का ग्रंथ बहुत ही प्रशंसनीय तथा सर्वश्रेष्ठ है।

सप्तम और अष्टम ग्रंथों से और विशेषतया अष्टम से हमे बहुत सहायता मिली है। छंद सबसे अधिक गिल्लाभाई जी वाली प्रति मे मिले, परंतु सब से शुद्ध प्रति पं० युगलकिशोरजी वाली पाई गई। तो भी कहना ही पड़ता है कि बहुत शुद्ध कोई भी प्रति न थी और कतिपय तो महा नष्ट भ्रष्ट थीं। अतः हमें अनेक छंद अपनी ओर से सब प्रतियो को मिला कर एवं अपने कंठस्थ छंदो द्वारा संशोधित करने पड़े। कतिपय छंद किसी भी प्रति में शुद्ध नहीं मिले। ऐसी दशा मे विवश होकर हमे वे छंद अपनी ओर से शुद्ध करने पड़े है। ऐसा करने मे किसी छंद में हमने कोई घटना नहीं घटाई बढ़ाई।

स्वर्गीय कविवर गोविंद गिल्लाभाईजी के प्रति हम कहाँ तक कृतज्ञता प्रकाश करें कि जिन महाशय ने हम लोगों से भेंट न होने पर भी अपनी अमूल्य हस्तलिखित प्रति कृपा करके हमारे पास भेज दी और कई महीनों तक उसे हमारे पास रहने दिया। पंडित युगलकिशोरजी हमारे निकटस्थ भतीजे ही थे; अतः उनके धन्यवाद के विषय में हमें मौनावलंबन ही उचित है।

सहृदय पाठकों को ग्रंथावलोकन से विदित हो गया होगा कि इसमें शब्दों के लिखने में उनको शुद्ध संस्कृत के स्वरूप में न लिख कर परि-

वर्तित हुए हिंदी रूप मे लिखा गया है। यथा—स्रम (श्रम), सकति (शक्ति), भूषन (भूषण), दुग्ग (दुर्ग), छिति (क्षिति) इत्यादि।

इसके विषय में हमें केवल यही वक्तव्य है कि भाषा मे जो रूप अच्छा समझा जाता है और जो रूप भूषणजी एवं अन्य कविगण पसंद करते हैं, वही लिखा गया है। भाषा के कविगण केवल श्रुतिकटु बचाने एवं श्रुतिमाधुर्य्य लाने के लिये ऐसा किया करते है और इसमें कोई दूषण भी नहीं। इस प्रकार कविगण प्रायः निम्नलिखित वर्ण अपने काव्य में न आने देने का प्रयत्न करते हैं—ट वर्ग, व, श, ड़, ऋ, ज्ञ, युक्त वर्ण, आधी रेफ इत्यादि।

हमारे विचार में तो भाषा मे इन संस्कृत व्याकरण संबंधी झगड़ों के हटा देने से कोई दोष नहीं। फारसी में स्वाद, से, सीन, ज़ो, ज्वाद, जाल, जे, अलिफ, ऐन आदि के व्यवहार में जो कठिनाइयाँ पड़ती हैं, वे सब पर विदित है। भाषा मे ऐसी बातो के स्थिर रखने की कोई आवश्यकता नहीं मालूम होती। हमें "कार्य्य, मर्म्म, लङ्क, मञ्च, कण्ठ, अन्त, कवि" इत्यादि को हिंदी (देवनागरी) मे कार्य या कारज, मर्म या मरम, लंक, मंच, कंठ, अंत, कबि" लिखने में कोई विशेष हानि नहीं प्रतीत होती। भाषा की लिखावट सुगम होनी चाहिए। यदि कोई मनुष्य बिना भाष्य पर्यंत पढ़े देवनागरी लिपि तथा हिंदी भी न लिख सके तो वह सर्वव्यापिनी कैसे हो सकती है?

हमने इस संस्करण मे अपनी टिप्पणियाँ दे दी हैं। कदाचित् वे हमसे भी कम हिंदी-परिचित महाशयों के काम आवें और हमारा साल डेढ़ साल का श्रम सफल हो जाय। हर्ष का विषय है कि केवल २० वर्ष के अंदर हमारे इस ग्रंथ को चतुर्थ संस्करण का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। भूषण महाराज की कविता ऐसे ही आदर के योग्य है भी।

महाकवि भूषण के ग्रंथों मे जातिप्रेम और देशप्रेम की अच्छी बहार है। भयानक रस का रंजन बहुत श्रेष्ठ हुआ है। सारे देशी

नरेशो पर कथन शिवाजी के व्याज से आ गए है। उस काल की भारतीय राजसत्ता का अनमोल चित्रण है। ऐतिहासिक वर्णनों की सब कहीं भरमार है। सारे ग्रंथ मे शिवाजी का प्रताप सूर्यवत् चमक रहा है। युद्ध कथन की प्रवीणता, भारी बल, नायक का प्रभाव-प्रदर्शन, हिंदुत्व का गौरव, अलंकारों के साफ विश्लेषण तथा उदाहरण, तत्कालीन भारतीय चित्र, भाषा सौंदर्य आदि शिवराजभूषण के गुण है। छत्रपति शिवाजी का शरीरांत संवत् १७३७ मे हुआ। अंतिम सात वर्षों की घटनाएँ शिवा बावनी मे आ गई है। उसमें रस परिपाक शिवराजभूषण से भी श्रेष्ठतर है। छत्रसाल दशक का प्रत्येक छंद बड़ा ही अनमोल और उमंगपूर्ण है। वीर काव्य के भूषण आचार्य है। तत्कालीन भारतीय नरेशो, विशेषतया शिवाजी और छत्रसाल द्वारा भूषण को धन-मान की भी बहुत अच्छी प्राप्ति हुई। स्फुट छंदों मे भी भूषण का साहित्य कई अनुपम रत्न उपस्थित करता है। उसमें भी वही उद्दंडता वर्तमान है जो आपके अन्य ग्रंथो को दीप्ति प्रदान करती है।

भूषण की भाषा सशक्त, भाव प्रकाशन मे प्रभावयुक्त और सुव्यवस्थित है। शब्द चयन विषय के अनुरूप और आह्लाददायक है। वीर काव्य के लेखक होकर प्रसाद और माधुर्य गुणो को भी आप बहुतायत से लाए है। अर्थव्यक्त गुण बहुत अच्छा पाया जाता है। प्रशंसा कथन मे कविगण प्रायः अत्युक्ति से काम लेते है, किंतु भूषण में स्वाभाविकता का भी बल है। अपने समय के आप पूरे प्रतिनिधि कवि थे। भारत मे उस काल स्वराज्य स्थापन का प्रचुर प्रयत्न हो रहा था। आपने उमंग वृद्धि द्वारा उस महत्कार्य में अनमोल सहायता पहुँचाई। रचना मे शौर्य की मूर्ति खड़ी है। संयत कथन करके भी आप जातीयता विवर्द्धक हुए। तत्कालीन प्रायः सभी प्रशंस्य नरेशों का उत्साह आपने अपने उमंगपूर्ण साहित्य से बढ़ाया, तथा हिंदुओं के शत्रुओं की प्रचंड भर्त्सना की। धर्म एवं जातीयता का अनादर आपसे कभी देखा

नहीं जाता था। लाक्षणिक मूर्तिमत्ता रचना मे प्रस्तुत रहती है। धारा-वाहिकता, भावुकता, प्रकृति रंजन, लालित्य, मौलिकता, कला, मर्म-स्पर्शी अनुभूति की व्यंजना, लोकस्वीकृति के योग्य उमंगपूर्ण कथन, रंगों के निरीक्षण एवं शुद्ध वर्णन, हावयुक्त सजीव मूर्तियाँ, खेलवाड़, चेष्टाओ के सम्यक् चित्रण, लोकोक्तियो के विशद उपयोग, भाषा सौष्ठव, विचार स्वातंत्र्य, वर्णनो मे विदग्धता आदि आदि भूषण के ग्रंथों मे प्राचुर्य से उपलब्ध है। बहुतेरे छंदों से रस टपका पड़ता है। कला का महत्व होते हुए भी स्वाभाविकता का पूर्ण चमत्कार है। आचार्य और उद्दंड कवि दोनों की महत्ता का मान रखा गया है। कला पक्ष और हृदय पक्ष, दोनो का चकाचौंध करनेवाला चमत्कार-कौशल दिखलाई देता है। हास्य-विनोद भी भरा पड़ा है। शब्दो में फड़कानेवाली झंकार बहुधा सुन पड़ती है। कविता वीर दर्प पूर्ण सेन-संचालन का सा स्वाद दिखलाती है। स्वाभाविक वर्णन के साथ ऊहा का भी चमत्कार भूषण ने रखा है। प्रबंध कौशल और भावावेश के साथ तथ्यकथन भी मिला हुआ है। कल्पना मे कोमलता वर्तमान है और हिंदू साम्राज्य का भावी रूप अभी से देख पड़ता है। तत्कालीन देशीय जागृति में आपका भी विशेष हाथ है।

इनके आश्रयदाताओ मे निम्नांकित महानुभाव भी न्यूनाधिक समझे जा सकते है—

हृदयराम सुत रुद्र सुरकी महोबा निवासी (सं० १७२३), कुमायूँ नरेश ज्ञानचंद्र (सं० १७५७–६५), फतेह शाह गढ़वाल नरेश (सं० १७४१–१७७३), साहूजी भोंसला (सं० १७६५–१८०५), बाजीराव पेशवा (सं० १७७०–९२), महाराजा अवधूत सिह (सं० १७५७–१८१२), सवाई जयसिह जयपुर नरेश (सं० १७६५–१८००), चिता-मणि (चिमनाजी) (सं० १७९०), महाराजा छत्रसाल पन्ना नरेश

(स० १७८८-१७८६), राव बुद्धसिंह बूँदी नरेश (स० १७६४-१८०५), दाराशाह (स० १७१६ तक) और भगवत राय खीची असोथर नरेश (१७४०-१७९७) ॥

४-४-१९०७
६-१-१६२२
३०-६-२९
२८-१०-३८
३०-१२-४८

श्यामबिहारी मिश्र (स्वर्गवासी)
शुकदेव बिहारी मिश्र

भूषणग्रंथावली

शिवराज—भूषण

मंगलाचरण

कवित्त शुद्ध घनाक्षरी अथवा मनहरण[1]

बिकट अपार भव पंथ के चले को स्रम हरन करन बिजना से ब्रह्म ध्याइए। यहि लोक परलोक सुफल करन कोकनद से चरन हिए आनि कै जुड़ाइए॥ अलि कुल कलित कपोल, ध्यान ललित, अनद रूप सरित मैं भूषन अन्हाइए। पाप तरु भजन बिघन गढ गजन जगत मनरजन द्विरदमुख गाइए॥ १॥

छप्पय अथवा षटपद[2]

जै जयति जै आदिसकति जै कालि कपर्दिनि।
जै मधुकैटभ छलनि देवि जै महिष बिमर्दिनि॥

---

१ यह उस दडक का नाम है जिसमे इकतीस वर्ण होते है, लघु गुरु का कोई क्रम नही होता, केवल अतिम वर्ण अवश्य गुरु होता है, जिसमे सोलहवे वर्ण पर प्रथम यति होती है और अत के वर्ण पर द्वितीय। देवजी के मतानुसार १४ वे अथवा १५ वे वर्ण पर भी यति हो सकती है, पर वे मध्यम एव अधम यतियाँ हैं।

२ इस छद मे ६ पद होते है जिनमे प्रथम चार काव्य छद और अतिम दो

जै चमुड जै चड मुड भडासुर खडिनि ।
जै सुरक्त जै रक्तबीज बिड्डाल[1] बिहडिनि ॥
जै जै निसुभ सुभद्दलनि भनि भूपन जै जै भननि ।
सरजा समत्थ सिवराज कहँ देहि बिजै जै जग-जननि ॥२॥

दोहा[2]

तरनि[3] जगत जलनिधि तरनि[4] जै जै आनँद ओक ।
कोक कोकनद सोकहर, लोक लोक आलोक[5] ॥ ३ ॥

अथ राजवंश वर्णन

राजत है दिनराज को बस अवनि अवतस ।
जामैं पुनि पुनि अवतरे कसमथन प्रभु अस ॥ ४ ॥
महाबीर ता बस मै भयो एक अवनीस ।
लियो बिरद "सीसौदिया"[6] दियो ईश को सीस ॥ ५ ॥

उल्लाला होते हैं। काव्य छद मे प्रत्येक पद २४ कला (मात्रा) का होता है और उसकी ११ वी कला पर प्रथम यति होती है। पद चार होते हैं। उल्लाला छद २८ कला का होता है जिसमे प्रथम यति १५ वी कला पर होती है।

१ चामुडा देवी जी। बिडाल की कथा दुर्गा मे है और भडासुर की उपपुराण मे।

२ "प्रथम कला तेरह धरौ पुनि गेरह गनि लेहु। पुनि तेरह गेरह गनौ दोहा लच्छन एहु" ॥ लघु अक्षर की एक कला (मात्रा) होती है और गुरु की दो।

३ सूर्य। ४ नौका। ५ रोशनी अथवा दर्शन।

६ "सीसोदिया" क्षत्रिय सभी क्षत्रियों के सिरमौर हैं। इसी वश के क्षत्रिय उदयपुर एव नैपाल मे राज्य करते है। इनका हाल "टाड" कृत "राजस्थान" मे देखने योग्य है। इनके पूर्व पुरुष "सीसौद" निवासी थे, जिससे इनकी यह अल्ल पडी।

ता कुल मैं नृपबृंद सब उपजे बखत बुलंद।
भूमिपाल तिन मैं भयो बड़ो "माल मकरंद"[1] ॥ ६ ॥
सदा दान किरवान मैं जाके आनन अंभु[2]।
साहि निजाम[3] सखा भयो दुग्ग देवगिरि खंभु ॥ ७ ॥
ताते सरजा[4] बिरद भी सोभित सिंह प्रमान।
रन-भू-सिला सु भौंसिला[5] आयुषमान खुमान[6] ॥ ८ ॥
भूषन भनि ताके भयो भुव-भूषन नृप साहि[7]।
रातौ दिन संकित रहैं साहि सबै जग माहि ॥ ९ ॥

---

१ किसी किसी प्रति में इनका नाम "भालमकरद" लिखा है, पर शुद्ध यही माल मकरद है, क्योंकि इतिहास मे इनका नाम "मालो जी" दिया है। इनका जन्मकाल सन् १५५० था।

२ पानी। दान और कृपाण (बहादुरी) मे जिसके मुँह पर सदा पानी (आब) रहता है।

३ निजामशाही बादशाह। मालो जी निजामशाही बादशाह के सहायक और मित्र थे।

४ मालोजी का "सर जाह" खिताब था, इसी से "सरजा" निकला। प्रयोजन लब्धप्रतिष्ठ से है। भूषण।इसे सिंह के अर्थ में भी। लिखते हैं; क्योंकि वह भी बन का राजा है।

५ शिवाजी के घराने की "भौंसिला" उपाधि थी।

६ भूषणजी शिवराज को "सरजा, भौंसिला, खुमान" इत्यादि नामों से पुकारते है; सो इन उपाधियों की यहाँ पर उन्होंने व्युत्पत्ति सी की है।

७ शाहजी, महाराज शिवराज के पिता। भूषणजी महाराज शिवाजी को उदयपुर के सुप्रसिद्ध "सीसौदिया" कुलोद्भव बतलाते हैं और यह ठीक भी जान पड़ता है। यद्यपि सुनते है कि आज कल कुछ अदूरदर्शी लोग भ्रमवश शिवाजी के वंशज महाराज कोल्हापुर को क्षत्रिय तक मानने में आनाकानी करते है,

कवित्त—मनहरण

एते हाथी दीन्हे मालमकरद जू के नद जेते गनि सकति बिरंच हू की न तिया[1]। भूषन भनत जाको साहिबी सभा के देखे लागै सब और छितिपाल छिति मै छिया[2]॥ साहस अपार हिंदुवान को अधार धीर, सकल सिसौदिया सपूत कुल को दिया। जाहिर जहान भयो साहिजू खुमान बीर साहिन को सरन सिपाहिन को तकिया॥ १०॥

दोहा

दसरथ जू के राम भे बसुदेव के गोपाल।
सोई प्रगटे साहि के श्री सिवराज भुवाल॥११॥
उदित होत सिवराज के मुदित भये द्विजदेव।
कलियुग हर्‍यो मिट्यो सकल म्लेच्छन को अहमेव॥१२॥

कवित्त—मनहरण

जा दिन जनम लीन्हो भू पर भुसिल[3] भूप ताही दिन जीत्यो अरि

जिसका पूरा बखेडा ही उठ खडा हुआ है, पर टाड कृत "राजस्थान" मे इनके वश का "सीसौदिया" घराने से यों सबध लिखा है—

"अजयसी (महाराजा उदयपुर सन् १३०१ ईसवी), सुजन जी, दलीप जी, सिव जी, भोरा जी, देवराज, उग्रसेन, माहोल जी, खेलो जी, जनको जी, सत्तो जी, सभा जी, शिवा जी।" (इडियन पबलिकेशन सोसायटी, कलकत्ता द्वारा सन् १८६६ ई० मे बगाल प्रेस मे मुद्रित प्रति की जिल्द १ पृष्ठ २८२ देखिए) इसमे शिवाजी के पिता का नाम शभा जी और मालो जी का माहोल जी लिखा है, कदाचित् उन महानुभावो के ये उपनाम हों। शाहु जी सन् १५९४ मे उत्पन्न होकर जनवरी १६६४ मे स्वर्गवासी हुए।

१ विरचि हू की तिया न=सरस्वती भी नहीं।

२ अत्यन्त मैले, तिरस्करणीय।

३ अर्थात् भौंसिला। महाराज शिवाजी का जन्मकाल १० अप्रैल सन् १६२७ और मृत्युकाल ५ अप्रैल सन् १६८० था।

उर के उछाह को। छठी छत्रपतिन को जीत्यो भाग अनायास जीत्यो नामकरन मै करन प्रवाह को॥ भूषन भनत बाल लीला गढ़कोट जीत्यो साहि के सिवाजी करि चहूँ चक्क चाह को। बीजापुर गोलकुडा जीत्यो लरिकाई ही मै ज्वानी आए जीत्यो दिलीपति पातसाह को ॥१३॥

दोहा

दच्छिन के सब दुग्ग जिति दुग्ग सहार बिलास।
सिव सेवक सिव गढपती कियो रायगढ बास[1] ॥ १४ ॥

अथ रायगढ़ वर्णन

मालती सवैया[2]

जा पर साहि तनै सिवराज सुरेस कि ऐसि सभा सुभ साजै। यो कबि भूषन जपत[3] है लखि सपति को अलकापति लाजै॥ जा मधि

---

१ राजगढ को शिवाजी ने म्होरबुध पहाडी पर १६४७ ई० मे बसाया था और १६६५ मे उन्हे वह जयसिह को दे देना पडा। शिवाजी के पश्चात् मरहठों ने इसे १६६२ ई० मे फिर से जीत लिया। सन् १६६२ ई० मे शिवाजी ने राजगढ छोड कर रायगढ को अपना वासस्थान बनाया। यह कदाचित् रायगढ ही का वर्णन है—भूमिका देखिए। यही शिवाजी अत तक रहे।

२ इसमे सात भगण और दो अतिम अक्षर गुरु होते है। इसका रूप यह है ("मुनिभगग" ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽऽ)। भगण मे एक गुरु और दो लघु अक्षर होते है। कडाई से देखने पर बहुत कम सवैया शुद्ध निकलेगी, परन्तु छद बिगडने मे गुरु अक्षर को भी मृदु उच्चारण से लघु करके पढ लिया जाता है।

३ जपता है, बार बार कहता है।

तीनिहु लोक कि दीपति ऐसो बड़ो गढ़राय, बिराजै। वारि पताल सी माची मही अमरावति की छबि ऊपर छाजै ॥ १५ ॥

हरिगीतिका छंद[1]

मनिमय महल सिवराज के इमि रायगढ़[2] मैं राजहीं।
लखि जच्छ किन्नर असुर सुर गंधर्व हौंसनि साजहीं॥
उत्तंग मरकत[3] मंदिरन मधि बहु मृदंग जु बाजहीं।
घन-समै[4] मानहु घुमरि करि घन घनपटल[5] गलगाज[6]हीं ॥१६॥
मुकतान की झालरिन मिलि मनि-माल छज्जा छाजहीं।
संध्या समै मानहुँ नखत गन लाल अंबर राजहीं॥
जहँ तहाँ ऊरध उठे हीरा किरन घन समुदाय हैं।
मानो गगन तंबू तन्यो ताके सपेत तनाय हैं ॥१७॥
भूषन भनत जहँ परसि कै मुनि पुहुपरागन[7] की प्रभा।
प्रभु पीत पट की प्रगट पावत सिधु मेघन की सभा॥
मुख नागरिन के राजहीं कहुँ फटिक महलन संग मैं।
बिकसंत कोमल कमल मानहु अमल गंग तरंग मैं ॥१८॥

---

१ इसका लक्षण यों है "जहँ पाँच चौकल बहुरि षट कल अंत यक गुरु आनिए। बर बिरति नव मुनि भानु पर रचि कला सो रवि ठानिए।" इसमे २८ कला होती है और अंत का अक्षर गुरु होता है। सोलहवीं कला पर पहली यति और जैसा कि सभी छदों में होता है, अत मे दूसरी यति पड़ती है।

२ छं० नं० १४ देखिए।

३ नीलम।

४ समय पर अर्थात् ठीक समय अथवा वर्षा काल में।

५ तह, पर्त।

६ गल=गले से अर्थात् जोर से। ग्राम्य भाषा में "गलगंजौ" का अर्थ प्रसन्नतापूर्वक बोलने का लिया जाता है; सो भी यहाँ पर ठीक उतरता है।

७ पुष्पराग, पुखराग अथवा पुखराज।

आनद सो सुदरिन के कहुँ बदन इदु उदोत है।
नभ सरित के प्रफुलित कुमुद मुकुलित कमल कुल होत है॥
कहु बावरी सर कूप राजत बद्धमनिसोपान है।
जह हस सारस चक्रवाक बिहार करत सनान है ॥१६॥
कितहूँ बिसाल प्रबाल जालन जटित अगनि भूमि है।
जहँ ललित बागनि द्रुमलतनि मिलि रहै झिलमिलि[1] भूमि है॥
चपा चमेली चारु चदन चारिहू दिसि देखिए।
लवली[2] लवग यलानि[3] केरे लाखहो लगि लेखिए॥२०॥
कहुँ केतकी कदली करोदा कुद अरु करबीर[4] है।
कहुँ दाख[5] दाडिम[6] सेब कटहल तूत अरु जभीर है॥
कितहूँ कदब कदब[7] कहुँ हिताल[8] ताल तमाल[9] है।
पीयूप ते मीठे फले कितहुँ रसाल[10] रसाल[11] है॥ २१॥
पुन्नाग[12] कहुँ कहुँ नागकेसरि कतहुँ बकुल असोक है।
कहुँ ललित अगर गुलाब पाटल[13] पटल[14] बेला थोक है॥

---

१ झिलमिला (हिलता हुआ) प्रकाश।
२ कोमल बल्कला, नेवाडी, एक फूल वृक्ष।
३ एला इलायची। ४ कनेर। ५ मुनक्का। ६ अनार।
७ समूह।
८ पूगरोट वृक्ष।
९ आबनूस।
१० आम का पेड।
११ रसीला।
१२ देववल्लभ, एक बडा पुष्पवृक्ष।
१३ गुलाब, पाडर।
१४ पर्दा।

कितहूँ नेवारी माधवी[1] सिगारहार[2] कहूँ लसैं ।
जहँ भाँति भाँतिन रग रग विहग आनँद सो रसैं ॥ २२ ॥

पट्पद

लसत विहगम बहु लवनित[3] बहु भाँति बाग महँ ।
कोकिल कीर कपोत केलि कल कल करत तहँ ॥
मजुल महरि मयूर चटुल[4] चातक चकोर गन ।
पियत मधुर मकरद[5] करत झकार भृग घन ॥
भूषन सुबास फल फूल युत छहुँ ऋतु बसत बसत जहँ ।
इमि रायदुग्ग राजत रुचिर सुखदायक सिवराज कहँ ॥ २३ ॥

दोहा

तहँ नृप रजधानी[6] करी जीति सकल तुरकान ।
शिव सरजा रुचि दान मे कीन्हो सुजस जहान ॥ २४ ॥

अथ कविवश वर्णन

देसन देसन ते गुनी आवत जाचन ताहि ।
तिनमे आयो एक कवि भूषन कहियतु जाहि ॥ २५ ॥
दुज[7] कनौज कुल कस्यपी रतनाकर सुत धीर ।
बसत तिविक्रमपुर सदा तरनितनूजा तीर ॥ २६ ॥

---

१ चद्रवल्ली, एक लता ।

२ हरसिगार, एक पुष्पवृक्ष ।

३ सलोने ।

४ चचल ।

५ पुष्परस । पराग ।

६ सन् १६६२ से मरण पर्यंत शिवाजी की राजधानी रायगढ मे रही ।

७ इन दोहो से स्पष्ट है कि भूषण जी कान्यकुब्ज ब्राह्मण, कश्यपगोत्री (त्रिपाठी) श्री रत्नाकरजी के पुत्र, त्रिविक्रमपुर मे यमुनाजी के किनारे रहते

बीर बीरबर[1] से जहाँ उपजे कवि अरु भूप।
देव बिहारीश्वर जहाँ विश्वेश्वर तद्रूप ॥ २७ ॥
कुल सुलंक चितकूटपति साहस सील समुद्र।
कवि भूषन पदवी दई हृदयराम सुत रुद्र[2] ॥ २८ ॥
सिव चरित्र लखि यों भयो कवि भूषन के चित्त।
भाँति भाँति भूषननि[3] सों भूषित करौं कवित्त ॥ २९ ॥
सुकविन हूँ की कछु कृपा समुझि कविन को पंथ।
भूषन भूषनमय[3] करत "शिवभूषन" सुभ ग्रंथ ॥ ३० ॥
भूषन सब भूषननि मै उपमहि उत्तम चाहि।
याते उपमहि आदि दै बरनत सकल निबाहि ॥ ३१ ॥

थे जहाँ बीरबलजी हो गए थे और विहारीश्वर ग्रामदेव थे। इसकी विशेष व्याख्या भूमिका मे देखिए।

१ राजा बीरबल मौजा अकबरपुर बीरबल जिला कानपुर में उत्पन्न हुए थे। यह अकबरपुर तहसील अकबरपुर नही वरन् एक और गॉव यमुनाजी के किनारे है। भूमिका देखिए।

२ "हृदयराम" सुत "रुद्र" के विषय में स्फु० का० छं० नं० २ का नोट देखिए। गहोरा चित्रकूट से १२ मील पर है। हृदयराम गहोरा के शासक थे। इनके राज्य मे १०४३½ ग्राम थे जिनकी वार्षिक आय बीस लाख रुपए थी। इनका राज्य सन् १६७१ के लगभग बुदेला महाराज छत्रसाल ने छीन लिया था। रुद्र भी राजा हुए या नही, सो अज्ञात है। भूमिका देखिए।

३ अलंकारो।

अथ ग्रंथ प्रारंभ

उपमा

लक्षण—दोहा

जहाँ दुहुन की देखिए सोभा बनति समान ।
उपमा भूषन ताहि को भूषन कहत सुजान ॥ ३२ ॥
जा को बरनन कीजिए सो उपमेय प्रमान ।
जाकी सरबरि कीजिए ताहि कहत उपमान[1] ॥ ३३ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

मिलतहि कुरुख[2] चकत्ता[3] को निरखि कीन्हो सरजा सुरेस ज्यों दुचित ब्रजराज को । भूषन कुमिस[4] गैरमिसिल[5] खरे किए को किये म्लेच्छ मुरछित करि कै गजराज को ॥ अरे ते गुसुलखाने बीच ऐसे उमराय लै चले मनाय महराज सिवराज को । दाबदार निरखि रिसानो दीह दलराय जैसे गड़दार[6] अड़दार[7] गजराज को ॥ ३४ ॥

---

१ यदि कहैं "मुख चद्र सा मनोहर है" तो "मुख" उपमेय होगा और "चद्र" उपमान । उपमा में वाचक और धर्म (गुणादि) भी होते हैं सो यहाँ "सा" वाचक है और "मनोहर" धर्म ।

२ कुरुख कीन्हों=मुँह बिगाड़ दिया, क्रोधांध कर दिया ।

३ चगताई के वशज अर्थात् औरगजेब को ।

४ बुरे बहाने से ।

५ अनुचित साथियों से (पंज हजारियों की पंक्ति में) ।

६ वे सोंटेमार लोग जो मस्त हाथी को पुचकार कर आगे बढ़ाते हैं ।

७ ऐड़दार, मस्त । इन दो पदो का आशय यह है कि शिवाजी को गुसलखाने मे अड़ते (अर्थात् ठिठकते) देख (औरगजेब पर जोखिम आ जाने के भय से) दरबार के अमीर उमरा लोग उसे (अर्थात् शिवाजी को)

अन्यच्च–मालती सवैया

सासता[1] खाँ दुरजोधन सो औ दुसासन सो जसवंत[2] निहास्यो।

यों मना ले चले जैसे किसी दाबदार मस्त हाथी को मस्ताया हुआ देख सोंटे-मार लोग पुचकार कर आगे ले चलते हैं। गुसलखाने के विषय पर भूमिका देखिए। यह घटना सन् १६६६ ईसवी की है।

१ शाइस्ताखाँ दिल्ली का एक बड़ा सरदार था। चाकन को जीतता हुआ वह पूना को विजय करके वही ठहरा। ५ अप्रैल की रात को शिवाजी केवल २०० योद्धाओ के साथ उसके महल मे तरकीब से घुस गए और गडबड़ मे इन्होंने कई यवनो तथा शाइस्ताखाँ के लड़के को मार डाला। शाइस्ताखाँ जान बचाने को खिड़की से बाहर कूदने लगा कि शिवाजी ने दौड़ कर उसे एक तलवार मारी जिससे उसका सिर तो बच गया, पर एक हाथ की कुछ उँगलियाँ कट गई, किन्तु वह भाग गया। लौटते हुए हजारो दुश्मनों के बीच से शिवाजी केवल उन्ही २०० आदमियों के साथ मशाल जलाए सिहगढ़ चले गए। यह सन् १६६३ ईसवी का हाल है। शाइस्ताखाँ औरंगजेब का मामा था और पीछे बगाल का गवर्नर हुआ।

२ जसवंतसिह मारवाड़ के महाराज थे। ये शाइस्ताखाँ के साथ सन् १६६३ ई० में दक्षिण गए थे। कहते है कि ये गुप्त रीत्या शिवाजी से मिल गए थे और इन्ही की सलाह से शाइस्ताखाँ की दुर्गति हुई। पहले तो औरगजेब ने शाइस्ताखाँ व जसवतसिह दोनो को वापस बुला लिया था, परंतु पीछे से शाइस्ताखाँ को बगाल का गवर्नर करके भेज दिया और जसवंत को शाहजादा मुअज्जम की मातहती में फिर दक्खिन भेजा। जसवंतसिह ने सन् १६६३ ई० में सिहगढ़ घेरने का नाम मात्र प्रयत्न किया था, परतु फिर उसे छोड दिया। (देखो शिवाबावनी छ० २८ "जाहिर है जग मे जसवंत लियो गढ़ सिह मै गीदर बानो")। इन्हे सन् १६६५ मे औरंगजेब ने वापस बुला लिया। १६८० में शरीरांत काबुल की मुहीम में हुआ।

द्रोन सो भाऊ[1] करन्न[2] करन्न मो और सबै दल सो दल भारयो ।। ताहि बिगोय सिवा सरजा भनि भूषन औनि छता यो पछारयो । पारथ कै पुरुषारथ भारथ जैसे जगाय जयद्रथ[3] मारयो ।। ३५ ।।

लुप्तोपमा

लक्षण–दोहा

उपमा वाचक पद, धरम, उपमेयो, उपमान ।
जामैं सो पूर्णोपमा लुप्त[4] घटत लौं मान ।। ३६ ।।

उदाहरण–(धर्मलुप्ता)–मालती सवैया

पावक तुल्य अमीतन को भयो, मीतन को भयो धाम सुधा को[5] । आनँद भो गहिरो समुदै कुमुदावलि तारन को बहुधा को ।। भूतल माहि बली सिवराज भो भूषन भाखत शत्रु सुवा[6] को ।। बदन[7] तेज त्यो चदन[8] कीरति साधे सिगार बधू बसुधा को ।। ३७ ।।

---

१ बूँदी के छत्रसाल (बुदेलखड के नामी छत्रसाल नहीं) के पुत्र भाऊसिह । इतिहास मे इनका किसी प्रसिद्ध युद्ध म शिवाजी से लडना नही पाया जाता, तो भी दक्षिण मे ये औरगजेब की ओर अवश्य गए थे और अप्रसिद्ध युद्धा मे शिवाजी से यह जरूर लडे थ । ये बूँदी की गद्दी पर सन् १६५८ मे बैठे थे और सन् १६८२ मे औरगाबाद मे इनका शरीरात हुआ ।

२ बीकानेर के महाराज रायसिह के पुत्र महाराज करन सन् १६३२ ई० मे गद्दी पर बैठे और लगभग १६७४ तक राज्य करते रहे । इनका दो हजारी मनसब था ।

३ जयद्रथ दुर्योधन का बहनोई था । उसे अर्जुन ने शकटव्यूह के अदर घुस कर मारा था ।

४ बहुतों ने आठ लुप्तोपमायें मानी है और किसी किसी ने १५ तक ।

५ चद्र पर उक्ति ।

६ फुजूलियात, वाहियात बातें, झूठ । ७ ईंगुर ।

८ चाँदनी अथवा शीतल ।

अन्यच्च मनहरण

आए दरबार बिललाने छरीदार देखि जापता करनहारे नेक हू न मनके[१]। भूषन भनत भौंसिला के आय आगे ठाढ़े बाजे भए उमराय तुजुक[२] करन के॥ साहि रह्यो जकि, सिव साहि रह्यो तकि, और चाहि रह्यो चकि, बने ब्योंत अनबन के। ग्रीषम के भानु सो खुमान को प्रताप देखि तारे सम तारे गए मूँदि तुरकन के॥ ३८॥

अनन्वय

लक्षण—दोहा

जहाँ करत उपमेय को उपमेयै उपमान।
तहाँ अनन्वै कहत है भूषन सकल सुजान॥ ३९॥

उदाहरण—मालती सवैया

साहि तनै सरजा तव द्वार प्रतिच्छन दान कि दुंदुभि बाजै।
भूषन भिच्छुक भीरन को अति भोजहु ते बढ़ि मौजनि साजै॥
राजन को गन, राजन! को गनै? साहिन मै न इती छबि छाजै।
आजु गरीबनेवाज मही पर तो सो तुही सिवराज बिराजै॥४०॥

प्रथम प्रतीप

लक्षण—दोहा

जहँ प्रसिद्ध उपमान को करि बरनत उपमेय।
तहँ प्रतीप उपमा कहत भूषन कविता प्रेय॥ ४१॥

उदाहरण—मालती सवैया

छाय रही जितही तितही अतिही छबि छीरधि रंग करारी।
भूषन सुद्ध सुधान के सौधनि[३] सोधति सी धरि ओप उज्यारी॥

१ चाप न की, हिले तक नहीं। २।अदब।
३ महलों को।

यो तम तोमहि चाबिकै चद चहूँ दिसि चाँदनि चारु पसारी।
ज्यो अफजल्लहि[1] मारि मही पर कीरति श्री सिवराज बगारो ॥४२॥

द्वितीय प्रतीप

लक्षण—दोहा

करत अनादर बर्न्य[2] को, पाय और उपमेय।
ताहू कहत प्रतीप जे भूषन कविता प्रेय ॥४३॥

उदाहरण—दोहा

शिव! प्रताप तव तरनि सम, अरि पानिप हर मूल।
गरब करत केहि हेत है, बडवानल तो तूल[3] ॥४४॥

तृतीय प्रतीप

लक्षण—दोहा

आदर घटत अबर्न्य[4] को, जहाँ बर्न्य के जोर।
तृतिय प्रतीप बखानहीं तहँ कबिकुलसिरमोर ॥ ४५ ॥

उदाहरण—दोहा

गरब करत कत चाँदनी हीरक छीर समान।
फैली इती समाज गत कीरति सिवा खुमान ॥ ४६ ॥

---

*१ यह बीजापुरी सरदार था। विशेष हाल छद न० ६३ के नोट मे देखिए। इस अवसर पर शिवाजी के साथ प्रधान लोगों मे तानाजी मलूसरे, यशाजी कक और जीव महालय थे। हाल सन् १६५६ ई० का है।

२ उपमेय।

३ तुल्य। यहाँ एक ही गुण कहे जाने और उसकी भी निंदा हो जाने से विरसता हो गई है। यदि कई गुण होते और अन्य उनमे से एक ही एक मे सम या अधिक होते तो विरसता न आती।

४ उपमान।

चतुर्थ प्रतीप

लक्षण—दोहा

पाय बरन उपमेय को, जहाँ न आदर और।
कहत चतुर्थ प्रतीप हैं, भूषन कबि सिरमौर ॥ ४७ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

चंदन मैं नाग, मद भरयो इंद्र नाग, बिष भरो सेसनाग कहै उपमा अबस को ? भोर ठहरात न कपूर बहरात, मेघ सरद उडात बात लागे दिसि दस को ॥ शंभु नील ग्रीव, भौर पुडरीक ही बसत, सरजा सिवा जी सन भूषन सरस को ? छीरधि मैं पक, कलानिधि मै कलक, याते रूप एक टक ए लहै न तव जस को ॥ ४८ ॥

पंचम प्रतीप

लक्षण—दोहा

हीन होय उपमेय सो नष्ट होत उपमान।
पचम कहत प्रतीप तेहि भूषन सुकवि सुजान ॥ ४९ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

तो सम हो सेस सो तो बसत पताल लोक ऐरावत गज सो तो इंद्र लोक सुनियै। दुरे हस मानसर ताहि मैं कैलास धर सुधा सुरबर सोऊ छोडि गयो दुनियै ॥ सूर दानो सिरताज महाराज सिवराज रावरे सुजस सम आजु काहि गुनियै ? भूषन जहाँ लौ गनौ तहाँ लौ भटकि हारयो लखिये कछू न केती बातैं चित चुनियै ॥ ५० ॥

अपरञ्च—मालती सवैया

कुद कहा पय वृद कहा अरु चद कहा सरजा जस आगे ?।
भूषन भानु कृसानु कहाब[1] खुमान प्रताप महीतल पागे ? ॥

---

१ कहा अब ।

राम कहा द्विजराम कहा बलराम कहा रन मै अनुरागे ?।
बाज कहा मृगराज कहा अति साहस मैं सिवराज के आगे ?॥५१॥
यो सिवराज को राज अडोल कियो सिव जोब[1] कहा ध्रुव[2] धू[3] है ?।
कामना दानि खुमान लखे न कछू सुर-रूख न देव-गऊ है ?
भूषन भूपन मै कुल भूषन भौंसिला भूप धरे सब भू है।
मेरु कछू न कछू दिगदंति न कुंडलि[4] कोल कछू न कछू है॥५२॥

उपमेयोपमा

लक्षण—दोहा

जहाँ परस्पर होत हैं उपमेयो उपमान।
भूषन उपमेयोपमा ताहि बखानत जान॥ ५३॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

तेरो तेज, सरजा समत्थ ! दिनकर सो है, दिनकर सोहै तेरे तेज के निकर सो। भौंसिला भुवाल ! तेरो जस हिमकर सोहै हिमकर सोहै तेरे जस के अकर[5] सो॥ भूषन भनत तेरो हियो रतनाकर सो रतनाकरौ है तेरे हिय सुखकर सो। साहि के सपूत सिव साहि दानि ! तेरो कर सुरतरु सोहै, सुरतरु तेरे कर सो॥ ५४॥

मालोपमा

लक्षण—दोहा

जहाँ एक उपमेय के होत बहुत उपमान।
ताहि कहत मालोपमा भूषन सुकबि सुजान॥ ५५॥

---

१ जो अब।

२ निश्चय करके।

३ ध्रुव नक्षत्र।

४ सर्प; यहाँ शेष जी।

५ आकर, कान (खानि)।

उदाहरण—कवित्त मनहरण

इंद्र जिमि जंभ पर बाड़व सुअंभ पर रावन सदंभ पर रघुकुल राज है। पौन बारिबाह[1] पर संभु रतिनाह पर ज्यों सहसबाहु पर राम द्विजराज है॥ दावा द्रुम दंड पर चीता मृगझुंड पर भूषन बितुड पर जैसे मृगराज है। तेज तम अंस पर कान्ह जिमि कंस पर त्यो मल्लिच्छ बंस पर सेर सिवराज है॥ ५६॥

ललितोपमा

लक्षण—दोहा

जहँ समता को दुहुन की लीलादिक पद होत।
ताहि कहत ललितोपमा सकल कबिन के गोत॥ ५७॥
बिहसत, निदरत, हँसत जहँ छबि अनुसरत बखानि।
सत्रु मित्र इमि औरऊ लीलादिक पद जानि॥ ५८॥

उदाहरण—कवित्त मनहरन

साहि तनै सरजा सिवा की सभा जामधि है मेरुवारी सुर की सभा को निदरति है। भूषन भनत जाके एक एक सिखर ते केते धौं नदी नद की रेल[2] उतरति है। जोन्ह को हँसति जोति हीरा मनि मंदिरन कंदरन मैं छबि कुहू[3] कि उछरति है। ऐसो ऊँचो दुरग महाबली[4] को जामैं नखतावली सों बहस दिपावली धरति है॥ ५९॥

---

१ बादल।

२ रेला, बड़ा बहाव।

३ अमावस्या की (अर्थात् कंदरों से अमावस्या की छबि उछल जाती है या आगे निकलती है, अर्थात् उनका अँधेरा दूर हो जाता है)।

४ बड़ा बलवान अर्थात् शिवराज।

रूपक

लक्षण—दोहा

जहाँ दुहुन को भेद नहि बरनत सुकबि सुजान ।
रूपक भूषन ताहि को भूषन करत बखान[1] ॥६०॥

उदाहरण—छप्पय (समाभेद रूपक)

कलिजुग जलधि अपार उद्धअधरम्म उम्मि[2] मय । लच्छनि लच्छ मलिच्छ कच्छ अरु मच्छ मगर चय ॥ नृपति नदीनद वृद होत जाको मिलि नीरस । भनि भूषन सब भुम्मि घेरि किन्निय सुअप्प बस ॥ हिंदुवान पुन्य गाहक बनिक तासु निबाहक साहि सुव[3] । बर बादवान किरवान धरि जस जहाज सिवराज तुव ॥ ६१ ॥

साहिन मन समरत्थ जासु नवरग[4] साहि सिरु । हृदय जासु अब्बास साहि[5] बहुबल बिलास थिरु ॥ एदिल[6] साहि कुतुब्ब[7] जासु जुग

---

१ भूषणजी ने रूपक का वही लक्षण दिया है जो अन्य कवियों ने "अभेद रूपक" का । जहाँ उपमान से अभेदता या तद्रूपता देने के लिये उपमेय का रूप रचा जावे, वहाँ रूपक होता है ।

२ ऊर्मि, लहर ।

३ सुत ।

४ औरगजेब, दिल्ली का सुप्रसिद्ध बादशाह ।

५ यह उस समय फारस का बादशाह था । इसीसे इसको "हृदय" कहा गया है । इसका शाहजहाँ और औरगजेब से मेल और लिखा पढी थी ।

६ आदिलशाह बीजापुर के बादशाहों की पदवी थी । इनके यहाँ शिवाजी के पिता साहजी भौसिला नौकर थे, पर शिवाजी ने युद्ध ठान दिया और इन्हे खूब ही छकाया ।

७ कुतुबशाह गोलकुडा के "बादशाह" की पदवी थी । दक्षिण मे पॉच खुदमुख्तार "बादशाहिया" थी, अर्थात् बीदर, अहमदनगर, एलिजपुर, बीजा-

भुज भूषन भनि । पाय म्लेच्छ उमराय काय तुरकानि आन गनि ।। यह रूप अवनि अवतार धरि जेहि जालिम जग दंडियव। सरजा सिव साहसखग्ग धरि कलिजुग सोइ खल खंडियव ।। ६२ ।।

अपरंच—कवित्त मनहरन

सिह[1] थरि जाने बिन जावली जॅगल भठी हठी गज एदिल पठाय करि भटक्यो । भूषन भनत देखि भभरि भगाने सब हिम्मत हिये मैं धरि काहुवै न हटक्यौ ।। साहि के सिवाजी गाजी, सरजा समत्थ महा मदगल अफजलै[2] पंजा बल पटक्यो । ता बिगिर[3] ह्वै करि निकाम निज

पुर और गोलकुंडा । प्रथम तीन को मुगलों ने पहले ही जीत लिया और अतिम दो को १६८८ ई० मे छीन लिया । इनको शिवाजी ने खूब ही सताया था ।

१ जावली देश के जगल को सिह के रहनेवाली भठी न जान कर हठी आदिलशाह हाथी रूपी अफजल खॉ को भेज कर चूक गया । थरि=सिह की भठी ।

२ अफजल खॉ एक बीजापुरी सरदार था और आदिलशाह की ओर से शिवाजी से लड़ने गया था । युद्ध के पहले ही अफजल खॉ ने शिवाजी के पिता को अपना मित्र बतला कर उनसे कहला भेजा कि "तुम हमारे मित्र-पुत्र अर्थात् भतीजे हो, इससे हमसे अकेले आकर मिलो । फिर चाहे लड़ना चाहे साथ करना" । शिवाजी यह विचार कर कि कदाचित् अफजल कोई छल करे, सादे कपड़ो के नीचे जिरहबखतर पहिन कर और व्याघ्रनख छिपा कर उससे मिलने गए । अफजल ने भेंटने के बहाने से शिवाजी को बगल मे जोर से दबा कर कटार से मारना चाहा, पर शिवाजी बच गए । उन्होंने व्याघ्रनख से अफजल की पसली नोच ली (छद नं० २५२ देखिए) और तलवार से उसका काम तमाम किया । उन्होंने पहले ही से अपनी सेना लगा रक्खी थी, सो एक दम वह अफजल की फौज पर टूट पड़ी और उसे तितर बितर कर दिया । यह घटना सन् १६५९ ईसवी की है ।

३ बगैर, बिना ।

श्याम कहँ आकुत[1] महाउत सुआँकुस लै सटक्यौ ॥ ६३ ॥

रूपक के दो अन्य भेद (न्यूनाधिक)

लक्षण—दोहा

घटि बढ़ि जहँ बरनन करै करिकै दुहुन अभेद ।
भूषन कवि औरो कहत द्वै रूपक के भेद ॥ ६४ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण (न्यूनाभेद रूपक)

साहि तनै सिवराज भूषन सुजस तव बिगिर कलंक चंद उर आनियतु है । पंचानन एक ही बदन गनि तोहि गजानन गज बदन बिना बखानियतु है ॥ एक सीस ही सहससीस कला करिबे को दुहूँ दृग सों सहस दृग मानियतु है । दुहूँ कर सों सहसकर मानियतु तोहि दुहूँ बाहु सों सहसबाहु जानियतु है ॥ ६५ ॥

(अधिकाभेद रूपक)

जेते हैं पहार भुव माहि पारावार तिन सुनि कै अपार कृपा गहे सुख फैल है । भूषन भनत साहि तनै सरजा के पास आइबे को चढ़ी उर हौंसनि की ऐल[2] है ॥ किरवान वज्र सो बिपच्छ करिबे के डर आनिकै कितेक आए सरन की गैल है । मघवा[3] मही मैं तेजवान सिवराज बीर कोट करि सकल सपच्छ किए सैल है ॥ ६६ ॥[4]

---

१ याकूत खाँ इतिहास में कई थे । एक याकूत खाँ शाहजहाँ का सरदार था । यहाँ बीजापुरी सरदार उस सिद्दी कासिम याकूत खाँ से प्रयोजन है जो सन् १६७१ में शिवाजी की सेना से दंडराजपुर में लड़ा था ।

२ ऐल=बूढा (ग्राम्य भाषा "अहिलो") ।

३ इद्र ने पहाड़ों के पंख वज्र से काट डाले थे, उसी पर उक्ति है ।

४ इसी भाँति सम, अधिक और न्यून तद्रूप रूपक भी होते है जो भूषण ने नहीं लिखा है ।

परिणाम

लक्षण—दोहा

जहँ अभेद करि दुहुन सों करत और स्वे[1] काम।
भनि भूषन सब कहत हैं तासु नाम परिनाम ॥ ६७ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

भौंसिला भूप बली भुव को भरु भारी भुजंगम सों भुज लीनों। भूषन तीखन तेज तरन्नि सों बैरिन को कियो पानिप हीनो ॥ दारिद दौ[2] करि वारिद सो दलि त्यों धरनीतल सीतल कीनो। साहितनै कुल चंद सिवा जस-चंद सों चंद कियो छबि छीनो ॥ ६८ ॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

वीर विजैपुर के उजीर निसिचर गोलकुंडावारे घूघू ते उड़ाए हैं जहान सों। मंद करी मुखरुचि चंद चकता की, कियो भूषन भूषित द्विज चक्र खानपान सों ॥ तुरकान मलिन कुमुदिनी करी है हिंदुवान नलिनी खिलायो विविध बिधान सो। चारु सिव नाम को प्रतापी सिव साहि सुव तापी सब भूमि यों कृपान भासमान सों ॥ ६९ ॥[3]

---

१ अपना।

२ दौरहा, सूखे जंगल में चारों तरफ से लगनेवाली आग। (दरिद्र रूपी दौरहा को गज (दान) रूपी मेघ से नाश करके)।

३ परिणाम और रूपक में भेद दिखलाने मे कुछ आचार्य्यों मे मतभेद है। भूषण साहित्य दर्पण और सर्वस्वकार पर चले है। इनका मत है कि यदि उपमान की क्रिया हो तो परिणाम है और यदि उपमेय की हो तो रूपक। इतरों का विचार है कि उपमान की क्रिया होने से रूपक और उपमेय वाली से परिणाम है। यहाँ धर्म क्रिया रूप उपमान का है।

उल्लेख

लक्षण—दोहा

कै बहुतै कै एक जहँ एक वस्तु को देखि।
बहु विधि करि उल्लेख है सो उल्लेख उलेखि ॥ ७० ॥

(बहुतो द्वारा उल्लेख) उदाहरण—मालती सवैया

एक कहैं कलपद्रुम है इमि पूरत है सब की चित चाहै।
एक कहै अवतार मनोज को यों तन मैं अति सुंदरता है ॥
भूषन एक कहै महि इंदु यों राज बिराजत बाढ्यो महा है।
एक कहै नरसिंह है संगर एक कहैं नरसिंह सिवा है ॥७१॥

पुनरपि यथा—मनहरण दंडक

कवि कहै करन,[1] करनजीत[2] कमनैत, अरिन के उर माहि कीन्ह्यो इमि छेव है। कहत धरेस सब धराधर सेस ऐसो और धराधरन को मेट्यो अहमेव है ॥ भूषन भनत महाराज सिवराज तेरो राज काज देखि कोऊ पावत न भेव है। कहरी यदिल, मौज लहरी कुतुब कहै, बहरी निजाम के जितैया कहै देव है ॥ ७२ ॥

(एक द्वारा उल्लेख)

पेज प्रतिपाल भूमिभार को हमाल[3] चहुँ चक्क को अमाल[4] भयो दंडक जहान को। साहिन को साल भयो ज्वाल को जवाल भयो हर को कृपाल भयो हार के बिधान को ॥ बीर रस ख्याल सिवराज भुवपाल तुव हाथ को बिसाल भयो भूषन बखान को ? तेरो करबाल भयो दच्छिन को ढाल, भयो हिंदु को दिवाल, भयो काल तुरकान को ॥ ७३ ॥

---

१ कर्ण (बड़ा दानी था)।

२ अर्जुन जिसने कर्ण जैसे महावीर को जीत लिया।

३ बोझ उठानेवाला, हामिल।

४ आमिल, हाकिम।

स्मृति

लक्षण—दोहा

सम सोभा लखि आन की सुधि आवति जेहि ठौर।
स्मृति भूषन तेहि कहत हैं भूषन कवि सिरमौर[1] ॥ ७४ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

तुम सिवराज ब्रजराज अवतार आजु तुमही जगत काज पोषत भरत हौ। तुम्हैं छोडि याते काहि बिनती सुनाऊँ मैं तुम्हारे गुन गाऊँ तुम ढीले क्यो परत हौ ? ॥ भूषन भनत वहिकुल[2] मैं नयो गुनाह नाहक समुझि यह चित मैं धरत हौ। और बाँभनन देखि करत सुदामा सुधि मोहि देखि काहे सुधि भृगु की करत हौ ? ॥ ७५ ॥

भ्रम[3]

लक्षण—दोहा

आन बस्तु को आन मैं होत जहाँ भ्रम आय।
तासो भ्रम सब कहत हैं, भूषन सुकवि बनाय ॥ ७६ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

पीय पहारन पास न जाहु यो तीय बहादुर सो कहै सोषै।
कौन बचै है नवाब तुम्हैं भनि भूषन भौंसिला भूप के रोषै ? ॥

---

१ स्मृति मे अप्रसगी से प्रसगी का स्मरण रहता है।

२ उस (ब्राह्मण अर्थात् भृगुजी के) कुल मे उत्पन्न होने भूषण कहते है कि मुझ पर ब्राह्मण कुल मे उत्पन्न होने का नया गुनाह आप लगाते है और विष्णु के अवतार होने के कारण मुझ पर आप नाराज होते है, क्योंकि भृगु ने विष्णु को लात मारी थी।

३ भ्रातिमान मे भ्रम मात्र है तथा उल्लेख मे स्थापित गुण सच्चाई के कारण यथार्थता भी लिये हुए रहता है।

[1]बंदि सइस्तखँहू को कियो जसवंत से भाऊ करन्न[2] से दोषै ।
सिंह सिवा के सुबीरन सों गो अमीर न बाचि गुनीजन घोषै[3] ॥७७॥

संदेह[4]

लक्षण—दोहा

कै यह कै वह यों जहाँ होत आनि संदेह ।
भूषन सो संदेह है या मैं नहि संदेह ॥ ७८ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

आवत गुसुलखाने ऐसे कछु त्योर ठाने जाने अवरंग जू के प्रानन को लेवा है । रस खोट[5] भए ते अगोट आगरे मैं सातौ चौकी डाँकि आनि घर कीन्हीं हद रेवा है ॥ भूषत भनत वह चहूँ चक्क चाहि कियो पातसाहि चकता की छाती माहि छेवा है । जान्यो न परत ऐसे काम है करत कोऊ गंधरब देवा है कि सिद्ध है कि सेवा है ॥ ७९ ॥

---

१ इस छंद मे भ्रमालकार निकलता नही है, हॉ खीचतान से कह सकते हैं कि शाइस्ता खाँ मे बदी होने का भ्रम हो गया, यद्यपि वे बदी नही हुए थे वरन् केवल भगाये गये थे । भ्रांतिमान मे सादृश्य के कारण प्रस्तुत मे अप्रस्तुत का धोखा होता है ।

२ करणसिंह बीकानेर के महाराज थे । ये दो हजारी थे । इनका युद्ध शिवाजी से सन् १६५७ मे अहमदनगर में हुआ था । ये कारतलब खॉ तथा खान दौरां नौशेरी खाँ के साथ सेनानायक थे ।

३ घोषणा करता है ।

४ सदेह में समतयो भूषन बकुपमेय में उपमान का सशय कई प्रकार से किया जाता है किंतु निश्चय किसी पर नहीं होता ।

५ रस खोटा होना (औरंगजेब ने जिन वादों से शिवाजी को बुलाया था उनका पालन न होने से रस जाता रहा) और आगरे में लप्पाझप्पी कर शिवाजी ने औरगजेब की सातों चौकियाँ लाँघ कर रेवा (नर्मदा नदी) पार आ उसी को अपने राज्य की सीमा बनाया ।

शुद्ध अपन्हुति = शुद्धापन्हुति[1]

लक्षण—दोहा

आन बात आरोपिए साँची बात दुराय।
शुद्धापन्हुति कहत हैं भूषन सुकवि बनाय॥ ८०॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

चमकती चपला न, फेरत फिरंगैं[2] भट इंद्र को न चाप रूप बरष[3] समाज को। धाए धुरवा न, छाए धूरि के पटल, मेघ गाजिबो न बाजिबो है दुंदुभि दराज को॥ भौंसिला के डरन डरानी रिपुरानी कहैं, पिया भजौ, देखि उदौ पावस के साज को। घन की घटा न, गज घटनि सनाह साजे भूषण भनत आयो सेन सिवराज को॥ ८१॥

हेतु अपन्हुति = हेत्वपन्हुति

लक्षण—दोहा

जहाँ जुगुति[4] सों आन को कहिए आन छपाय।
हेतु अपन्हुति कहत हैं ताकहँ कबि-समुदाय॥ ८२॥

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा के कर लसै सो न होय किरवान।
भुज भुजगेस भुजंगिनी भखति पौन अरि प्रान॥ ८३॥

---

१ सभी प्रकार की अपन्हुति में आहार्य्यता रहती है। शुद्धापन्हुति में मुख्य उपमेय का निषेध होकर अतथ्य उपमान का स्थापन होता है।

२ शायद भाला या विलायती तलवार।

३ झंडी।

४ कारण कहकर। अन्य आचार्य्य इसमे कारण का कथन प्रकट रूप से करते हैं, किन्तु भूषण ने दोनों उदाहरणों में कारण को प्रकट न करके ऊह्य मात्र रक्खा है।

पुनरपि—कवित्त मनहरण

भाखत सकल सिव जी को करवाल पर भूषन कहत यह करि कै विचार को। लीन्हो अवतार करतार के कहे तें कलि म्लेच्छन हरन उद्धरन भुव भार को॥ चंडी ह्वै घुमंडि अरि चंड मुंड चाबि करि पीवत रुधिर कछु लावत न बार को। निज भरतार भूत भावन की भूख मेटि भूषित करत भूतनाथ भरतार को॥ ८४॥

पर्य्यस्त अपन्हुति = पर्य्यस्तापन्हुति[1]

लक्षण—दोहा

वस्तु गोय ताको धरम आन वस्तु मैं रोपि।
पर्यस्तापन्हुति कहत कबि भूषन मति वोपि॥ ८५॥

उदाहरण—दोहा

काल करत कलिकाल मैं नहिं तुरकन को काल।
काल करत तुरकान को सिव सरजा करवाल॥ ८६॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

तेरे ही भुजान पर भूतल को भार कहिबे को सेसनाग दिगनाग हिमाचल है। तेरो अवतार जग पोसन भरनहार कछु करतार को न तामधि अमल है॥ साहिन मैं सरजा समत्थ सिवराज कवि भूषन कहत जीबो तेरोई सफल है। तेरो करवाल करै [illegible]च्छन को काल बिनु काज होत काल बदनाम धरातल है॥ ८७॥

---

१ इस अलंकार मे सिवाय लक्षण मे दी हुई बातों के यह भी आवश्यक है कि एक पद दोहरा कर आवे। कवि के उदाहरण में यह बात विद्यमान है; पर लक्षण से छूट रही है। इसमें किसी वस्तु का धर्म निषेधित होकर अन्य वस्तु में वर्णित होता है और प्रायः कुछ पद दोहरा कर आते हैं।

भ्रांत अपन्हुति = भ्रांतापन्हुति

लक्षण—दोहा

संक आन को होत ही जहँ भ्रम कीजै दूरि।
भ्रांतापन्हुति कहत हैं तहँ भूषन कबि भूरि ॥ ८८ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

साहितनै सरजा के भय सों भगाने भूप मेरु मैं लुकाने ते लहत जाय बोत[1] हैं। भूषन तहाऊँ मरहट्टपति के प्रताप पावत न कल अति कौतुक उदोत है ॥ "सिव आयो सिव आयो" संकर के आगमन सुनि कै परान ज्यों लगत अरि गोत[2] है। "सिव सरजा न यह सिव है महेस" करि योंहीं उपदेस जच्छ रच्छक से होत हैं ॥ ८९ ॥

पुनः—मालती सवैया

एक[3] समै सजि कै सब सैन सिकार को आलमगीर सिधाए।
"आवत है सरजा सम्हरौ" एक ओर ते लोगन बोल जनाए ॥
भूषन भो भ्रम औरँग के सिव भौंसिला भूप कि धाक धुकाए।
धायकै "सिंह" कह्यो समुझाय करौलनि[4] आय अचेत उठाए ॥९०॥

छेक अपन्हुति = छेकापन्हुति = कहिमुकरी

लक्षण—दोहा

जहाँ और को संक करि साँच छिपावत बात।
छेकापन्हुति कहत हैं भूषन कबि अवदात ॥ ९१ ॥

[5]उदाहरण—दोहा

तिमिर बंस हर अरुन कर आयो, सजनी भोर?
सिव सरजा, चुप रहि सखी, सूरज-कुल-सिरमोर ॥९२॥

---

१ ओक, घर। २ गोत्र। ३ भयानक रस। ४ शिकार खेलानेवाले।

५ इसमे वक्ता अपने ही कथन का सच्चा प्रयोजन छिपाकर अतथ्य का कथन करता है।

दुरगहि बल पजन प्रबल सरजा जिति रन मोहिं।
औरंग कहै देवान सो सपन सुनावत तोहि ॥९३॥
सुनि सु उजीरन यो कह्यो "सरजा, सिव महराज ?"
भूषन कहि चकता सकुचि "नहि, सिकार मृगराज" ॥९४॥

कैतव अपन्हुति = कैतवापन्हुति

लक्षण—दोहा

जहँ कैतव[1], छल, ब्याज मिसि इन सो होत दुराव।
कैतवपन्हुति ताहि सो भूषन कहि सतिभाव ॥ ९५ ॥

उदाहरण—कवित्त दडक (मनहरण)

साहिन[2] के सिच्छक सिपाहिन के पातसाह सगर मैं सिह कैसे जिनके सुभाव हैं। भूषन भनत सिव सरजा की धाक तै वै काँपत रहत चित गहत न चाव हैं॥ अफजल की अगति सासता की अपगति बहलोल[3] विपति सो डरे उमराव है। पक्का मतो करिकै मलिच्छ

---

१ धोखा।

२ भयानक रसपूर्ण। कवि गोविद गिल्लाभाईजी की हस्तलिखित प्रति मे यह छद पर्यायोक्ति के उदाहरण मे दिया गया है, पर अन्य सभी प्रतियो मे कैतवापन्हुति ही के उदाहरण मे पाया जाता है।

३ बहलोल खाँ सन् १६३० ई० मे निजामशाही बादशाह के यहाँ था और शाहजहाँ बादशाह की सेना इसे न दबा सकी। सन् १६६१ में इसने बीजापुर सरकार की सेवा ग्रहण कर ली और शिवाजी से युद्ध करने को यह भेजा गया। इस बीच मे सिद्दी जौहर नामक सेनापति बीजापुर सरकार से बिगड खडा हुआ और बहलोल ने (जिसका पूरा नाम अब्दुलकरीम बहलोल खाँ था) उसे परास्त किया। मार्च सन् १६७३ मे इसे खवास खाँ वजीर ने शिवाजी से लडने को भेजा। पहले इसने पनाले पर मरहठों को मुगलों की सहायता से हराया, किंतु पीछे से उसी युद्ध मे स्वय शिवाजी ने आकर इसे

मनसब छोड़ि मक्का ही के मिसि[1] उतरत दरियाव हैं ॥ ९६ ॥

साहि तनै सरजा खुमान सलहेरि[2] पास कीन्हों कुरुखेत खीझि मीर

हराकर पनाला छीन लिया। थोड़े ही दिनों में पनाला वापस लेने को यह फिर मरहठों से लड़ने गया; परंतु मरहठों ने इसे घेर कर खूब ही तंग किया और बड़ी कठिनाई से इसका पिंड छोड़ा (उन्होंने इसे वास्तव मे बंदी नही बना पाया जैसा कि द नं० ३५ मे लिखा है)। फरवरी, मार्च सन् १६७४ में इसे शिवाजी के सेनापति हंसाजी मोहिते ने जेसारी पर हराया। सन् १६७५ मे बहलोल के इशारे से खवास खॉ मार डाला गया और उसके ठौर बहलोल बीजापुर के नाबालिग बादशाह का वली (Regent) बनाया गया। इसने खानजहॉ बहादुर को परास्त कर मुगलों से मेल किया। सन् १६७७ में शिवा जीने कुतुबशाह से मेल किया जिसमें एक शर्त यह भी थी कि बहलोल बीजापुर के राज्याधिकार से हटा दिया जाय। इस पर बहलोल मुगल सरदार खानजहॉ बहादुर को साथ ले कुतुबशाह पर चढ़ धाया, पर उसे मदन्न पंत ने, जो कुतुबशाह का वजीर था, घोर युद्ध करके परास्त किया। छंद नं० १६१ और २१६ देखिये। सन् १६७७ मे यह मरा।

१ शिवाजी मक्का जानेवाले सैयदों को प्रायः नही सताते थे।

२ सलहेरि के किले को शिवाजी के प्रधान मंत्री मोरोपंत ने १६७१ ई० में जीत लिया था। तभी से इस पर शिवाजी का अधिकार हुआ। दूसरे ही साल १६७२ ई० में दिल्ली के सेनापति दिलेर खॉ (जिसे लोग दलेल खाँ भी कहते है) और खॉ जहॉबहादुर ने इसे घेरा और शिवाजी ने मोरोपंत और प्रतापराव गूजर के आधिपत्य मे एक महती सेना उनसे लड़ने को भेजी। ये सेनापति स्वयं तो न लडे पर इन्होंने इखलास खॉ को एक बहुत बड़ी सेना सहित लड़ने को भेजा। इस बडे ही विकट संग्राम में मुगलों को बड़ी हानि पहुँची और उनके मुख्य सेनानायकों में से २२ मारे गए और अनेक बंदी हुए एवं समस्त सेना एकदम तितर बितर हो गई। तभी तो भूषणजी ने इसका ऐसा भयंकर

अचलन सो। भूषन भनत बलि करी है अरीन धर धरनी प डारि नभ प्रान दै बलन सो ॥ अमर[1] के नाम के बहाने गो अमरपुर चंदावत लरि सिवराज के दलन सों। कालिका प्रसाद के बहाने ते खवायो महि बाबू उमराव राव पसु के छलन सो ॥ ९७ ॥

उत्प्रेक्षा

लक्षण—दोहा

आन बात को आन मैं जहँ संभावन[2] होय।
वस्तु, हेतु, फलयुत कहत उत्प्रेक्षा है सोय ॥९८॥

उदाहरण । उक्त विषया वस्तूत्प्रेक्षा[3]—मालती सवैया

दानव आयो दगा करि जावली[4] दीह भयारो महामद भारथौ।

वर्णन भी किया है (छद नं० २२६, २९२, ३३१, ३५५ एवं शिवाबावनी के न० २५ व २६)।

१ अमरसिंह चदावत भी इसी युद्ध मे मारा गया था। यह भारी सरदार था। भूषणजी ने बराबर इसके विषय में संमानपूर्वक लिखा है और शिवाजी की प्रशसा करते हुए यहाँ तक कहा है कि "हिंदु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौ कोइ टूटै (छद न० १५५, २२५, २३९, २७५ देखिए) मेवाड़ (उदयपुर) के प्रसिद्ध चदा जी के वंशधर लोग "चदावत" कहलाते है।

२ समझना। उत्प्रेक्षा से उपमेय का वस्तु, हेतु या फल रूप मे बनावटी (आहार्य्य) सशय-ज्ञान उपमान कोटि में प्रबल होता है। यह संभावना जनु, मनु, मानो आदि वाचकों द्वारा होती है। जहाँ ये वाचक ऊह्य रूप मे होते हैं वहाँ गम्योत्प्रेक्षा होती है। जहाँ यह संशय ज्ञान उपमान कोटि मे प्रबल न होकर समभाव मात्र मे रहे, वहाँ संदेहमान अलंकार होता है।

३ उक्त विषया वस्तूत्प्रेक्षा में उत्प्रेक्षा का विषय कथित होता है। उदाहरण मे कवि मयंद द्वारा गयंद का पछारा जाना कहता भर है, किंतु जानता है कि बात वह है नहीं। तो भी आरोप उसी का करता है।

४ अफजल खाँ जावली में मारा गया था।

भूषन बाहुबली सरजा तेहि भेटिबे को निरसंक पधारयौ॥ बीछू के घाय गिरे अफजल्लहि ऊपर ही सिवराज निहारयो। दाबि यों बैठो नरिंद अरिंदहि मानो मयद गयंद पछारयो॥ ९९॥

साहि तनै सिवसाहि निसा मैं निसाँक लियो गढ़सिंह[1] सोहानौ।

---

१ इसका नाम पहले कोंडाने था ; पर जब यह किला १६४७ मे शिवाजी के अधिकार मे आया, तब उन्होंने इसका नाम सिंहगढ़ रख दिया। १६६५ में शिवाजी ने इसे जयसिंह को दे दिया। यह सह्याद्रि पर्व्वतमाला के पूरबी किनारे पर था जहाँ से पुरंधर पहाड़ी दक्षिण (Deccan) की ओर मुड़ जाती है। यह बड़ा ही अभेद्य दुर्ग था, पर शिवाजी को दबकर इसे जयसिंह को देना ही पड़ा। सन् १६७० ई० की माघ बदी ६ की रात को इसे फिर जीत लेने के लिये शिवाजी के बहादुर सरदार वीरवर तानाजी ने तैयारी की। इस अवसर पर शिवाजी ने, जो किलेदार उदयभानु राठौर की बहादुरी को भली भाँति जानते थे, अपने दरबार मे पान का बीड़ा रख कर अपने सरदारो से कहा था कि "कौन ऐसा वीर है जो यह बीड़ा उठावे और उदयभानु से लड़कर सिंहगढ़ छीन ले ?" किसी की हिम्मत न पड़ी पर तानाजी ने बीड़ा उठाया। यह बात सुनकर उसके भाई सुरयाजी ने उसे समझाया कि उदयभानु बड़ा वीर है पर जब तानाजी ने एक न मानी तब सुरया भी उसके साथ हो लिया और दोनों भाई सेना सहित किले पर जा टूटे। तीन सौ मरहठे किले के ऊपर पहुँच गए और तब उदयभानु को इसका पता लगा। बस फिर क्या था, घोर युद्ध प्रारंभ हुआ जिसमे उदयभानु के साथी भाग निकले। तब उदयभानु ने तानाजी को द्वंद्व युद्ध के लिये ललकारा और बहादुरी के जोश मे तानाजी अपने साथियों को पीछे छोड़ अकेला ही उससे जा भिड़ा पर दुर्भाग्यवश लड़ कर मर गया। तब तो बड़े वेग से तानाजी का वृद्ध मामा शैलर ससैन्य जा टूटा और इसने सारी सेना का काम ही तमाम कर दिया तथा किला मरहठों के हाथ लगा। जब शिवाजी ने यह समाचार सुना, तब उन्होंने बड़े शोक में

राठिवरो को सँहार भयो लरिकै सरदार गिरयो उदैभानौ[1] ॥ भूषन यों घमसान भो भूतल घेरत लोथिन मानो मसानौ। ऊँचे[2] सुछज्ज छटा उचटी प्रगटी परभा परभात की मानौ ॥ १०० ॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

दुरजनदार भजि भजि बेसम्हार चढ़ीं उत्तर पहार[3] डरि सिवजी नरिंद ते। भूषन भनत बिन भूषन बसन, साधे भूखन पियासन है नाहन को निंदते ॥ बालक अयाने बाट बीचही बिलाने कुम्हिलाने मुख कोमल अमल अरबिंद ते। दृगजल[4] कज्जल कलित बढ़्यो कढ़्यो मानो दूजा सोत तरनितनूजा को कलिंद[5] ते ॥ १०१ ॥

अनुक्तविषया[6]वस्तूत्प्रेक्षा—यथा दोहा

महाराज सिवराज तव सुघर धवल धुव कित्ति।
छबि छटान सो छुवति सी छिति अंगन दिग भित्ति ॥ १०२ ॥

आकर कहा कि "गढ तो मिला पर हाय! सिंह (तानाजी) जाता रहा।" ("गढ आला पण सिंह गेळा.") यह किला तब से सदा शिवाजी के पास रहा।

१ उदयभानु किलेदार जिसका हाल पिछले पृष्ठ के नोट मे लिखा गया है।

२ इस युद्ध मे तानाजी मलूसरे किले के छज्जों से आँगन में ससैन्य कूदा था।

३ हिमाचल।

४ भयानकरसपूर्ण। उस समय की कठोरता को देखिए कि कोमलचित्त ब्राह्मण होकर भी भूषणजी को बेचारे बालको पर भी दया न आई और उनकी महा दुर्गति का आप कैसे आनदपूर्वक वर्णन कर रहे है।

५ वह पहाड़ जिससे यमुनाजी निकली है। इसीसे उनका नाम कालिंदी है।

६ अनुक्तविषया मे उत्प्रेक्षा का विषय अकथित रहता है। यहाँ मुख्यता कीर्तिवाली चाँदनी की है, किन्तु कवि ने चाँदनी न कह कर केवल कीर्ति की छबि का पृथ्वी, आँगन आदि का छूना कहा है।

सिद्ध विषया[1] हेतूत्प्रेक्षा—कवित्त मनहरण

लूट्यो खानदौरा[2] जोराबर[3] सफजंग[4] अरु लह्यो कारतलबखाँ[5] मनहुँ अमाल हैं। भूषन भनत लूट्यो पूना मैं सइस्तखांन[6] गढन मैं लूट्यो त्यो गढ़ोइन[7] को जाल है॥ हेरि हेरि कूटि सलहेरि बीच सरदार घेरि घेरि लूट्यो सब कटक कराल है। मानो हय हाथी उमराव करि साथी अवरंग डरि सिवाजी पै भेजत रिसाल[8] है॥ १०३॥

---

१ हेतूत्प्रेक्षा मे अहेतु को हेतु करके कहते हैं। सिद्ध विपया मे अहेतु सभव है किंतु असिद्ध विषया में असंभव। कवि ने केवल सिद्ध विषया कही है।

२ खानदौराँ को शाहजहाँ ने १६३४ ई० मे दक्षिण का सूबेदार नियत किया था। बादशाह की ओर से उसने बीजापुरवालों से युद्ध कर लाभदायक संधि की। बाद को औरंगजेब ने इसे इलाहाबाद का किला जीतने भेजा। इसका नाम नौशेरी खाँ था (छ्द न० ३०७ देखिए) पर मुगलों के लिये अनेक किले जीतने पर इसे खानदौराँ की पदवी मिली। यह सन् १६५० मे अहमदनगर मे शिवाजी से लडा।

३ यह नाम इतिहास में नही मिलता। या तो यह शब्द विशेषण मात्र है अथवा इस नाम का कोई साधारण सरदार होगा।

४ और ५ कारतलब खाँ सन् १६५४ मे अहमदनगर पर शिवाजी से लड़ा था। किसी किसी प्रति मे पाठकार के स्थान पर मार है, पर शुद्ध कार ही समझ पड़ता है। सफजग का नाम छत्र-प्रकाश मे छत्रसाल जी से लडनेवालों में लिखा है। यह दिल्ली का सरदार था और इसका ठीक नाम सफदरजग था। इसका कोई युद्ध शिवाजी से नही मिलता।

६ शाइस्ता खाँ (छंद न० ३५ नोट देखिए)।

७ गढ़पतियों अथवा किलेदारों को।

८ इरसाल, खिराज, या जो किसी के पास भेजा जावे।

सिद्धविषया[1] फलोत्प्रेक्षा—मनहरण दंडक

जाहि पास जात सो तौ राखि ना सकत याते तेरे पास अचल सुप्रीति नाधियतु है। भूषन भनत सिवराज तव कित्ति सम और की न कित्ति कहिबे को काँधियतु है॥ इंद्र कौ अनुज तें उपेंद्र अवतार याते तेरो बाहुबल लै सलाह साधियतु है। पाय तर आय नित निडर बसायबे कौ कोट बाँधियतु मानो पाग बाँधियतु है॥ १०४॥

दोहा

दुवन सदन सब के बदन सिव सिव आठौ याम।
निज बचिबे को जपत जनु तुरकौ हर को नाम॥ १०५॥

गमगुप्तोत्प्रेक्षा (गम्योत्प्रेक्षा)

लक्षण—दोहा

मानो इत्यादिक बचन आवत नहि जेहि ठौर।
उत्प्रेक्षा गम गुप्त सो भूषण कहत अमौर॥ १०६॥

उदाहरण—मनहरण

देखत ऊँचाई उदरत[2] पाग, सूधी राह घोस हूँ मैं चढ़ैं ते जे साहस निकेत है। सिवाजी हुकुम तेरो पाय पैदलन सलहेरि परनालो[3] ते वै

१ फलोत्प्रेक्षा में अफल फल कहा जाता है, जो सिद्ध विषया में संभव और असिद्ध विषया में असभव होता है। कवि ने असिद्ध विषया नहीं कही है।

२ गिरती है, उतरती है।

३ यह किला १६५६ के अत में शिवाजी के अधिकार में आया। बीजापुर की ओर से सिद्दी जौहर ने इसे मई १६६० में फिर छीन लेने के विचार से घेरा, पर वह सफल मनोरथ न हुआ। तब स्वयं बीजापुराधीश ने १६६१ में इसे घेर कर जीत लिया, परतु शिवाजी ने इसे मार्च १६७३ ई० में फिर से छीनकर अपने अधिकार मे कर लिया। सन् १६७६ में एक बार शिवाजी ने इसे फिर खोया और जीता।

जीते जनु[1] खेत है ॥ सावन भादो की भारी कुहू की अँध्यारी चढ़ि दुग्ग पर जात मावलीदल[2] सचेत है । भूषन[3] भनत ताकी बात मैं बिचारी तेरे परताप रवि की उज्यारी गढ़ लेत है ॥ १०७ ॥

पुन दोहा

और गढ़ोई नदी नद सिव गढ़पाल दरयाव[4] ।
दौरि दौरि चहुँ ओर ते मिलत आनि यहि भाव ॥ १०८ ॥

रूपकातिशयोक्ति[5]

लक्षण—दोहा

ज्ञान करत उपमेय को जहँ केवल उपमान ।
रूपकातिशय-उक्ति सो भूषन कहत सुजान ॥ १०९ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

बासव से बिसरत बिक्रम की कहा चली, बिक्रम लखत बीर बखत-बुलंद के । जागे तेज बृंद सिवा जी नरिंद मसनद माल मकरंद कुलचंद साहिनंद के । भूषन भनत देस देस बैरि नारिन मै होत अचरज घर घर दुख दंद के । कनकलतानि[6] इंदु, इंदु माहि अरबिंद, झरैं अरबिंदन ते बुंद मकरंद के ॥ ११० ॥

---

१ जैसे साफ मैदान हो, अर्थात् इतने ऊँचे किलों पर पैदल गए यों चढ गए जैसे कोई समथल भूमि पर दौडे ।

२ पहाडी देश के रहनेवाले शिवाजी के पैदल सिपाही ।

३ इस छंद मे गम्योत्प्रेक्षा अलंकार बहुत साफ नहीं है, किंतु निकल आता है ।

४ समुद्र ।

५ भूषण ने अतिशयोक्ति के छ भेदा म सापन्हवातिशयोक्ति नहीं कही है ।

६ सोने की बौंडी (सी देह) मे चंद्रमा (सा मुख), चंद्रमा (से मुख) मे कमल (से नेत्र) और कमल (जैसे नेत्रो) से मकरंद (के समान आँसू) बूँद झर रहे हैं ।

भेदकातिशयोक्ति

लक्षण—दोहा

जेहि थर आनहि भाँति की बरनत बात कछूक।
[1]भेदकातिसय-उक्ति सो भूषन कहत अचूक॥ १११॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

श्री नगर[2] नयपाल जुमिला[3] के छितिपाल भेजत रिसाल[4] चौर गढ़ कुही बाज की। मेवार[5] ढुँढ़ार[6] मारवाड़[7] औ बुँदेलखंड[8] झारखंड[9]

---

१ इसमें वर्ण्य में कुछ अंतर दिखलाया जाता है।

२ काश्मीर की राजधानी।

३ इस नाम के किसी स्थान का पता नही चलता। एक स्थान जलना था जो औरंगाबाद के पूरब की ओर जयदेव राय मनसबदार दिल्ली के देश मे बसा था। अथवा यह फारसी शब्द जुमला (अर्थात् सब कहीं के) हो सकता है।

४ इरसाल, खिराज।

५ उदयपुर की रियासत।

६ रियासत अंबर अर्थात् जयपुर।

७ रियासत जोधपुर।

८ इसमें अब चार सरकारी जिले झाँसी, बाँदा, हमीरपुर और जालौन, एवं जिला इलाहाबाद की तीन तहसीलें और २०–२२ देशी रियासतें हैं। छत्रसाल के पिता चंपतिराय ने कुछ दिनों मुगलों की सेवा स्वीकार की थी और बुंदेलखंड के अन्य सरदार भी औरंगजेब के वशीभूत हो गए थे। इसका विस्तृत हाल भूमिका में देखिए।

९ उड़ीसा में गोंडवाने के पूरब में है। इस उड़ीसा को काशी कहते हैं, क्योंकि यहाँ पहले संस्कृत की बड़ी चर्चा थी।

बाँधौ धनी[1] चाकरी इलाज की ॥ भूषन जे पूरब पछाँह नरनाह ते वै ताकत पनाह दिलीपति सिरताज की। जगत को जैत वार जीत्यो अवरगजेव न्यारी रीति भूतल निहार सिवराज की ॥ ११२ ॥

अक्रमातिशयोक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु अरु काज मिलि होत एक ही साथ।
अक्रमातिसय-उक्ति सो कहि भूषन कबिनाथ ॥ ११३ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

उद्धत अपार तव दुदुभी धुकार सग लघै पारावार बाल बृद रिपुगन के। तेरे चतुरग के तुरगन के रँगेरज[2] साथही उड़ात रजपुज[3] है परन[4] के ॥ दच्छिन के नाथ सिवराज ! तेरे हाथ चढै धनुष के साथ गढ कोट दुरजन के। भूषन असीसैं, तोहि करत कसीसैं[5] पुनि बानन के साथ छूटै प्रान तुरकन के ॥ ११४ ॥

चंचलातिशयोक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु चरचाहि मैं काज होत ततकाल।
चचलातिसय-उक्ति सो भूषन कहत रसाल ॥ ११५ ॥

---

१ बाधव का राजा। भूषणजी का तात्पर्य यह है कि इतने इतने नामी देशों के राजा महाराजा औरगजेब को कर देते, उसकी सेवा तक स्वीकार करते एव उसकी शरण मे रहते थे, पर शिवाजी का ढग कुछ न्यारा ही था। वे बादशाह की बिलकुल परवा न करते और उनसे सदा लडाई झगडा करते थे।

२ घोडों के धूल से रँग जाने से अर्थात् धावे के लिये चलने ही से।

३ राज्यश्री का ढेर।

४ शत्रुओं के। इस पद मे पूर्ण भयानक रस है।

५ कशिश करते ही अर्थात् बाण खींचते ही।

उदाहरण—दोहा

आयो आयो सुनत ही सिव सरजा तुव नावँ।
बैरि नारि दृग जलन सों बूड़ि जात अरि गावँ॥ ११६॥

अन्यच्च–कवित्त मनहरण

गढ़नेर[1] गढ़[2] चाँदा[3] भागनेर[4] बीजापुर नृपन कि नारी रोय हाथन मलति है। करनाट[5] हबस[6] फिरंगहू[7] विलायत[8] बलख[9] रूम[10] अरितिय

---

१ व २ गढनेर अर्थात् नगरगढ नामक एक देश कड़ा मानिकपुर के समीप था जिसमे पहाड़ियाँ और जंगल बहुत थे। इसे मुगलों ने १५६० मे जीत लिया।

३ इसे मरहठों ने अपने अधिकार में कर लिया था और अंत को कर्नल ऐडम्स ने उनसे मई सन् १८१८ मे जीत लिया।

४ भागनेर अर्थात् भागनगर को गोलकुडावाले मुहम्मद कुतुबुल्मुल्क ने अपनी प्रिय पत्नी भागमती के नाम पर चार मील पर बसाया था। यही वर्त्तमान हैदराबाद शहर है।

५ करनाटक पर शिवाजी ने १६७६-७८ ई० में धावा किया। यहाँ पर उस धावे का कथन नही है; वरन् केवल आतक का है। कर्नाटक दो थे, एक पूर्वी और दूसरा पश्चिमी। पूर्वी कर्नाटक पर सन् १६७६-७८ में धावा हुआ, किंतु पश्चिमी पर सन् १६७३ के पूर्व कई बार लूट पाट तथा धावे हुए।

६ हबशियों का स्थान अबिसीनिया।

७ योरप अथवा बाबर का देश फिरंगाना।

८ मुसलमानों की विलायत (अफगानिस्तान, तुर्किस्तान, फारस इत्यादि)।

९ अफगानिस्तान का एक प्रसिद्ध शहर।

१० टरकी।

छतियाँ दलति हैं ॥ भूषन भनत साहि तन सिवराज एते मान तव धाक आगे दिसा उबलति है। तेरी चमू चलिबे की चरचा चले ते चक्रवर्तिन की चतुरंग चमू बिचलति है ॥ ११७ ॥

अत्यंतातिशयोक्ति[1]

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु ते प्रथम ही प्रगट होत है काज।
अत्यंतातिसयोक्ति सो कहि भूषन कबिराज ॥ ११८ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

मंगन मनोरथ के प्रथमहि दाता तोहि कामधेनु कामतरु सो गना-इयतु है। याते तेरे गुन सब गाय को सकत कबि, बुद्धि अनुसार कछु तऊ गाइयतु है ॥ भूषन भनत साहि तनै सिवराज निज बखत बढ़ाय करि तोहि ध्याइयतु है। दीनता को डारि औ अधीनता बिडारि दीह दारिद को मारि तेरे द्वार आइयतु है ॥ ११९ ॥

पुनः—दोहा

कबि तरुवर सिव सुजसरस सींचे अचरज मूल।
सुफल होत है प्रथम ही पीछे प्रगटत फूल[2] ॥ १२० ॥

सामान्य विशेष

लक्षण—दोहा

कहिबे जहँ सामान्य[3] है कहै जु तहाँ विशेष।
सो सामान्य विशेष है बरनत सुकवि अशेष ॥१२१॥

---

१ कवि ने संबंधातिशयोक्ति नहीं कही है।

२ फूलना, प्रसन्नता। श्लेष में कथन है।

३ 'राम रघुवंशी थे' में राम विशेष हैं तथा रघुवंशी सामान्य, क्योंकि बहुतेरे लोग रघुवंशी हो सकते थे।

उदाहरण—दोहा

और नृपति भूषन कहै करैं न सुगमौ काज।
साहि तनै सिव सुजस तो करै कठिनऊ आज ॥१२२॥

पुनः—मालती सवैया

जीति लई बसुधा सिगरी घमसान घमड कै बीरन हू की। भूषन भौसिला छीनि लई जगती उमराव अमीरन हू की॥ साहि तने सिवराज कि धाकनि छूटि गई वृति धीरन हू की। मीरन के उर पीर बढी यो जु भूलि गई सुधि पीरन हू की॥ १२३॥

तुल्ययोगिता

लक्षण—दोहा

तुल्यजोगिता तहँ धरम जहँ बरन्यन[1] को एक।
कहूँ अबरन्यन[2] को कहत भूषन बरनि बिबेक ॥१२४॥

वर्ण्यों का साधर्म्य—उदाहरण—मनहरण दडक[3]

चढत तुरग चतुरग साजि सिवराज चढत प्रताप दिन दिन अति जग मै। भूषन चढत मरहट्टन के चित्त चाव खग्ग खुलि चढत है अरिन के अग मैं। भौसिला के हाथ गढ कोट हैं चढत अरिजोट ह्वै चढत एक[4] मेरु गिरि सृ ग मै। तुरकान गन ब्योमयान हैं चढत बिनु मान है चढत बदरग[5] अवरग मै ॥१२५॥

---

१ उपमेयों का।

२ उपमानों का।

३ उदाहरण न० १२५ मे आवृत्ति दीपक अलकार भी आता है।

४ अरिन के जोडे एक होकर अर्थात् बहुत से अरि साथ साथ।

५ बिनमान औरँग मे बदरग चढता है।

अवर्ण्यों का साधर्म्य—अन्यच्च—दोहा

सिव सरजा भारी भुजन भुव भरु धरयो सभाग।
भूषन अब निहचिंत हैं सेसनाग दिगनाग ॥१२६॥

द्वितीय—लक्षण दोहा

हित अनहित को एक सो जहँ बरनत व्यवहार।
तुल्यजोगिता और सो भूषन ग्रंथ विचार ॥१२७॥

हिताहित उदाहरण—कवित्त मनहरण

गुनन[1] सो इनहूँ को बाँधि लाइयतु पुनि गुनन[2] सों उनहूँ को बाँधि लाइयतु है। पाय[3]गहि इनहूँ को रोज ध्याइयतु अरु पाय[4]गहि उनहूँ को रोज ध्याइयतु है॥ भूषन भनत महराज सिवराज रस रोस तो हिये मैं एक भाँति पाइयतु है। दोहाई[5] कहे ते कवि लोग ज्याइयतु अरु दोहाई[6] कहे ते अरि लोग ज्याइयतु है॥ १२८॥

दीपक

लक्षण—दोहा

बर्न्य अबर्न्यन को धरम जहँ बरनत हैं एक।
दीपक ताको कहत हैं भूषन सुकबि बिबेक॥ १२९॥

उदाहरण—मालती सवैया

कामिनि कंत सों जामिनि चंद सों दामिनि पावस मेघ घटा सों।
कीरति दान सो सूरति ज्ञान सों प्रीति बड़ी सनमान महा सों॥

---

१ गुण अर्थात् अपने अच्छे गुणो के कारण।
२ रस्सियों से।
३ पैर छूकर।
४ पाकर, पकड़ कर।
५ दोहा (छंद) कहने से।
६ दोहाई करने से; शरण आने से।

भूषन भूषन सों तरुनी नलिनी नव पूषनदेव[1] प्रभा सों।
जाहिर चारिहु ओर जहान लसै हिंदुवान खुमान सिवा सों ॥१३०॥

दीपकावृत्ति

लक्षण—दोहा

दीपक पद के अरथ जहँ फिरि फिरि करत बखान।
आवृति दीपक तहँ कहत भूषन सुकबि सुजान ॥१३१॥

अर्थावृत्ति दीपक—उदाहरण—दोहा

सिव सरजा तव दान को करि को सकत बखान?
बढत नदीगन दान जल उमडत नद गजदान ॥ १३२ ॥

पदावृत्ति दीपक—मालती सवैया

चक्रवती चकता चतुरंगिनि चारिउ चापि लई दिसि चक्का।
भूप दरीन दुरे भनि भूषन एक अनेकन बारिधि नक्का ॥
औरँग साहि सों साहि को नंद लरो सिव साहि बजाय कै डंका।
सिंह को सिंह चपेट सहै गजराज सहै गजराज को धक्का ॥१३३॥

पदार्थावृत्ति दीपक—मनहरण दंडक

अटल रहे हैं दिगअंतन के भूप धरि रैयति को रूप निज देस पेस करि कै। राना[2] रह्यो अटल बहाना करि चाकरी को बाना तजि भूषन भनत गुन भरि कै ॥ हाड़ा[3] रायठौर[4] कछवाहे[5] गौर[6] और रहे अटल

---

१ सूर्य्य देवता।

२ महाराणा उदयपुर।

३ हाडा क्षत्रिय बूँदी और कोटा में राज्य करते हैं।

४ जोधपुर के महाराज।

५ कछवाहे अर्थात् कुशवंशी क्षत्रिय जैसे अंबर (जयपुर) वाले।

६ गौरों की रियासत छोटी थी जिसकी राजधानी सुपुर (राजपूताना) में थी। सिंधिया ने उसके बृहदंश पर कब्जा कर लिया। पृथ्वीराज के समय में गौर राजाओं का बडा मान और प्रभुत्व था।

चकत्ता को चमाऊ[1] धरि डरि कै। अटल सिवाजी रह्यो दिल्ली को निदरि धीर धरि ऐंड़ धरि तेग धरि गढ़ धरि कै॥ १३४॥

प्रतिवस्तूपमा[2]

लक्षण—दोहा

वाक्यन को जुग होत जहँ एकै अरथ समान।
जुदो जुदो करि भाषिए प्रति बस्तूपम जान॥१३५॥

उदाहरण—लीलावती छंद[3]

मद जल धरन द्विरद बल राजत, बहु जल धरन जलद छबि साजै।
पुहुमि धरन फनि नाथ लसत अति, तेज धरन ग्रीषम रबि छाजै॥
खरग धरन सोभा तहँ राजत, रुचि भूषन गुन धरन समाजै।
दिल्लि दलन दक्खिन दिसि थंभन, ऐड़[4] धरन सिवराज बिराजै॥१३६॥

दृष्टांत[5]

लक्षण—दोहा

जुग बाक्यन को अरथ जहँ प्रतिबिंबित सो होत।
तहाँ कहत दृष्टांत हैं भूषन सुमति उदोत॥१३७॥

---

१ चँवर।

२ इसमें दो वाक्यों की गति एक सी होती है तथा दोनों के भिन्न धर्मों या क्रियाओं का अर्थ एक ही होता है। ये उपमान और उपमेय मूलक भी होते हैं। इसके वाक्य स्वतंत्र होते है तथा आगे आनेवाले निदर्शना के अस्वतंत्र।

३ इसका लक्षण यह है—"लघुगुरु को जहँ नेम नहि बत्तिस कल सब जान। तरल तुरंगम चाल सो लीलावती बखान॥"

४ "ऐड़ एक सिवराज निबाही। करै आपने चित्त कि चाही। आठ पातसाही झकझोरै। सूबन पकरि दण्ड लै छोरै॥" (छत्रप्रकाश)।

५ प्रतिवस्तूपमा और दृष्टांत में उपमेय वाक्य और उपमान वाक्य में बिंबप्रतिबिंब भाव रहता है; परन्तु पहले में धर्म का वस्तु प्रतिवस्तु भाव (एक

उदाहरण—दोहा

सिव ! औरंगहि जिति सकै और न राजा राव।
हत्थिमत्थ पर सिह बिनु आन न घालै घाव ॥१३८॥
चाहत निरगुन सगुन को ज्ञानवंत गुनधीर।
सकल भाँति निरगुन गुनिहि सिवा नेवाजत वीर ॥१३९॥

पुनः—मालती सवैया

देत तुरी गन गीत सुने बिनु देत करी गन गीत सुनाए। भूषन भावत भूप न आन जहान खुमान कि कीरति गाए॥ मंगन को भुवपाल घने पै निहाल करै सिवराज रिझाए। आन ऋतैं बरसैं सरसैं उमड़ैं नदियाँ ऋतु पावस पाए[1] ॥ १४० ॥

निदर्शना[2]

लक्षण—दोहा

सदृश वाक्य जुग अरथ को करिए एक अरोप।
भूषन ताहि निदर्शना कहत बुद्धि दै ओप ॥१४१॥

उदाहरण—मालती सवैया

मच्छहु कच्छ मै कोल नृसिह मैं बावन मैं भनि भूषन जो है।

धर्म का जुदे शब्दों में दो जगह होना) होता है तथा दृष्टांत में धर्म का बिंब प्रतिबिंब भाव होते हुए भी दोनों धर्म पृथक् है। दृष्टांत में वाक्य के दोनो भागों मे उपमेय उपमान का सबध रहता है, बिंबप्रतिबिंब रूप धर्म और वाक्य दोनों मे आते हैं, तथा वाचक लुप्त रहता है।

१ इस छंद से विदित होता है कि भूषणजी ने शिवराज से बहुत कुछ दान पाया था।

२ निदर्शना चार प्रकार की होती है, किंतु भूषण ने केवल प्रथम निदर्शना का कथन किया है।

जो द्विजराम मैं जो रघुराम मै जोब कह्यो बलरामहु को है ॥ बौद्ध मैं जो अरु जो कलकी महँ बिक्रम हूबे को आगे सुनो है। साहस भूमि-अधार सोई अब श्री सरजा सिवराज मे सो है ॥१४२॥

अपरंच—कवित्त मनहरण

कीरति सहित जो प्रताप सरजा मैं बर मारतंड माँझ तेज चाँदनी सो जानी मैं। सोहत उदारता औ सीलता खुमान मैं सो कंचन मैं मृदुता सुगंधता बखानी मैं ॥ भूषन कहत सब हिंदुन को भाग फिरै चढ़ेते कुमति चकता हू की निसानी मैं। सोहत सुवेस दान कीरति सिवा मैं सोई निरखी अनूप रुचि मोतिन के पानी मैं ॥१४३॥

अन्यच्च—दोहा

औरन को जो जनम है, सो याको यक रोज।
औरन को जो राज सो, सिव सरजा की मौज ॥१४४॥
साहिन सों रन माँडिबो कीबो सुकबि निहाल।
सिव सरजा को ख्याल है औरन को जंजाल ॥१४५॥ ६०

व्यतिरेक[1]

लक्षण—दोहा

सम छबिवान दुहून मैं, जहँ बरणत बढ़ि एक।
भूषण कवि कोविद सबै, ताहि कहत ब्यतिरेक ॥१४६॥

उदाहरण—छप्पय

त्रिभुवन मैं परसिद्ध एक अरि बल वह खंडिय।
यहि अनेक अरि बल बिहंडि रन मंडल मंडिय ॥

---

१ इसमें अन्य कवि प्रायः उपमेय उपमान का भी सबध जोड़ते हैं। इनके भी उदाहरणों मे यह बात प्रस्तुत है। पहले उदाहरण में प्रतीप की मुख्यता हो गई है, किंतु दूसरे मे व्यतिरेक स्पष्ट है। इसके सम, अधिक और न्यून भेद भूषण ने नहीं कहे हैं।

भूषण वह ऋतु एक पुहुमि पानिपहि बढ़ावत ।
यह छहु ऋतु निसि दिन अपार पानिप सरसावत ।।
सिवराज साहि सुव सत्थ नित हय गय लक्खन संचरइ ।
थक्कइ गयंद थक्कइ तुरंग किमि सुरपति सरबरि करइ ।।१४७।।

पुनरपि—कवित्त मनहरण

दारुन[1] दुगुन दुरजोधन ते अवरंग भूषन भनत जग राख्यो छल मढ़ि कै। धरम धरम, बल भीम, पैज अरजुन, नकुल अकिल, सहदेव तेज चढ़ि कै ।। साहि के सिवाजी गाजी, करयो आगरे मैं चंड पांडवनहू ते पुरुषारथ सुबढ़ि कै। सूने लाखभौन ते कढ़े वै पाँच राति, तैजु द्योस लाख चौकी ते अकेलो आयो कढ़ि कै ।।१४८।।

सहोक्ति

लक्षण—दोहा

वस्तुन को भासत जहाँ, जन रंजन सह भाव ।
ताहि सहोक्ति बखानहीं, जे भूषन कविराव[2] ।।१४९।।

उदाहरण—मनहरण दंडक

छूट्यो है हुलास आमखास एक संग छूट्यो हरम सरम एक संग बिनु ढंग ही । नैनन[3] ते नीर धीर छूट्यो एक संग छूटी सुख रुचि मुख

---

१ दुर्योधन ने छल से पाडवों को लाक्षागृह मे जलाने का प्रबध किया था। सो धर्मराज के धर्म, भीमसेन के बल, अर्जुन की पैज, नकुल की बुद्धि और सहदेव के तेज से पाडवों का उद्धार हुआ। इसी पर उक्ति करके कवि शिवाजी के दिल्ली से निकल आने पर उनकी तुलना पाँचों भाइयो से करता है।

२ सहोक्ति में साथ के कारण एक शब्द का अनेक स्थानों पर अन्वय (आरोप) किया जाता है।

३ भयानक रसपूर्ण ।

रुचि त्योंही बिन रंग ही ।। भूषन बखाने सिवराज मरदाने तेरी धाक बिललाने न गहत बल अंग ही । दक्खिन को सूबा पाय दिली के अमीर तजै उत्तर की आस जीव आस एक संग ही ।।१५०।।

बिनोक्ति

लक्षण—दोहा

बिना कछू जहँ बरनिए कै हीनो कै नीक ।
ताको कहत बिनोक्ति हैं कबि भूषन मति ठीक ।।१५१।।

अभाव से भलाई—उदाहरण—दोहा

सोभमान जग पर किए सरजा सिवा खुमान ।
साहिन सों बिनु डर अगड़[1] बिनु गुमान को दान ।।१५२।।

पुनः—मालती सवैया

को कबिराज बिभूषन होत बिना कबि साहितनै को कहाए ? । को कबिराज सभाजित होत सभा सरजा के बिना गुन गाए ? ।। को कबिराज भुवालन भावत भौंसिला के मन मैं बिनु भाए ? । को कबिराज चढ़ै गज बाजि सिवाजि कि मौज मही बिनु पाए ? ।।१५३।।

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

बिना लोभ को बिबेक बिना भय युद्ध टेक साहिन सों सदा साहितनै सिरताज के । बिना ही कपट प्रीति बिना ही कलेस जीति बिना ही अनीति रीति लाज के जहाज के ।। सुकवि समाज बिन अपजस काज भनि भूषन भुसिल[2] भूप गरिबनेवाज के । बिना ही बुराई ओज बिना काज घनी फौज बिना अभिमान मौज राज सिवराज के ।। १५४ ।।

अभाव से हीनता

कीरति को ताजी करी बाजि चढ़ि लूटि कीन्हीं भई सब सेन बिनु

---

१ अकड़ ।

२ भौंसिला ।

बाजी बिजैपुर[1] की। भूषन भनत भौसिला भुवाल धाक ही सो धीर धरबी[2] न फौज कुतुब के धुर की ॥ सिह उदैभान बिन अमर सुजान बिन मान बिन कीन्ही साहिबी त्यो दिलीसुर की। साहिसुव महाबाहु सिवाजी सलाह बिन कौन पातसाह की न पातसाही मुरकी ॥ १५५ ॥

समासोक्ति

लक्षण—दोहा

बरनन[3] कीजै आन को ज्ञान आन को होय।
समासोक्ति भूषन कहत कबि कोबिद सब कोय ॥१५६॥

उदाहरण—दोहा

बडो डील लखि पील[4] को सवन तज्यो बन थान।
धनि सरजा तू जगत मैं ताको हर्यो गुमान ॥१५७॥
तुही साँच द्विजराज है तेरी कला प्रमान।
तो पर सिव किरपा करी जानत सकल जहान ॥१५८॥

अपरच—कवित्त मनहरण

उत्तर पहार बिधनोल[5] खंडहर[6] झारखंडहू[7] प्रचार चारु केली है

---

१ बीजापुर।

२ धरैगी (बुदेलखडी बोली)।

३ प्रस्तुत के वर्णन मे जहाँ अप्रस्तुत की सचाई ज्ञात हो, वहाँ समासोक्ति अलकार होता है।

४ हाथी, यहाँ औरगजेब।

५ इसका नाम बिदरूर या बिदनूर भी था। यह मगलोर (मैसूर) के पास इसी नाम के प्रात की राजधानी थी। इसे शिवाजी ने सन् १६६४ मे जीता।

६ चबल और नर्मदा के बीच सुलतानपुर के समीप एक कस्बा।

७ छद न० ११२ का नोट देखिए।

बिरद की। गोर[1] गुजरात अरु पूरब पछाँह ठौर जंतु जंगलीन की बसति मारि रद की ॥ भूषन जो करत न जाने बिनु घोर सोर भूलि गयो आपनी ऊँचाई लखे कद की। खोइयो प्रबल मदगल गजराज एक सरजा सों वैर कै बड़ाई निज मद की ॥१५९॥

परिकर—परिकरांकुर

लक्षण—दोहा

साभिप्राय बिसेषननि भूषन परिकर मान।
साभिप्राय बिसेष्य ते परिकर अंकुर जान ॥१६०॥

उदाहरण—परिकर—कवित्त मनहरण

बचैगा न समुहाने बहलोल खाँ[2] अयाने भूषन बखाने दिल आनि मेरा बरजा। तुझ ते सवाई तेरा भाई[3] सलहेरि पास कैद किया साथ का न कोई बीर गरजा ॥ साहिन के साहि उसी औरँग के लीन्हें गढ़ जिसका तू चाकर औ जिसकी है परजा। साहिका ललन दिलीदलका दलन अफजल का मलन सिवराज आया सरजा॥ १६१ ॥

---

१ गोर नामक शहर अफगानिस्तान मे था जहाँ से शिहाबुद्दीन गोरी आया था।

२ छद ८६ का नोट देखिए। बहलोल औरगजेब का चाकर या प्रजा न था। एक बहलोल नामक छोटा सरदार दिल्ली का भी था। बीजापुरी बहलोल दो बार मुगलों की सहायता लेकर शिवाजी से लड़कर हारा था। इसी से व्यंग्य से भूषण उसे दिल्ली का चाकर और प्रजा कहते हैं, मानो वह अपने स्वामी बीजापुर-नरेश की भक्ति न करके दिल्ली की करता था।

३ यह कौन भाई था, सो अज्ञात है। सभवतः बहलोल का सगा, चचेरा, ममेरा, मौसेरा, पगड़ी बदल आदि भाइयों में से कोई बड़ा भाई सलहेरि के युद्ध में पकड़ा गया होगा।

जाहिर जहान जाके धनद समान पेखियतु पासबान यों खुमान चित चाय हैं। भूखन भनत देखे भूख न रहत सब आपही सों जात दुख दारिद बिलाय हैं॥ खीझे ते खलक माहिं खलभल डारत है रीझे ते पलक माहि कीन्हें रंक राय हैं। जंग जुरि अरिन के अंग को अनंग कीबो दीबो सिव साहब के सहज सुभाय हैं॥ १६२॥

अन्यच्च—दोहा

सूर सिरोमनि सूर कुल सिव सरजा मकरंद।
भूषन क्यों औरँग जितै कुल मलिच्छ कुल चंद॥१६३॥

परिकरांकुर—दोहा

भूषन भनि सबही तबहि जीत्यो हो जुरि जंग।
क्यों जीतै सिवराज सों अब अंधक[1] अवरंग?॥१६४॥

श्लेष

लक्षण—दोहा

एक बचन मैं होत जहँ बहु अर्थन को ज्ञान।
स्लेस कहत हैं ताहि को भूषन सुकवि सुजान॥१६५॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

सीता[2] संग सोभित सुलच्छन[3] सहाय जाके भूपर भरत[4] नाम भाई[5] नीति चारु है। भूषन भनत कुल सूर कुल भूषन हैं दासरथी[6] सब जाके

---

१ अंधक दैत्य को शिव (शंकरजी) ने मारा था।
२ सीताजी संग हैं अथवा श्री अर्थात् लक्ष्मी ता (उसके) संग हैं।
३ लक्ष्मणजी अथवा सु (सुंदर) लक्षण अर्थात् गुण।
४ भरतजी अथवा भरता है नाम अर्थात् नाम व्याप्त करता है।
५ भाई अर्थात् भ्राता अथवा रुची अर्थात् पसंद आई।
६ दशरथजी के पुत्र अथवा सब रथी जिसके दास (हैं)।

भुज भुव भारु है ॥ अरि लंक[1] तोर जोर जाके संग बान[2] रहैं सिंधुर[3] हैं बाँधे जाके दल को न पारु है। ते गहि[4] कै भेंटै जौन[5] राकस मरद जाने सरजा सिवाजी राम ही को अवतारु है ॥१६६॥

पुनः

देखत सरूप को सिहात न मिलन काज जग जीतिबे की जामें रीति छल बल की। जाके पास आवै ताहि निधन करति बेगि भूषन भनत जाकी संगति न फल की ॥ कीरति कामिनि राची सरजा सिवा की एक बस कै सकै न बस करनी सकल की। चंचल सरस एक काहू पै न रहै दारी[6] गनिका समान सूबेदारी दिल्ली दल की ॥ १६७ ॥

अप्रस्तुत प्रशंसा[7]

लक्षण—दोहा

प्रस्तुत लीन्हे होत जहँ, अप्रस्तुत परसंस।
अप्रस्तुत परसंस सो कहत सुकवि अवतंस ॥ १६८ ॥

---

१ लंका अथवा कमर ।

२ बानर अर्थात् बंदर हैं अथवा बाण रहैं।

३ सिंधु अर्थात् समुद्र बाँधा रहै (सेतु बंधन) अथवा सिंधुर अर्थात् हाथी बाँधे रहे।

४ ते गहि अर्थात् उन्हे पकड़ कर अथवा तलवार ही से।

५ जौन राकस मरद जानै अर्थात् जो राक्षसो को मर्दना जानता है अथवा जो नर (मनुष्य) अकस (शत्रु) जन जानता है उसे तेगही से भेंटता है अर्थात् मार डालता है। इस कवित्त के अर्थ चाहे राम पक्ष में लगाइए चाहे शिवाजी पर।

६ छिनाल स्त्री। इस छद को गणिका एव दक्षिण की सूबेदारी दोनों ही पक्षों मे ले सकते हैं। दारी=रक्खी भी है।

७ भूषण ने प्रस्तुतांकुर अलंकार छोड़ दिया है।

उदाहरण—दोहा

हिंदुनि सों तुरकिनि कहैं तुम्हैं सदा संतोष।
नाहिन तुम्हरे पतिन पर सिव सरजा कर रोष॥ १६९॥
अरितिय भिल्लिनि सों कहै घन बन जाय इकंत।
सिव सरजा सों बैर नहि सुखी तिहारे कंत॥ १७०॥

पुनः मालती सवैया

काहु पै जात न भूषन जे गढ़पाल कि मौज निहाल रहे हैं।
आवत हैं जु गुनी जन दच्छिन भौंसिला के गुन गीत लहे है॥
राजन राव सबै उमराव खुमान कि धाक धुके यों कहे हैं।
संक नहीं, सरजा सिवराज सों आजु दुनी में गुनी निरभे है॥१७१॥

पर्य्यायोक्ति[1]

लक्षण—दोहा

बचनन की रचना जहाँ बर्णनीय पर जानि।
परजायोकति कहत है भूषन ताहि बखानि॥ १७२॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

महाराज सिवराज तेरे बैर देखियतु घन बन ह्वै रहे हरम हबसीन के। भूषन भनत तेरे बैर रामनगर[2] जवारि[3] पर बहबहे रुधिर नदीन के॥ सरजा समत्थ बीर तेरे बैर बीजापुर बैरी बैयरनि[4] कर चीन्ह न

---

१ पर्य्यायोक्ति का लक्षण टेढ़ी रचना से कथन है। भूषण का उदाहरण बहुत स्पष्ट नहीं है, यद्यपि कष्टकल्पना से अलकार माना जा सकता है।

२ इस नाम के कई नगर हैं। यह रामनगर कदाचित् रामगिरि एवं रामगढ़ के निकटवाला है। इसीको रामनैर भी कहा है।

३ छं० नं० २०६ देखिए। शिवाजी ने सन् १६७१ में एक रामनगर जीता तथा दूसरे साल अन्य रामनगर तथा जौहर राज्य जीते।

४ स्त्रियों के (पश्चिमी बोली)।

चुरीन के। तेरे रोस देखियत आगरे दिली मे बिन सिदुर के बुद मुख इदु जमनीन[1] के ॥ १७३ ॥

व्याजस्तुति

लक्षण—दोहा

सुस्तुति मे निदा कढै निदा मे स्तुति होय।
व्याजस्तुति ताको कहत कवि भूषन सब कोय ॥ १७४ ॥

निदा मे स्तुति—[2]उदाहरण—कवित्त मनहरण

पीरी पीरी हुन्नै तुम देत हौ मँगाय हमैं सुबरन[3] हम सो परखि करि लेत हौ। एक पलही मैं लाख[4] रुखन सो लेत लोग तुम राजा ह्वै कै लाख दीबे को सचेत हौ॥ भूषन भनत महराज सिवराज बड़े दानी दुनी ऊपर कहाए केहि हेत हौ ?। रीझि हँसि हाथी[5] हमैं सब कोऊ देत कहा रीझि हँसि हाथी एक तुमहियै देत हौ ? ॥ १७५ ॥

तू तो रातो दिन जग जागत रहत वेऊ जागत रहत रातौ दिन बनरत हैं। भूषन भनत तू बिराजै रज भरो वेऊ रज भरे देहिन दरी[6]

---

१ इस छद मे मुसलमानो की स्त्रियो के मस्तक पर सिदूर का अभाव दिखला कर उनकी वैधव्यावस्था व्यजित की गई है। अब कुछ मुसल्मानों के यहाँ व्याह के दिन सिदूर के पुडे से सोहाग लिया जाता है, पर तत्पश्चात् उसका व्यवहार नही होता। उन दिनों सभव है कि मुसलमानों मे भी सधवा स्त्रियाँ सदा सिदूर लगाती हों।

२ स्तुति मे निदा का उदाहरण नही है।

३ सोना अथवा सुदर वर्ण (अक्षर) अर्थात् छद के शब्द।

४ लाख जो पलाशादि से निकलती है।

५ हाथ मिलाना। अर्थ हथेली का है।

६ पहाडी गुफा।

मैं बिचरत हैं ॥ तूतौ सूर गन को बिदारि बिहरत सुर मंडलै[1] बिदारि वेऊ सुरलोक रत हैं। काहे ते सिवाजी गाजी तेरोई सुजसु होत तोसों अरिबर सरिवरि सी करत हैं ॥ १७६ ॥

आक्षेप

लक्षण—दोहा

पहिले कहिये बात कछु, पुनि ताको प्रतिषेध।
ताहि कहत आच्छेप है भूषन सुकवि सुमेध[2] ॥ १७७ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

जाय भिरौ न भिरे बचिहौ भनि भूषन भौंसिला भूप सिवा सों।
जाय दरीन दुरौ दरिऔ तजिकै दरियाव लँघौ लघुता सों ॥
सीछन काज वजीरन को कढ़ै बोल यों एदिल साहि सभा सों।
छूटि गयो तौ गयो परनालो सलाह कि राह गहौ सरजा सों ॥ १७८ ॥

द्वितीय लक्षण—दोहा

जेहि निषेध अभ्यास ही भनि भूषन सो और।
कहत सकल आच्छेप है जे कविकुल सिरमौर ॥ १७९ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

पूरब के, उत्तर के प्रबल पछाँह हू के सब बादसाहन के गढ़ कोट हरते। भूषन कहैं यो अवरंग सो वजीर जीति लीबे को पुरतगाल सागर उतरते ॥ सरजा सिवा पर पठावत मुहीम काज हजरत हम मरिबे को नहि डरते। चाकर हैं उजुर कियो न जाय नेक पै कछू दिन उबरते तौ घने काज करते ॥ १८० ॥

---

१ युद्ध में मरे हुए लोग, कहा जाता है कि, सूर्य्य मंडल भेद कर स्वर्ग सिधारते हैं।

२ अच्छी मेधा अर्थात् बुद्धिवाले।

विरोध (द्वितीय विषम)

लक्षण—दोहा

द्रव्य क्रिया गुन मे जहाँ उपजत काज विरोध ।
ताको कहत बिरोध हैं भूषन सुकबि सुबोध ॥ १८१ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

श्री सरजा सिव तो जस सेत सों होत हैं बैरिन के मुँह कारे ।
भूषन तेरे अरुन्न प्रताप सफेद लखे कुनबा नृप सारे ॥
साहि तनै तब कोप कृसानु ते बैरि गरे सब पानिप वारे ।
एक अचंभव होत बड़ो तिन ओंठ गहे अरि जात न जारे ॥१८२॥

विरोधाभास

लक्षण—दोहा

जहँ बिरोध सो जानिये, साँच बिरोध न होय ।
तहाँ बिरोधाभास कहि, बरनत हैं सब कोय ॥ १८३ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

दच्छिननायक[1] एक तुम्ही, भुव भामिनि को अनुकूल[2] ह्वै भावै ।
दीनदयाल न तो सो दुनी पर म्लेच्छ के दीनहि मारि मिटावै ॥
श्री सिवराज भनै कबि भूषन तेरे सरूप को कोउ न पावै ।
सूर सुबंस मैं सूरसिरोमनि ह्वैकरि तू कुलचंद कहावै ॥ १८४ ॥

बिभावना

(पहिली विभावना) लक्षण—दोहा

भयो काज बिन हेतुही, बरनत है जेहि ठौर ।
तहँ बिभावना होति है, कबि भूषन सिरमौर ॥ १८५ ॥

---

१ वह पति जिसके कई स्त्रियाँ हों और जो सबसे बराबर प्रेम रखता हो । अथवा दक्षिण देश का राजा ।

२ वह पति जो एक स्त्री-व्रती हो अथवा मुआफिक

उदाहरण—मालती सवैया

बीर बड़े बड़े मीर पठान खरो रजपूतन को गन भारो।
भूषन जाय तहाँ सिवराज लियो हरि औरँगजेब को गारो[1]॥
दीन्हो कुज्वाब दिलीपति को अरु कीन्हो वजीरन को मुँह कारो।
नायो न माथहि दक्खिननाथ न साथ मैं फौज न हाथ हथ्यारो ॥१८६॥

पुन—दोहा

साहितनै सिवराज की, सहज टेव यह ऐन।
अनरीझे दारिद हरै, अनखीझे अरि सैन ॥१८७॥

और दो विभावना

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु पूरन नहीं, उपजत है पर काज। (दूसरी विभावना)
कै अहेतु ते औरयो, द्वै विभावना साज ॥१८८॥ (चौथी विभावना)

उदाहरण

कारण अपूरे काज की उत्पत्ति। कवित्त मनहरण

दच्छिन को दाबि करि बैठो है सइस्त खान पूना माहि दूना करि जोर करवार[2] को। हिंदुवानखभ गढ़पति दलथभ भनि भूषन भरैया कियो सुजस अपार को॥ मनसबदार चौकीदारन गँजाय महलन मे मचाय महाभारत के भार को। तो सो को सिवाजी जेहि दो सौ आदमी सो जित्यो जग सरदार सौ हजार असवार को ॥१८६॥

अहेतु ते कारज की उत्पत्ति। कवित्त मनहरण

ता दिन अखिल खलभलैं खल खलक मै जा दिन सिवाजी गाजी नेक करखत है। सुनत नगारन अगार तजि अरिन की दारगन भाजत न बार परखत है॥ छूटे बार बार छूटे बारन ते लाल देखि भूषन

---

१ गर्व, अभिमान।

२ करवाल, तलवार।

सुकवि बरनत हरखत हैं। क्यों न उतपात होहि बैरिन के झुंडन में कारे घन उमड़ि अँगारे बरखत हैं ॥१९०॥

और विभावना

(छठी विभावना) लक्षण—दोहा

जहाँ प्रगट भूषन भनत हेतु काज ते होय।
सो बिभावना औरऊ कहत सयाने लोय ॥१९१॥

उदाहरण—दोहा

अचरज भूषन मन बढ़्यो, श्री सिवराज खुमान।
तव कृपान ध्रुव धूम ते, भयो प्रताप कृसान ॥१९२॥

पुनः—कवित्त मनहरण

साहि तनै सिव ! तेरो सुनत पुनीत नाम धाम धाम सबही को पातक कटत है। तेरो जस काज आज सरजा निहारि कबिमन भोज बिक्रम कथा ते उचटत है॥ भूषन भनत तेरो दान संकलप जल अचरज सकल मही मैं लपटत है। और नदी नदन ते कोकनद होत तेरो कर कोकनद नदी नद प्रगटत है ॥१९३॥

विशेषोक्ति[1]

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु समरथ भयहु प्रगट होत नहि काज।
तहाँ बिसेसोकति कहत भूषन कबिसिरताज ॥१९४॥

उदाहरण—मालती सवैया

दै दस पाँच रुपैयन को जग कोऊ नरेस उदार कहायो। कोटिन

---

१ विशेषोक्ति में भी कारण की पूर्णता तथा असंभवनीयता दोनों का आभास मात्र है, वास्तविकता नहीं। विरोधाभास में कार्य्य कारण दोनों बाधक बाध्य है। विभावना में कार्य्य बाध्य है, तथा विशेषोक्ति में कारण बाध्य।

दान सिवा सरजा के सिपाहिन साहिन को बिचलायो ॥ भूषन कोऊ गरीबन सों भिरि भीमहुँ ते बलवंत गनायो। दौलति इंद्र समान बढ़ी पै खुमान के नेक गुमान न आयो ॥१६५॥

असंभव

लक्षण—दोहा

अनहूबे की बात कछु प्रगट भई सी जानि।
तहाँ असंभव बरनिए सोई नाम बखानि ॥१९६॥

उदाहरण—दोहा

औरँग यों पछितात मैं करतो जतन अनेक।
सिवा लेइगो दुरग सब को जानै निसि एक ॥१९७॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

जसन के रोज यों जलूस गहि बैठो जोब इंद्र आवै सोऊ लागै औरँग की परजा। भूषन भनत तहाँ सरजा सिवाजी गाजी[1] तिनको तुजुक[2] देखि नेकहू न लरजा॥ ठान्यो न सलाम भान्यो साहि को इलाम[3] धूम धाम कै न मान्यो रामसिहहू[4] को बरजा। जासों बैर करि भूप बचै न दिगंत ताके दंत तोरि तखत तरे ते आयो सरजा ॥१९८॥

---

१ मुसलमानों में गाजी वह कहलाता था जो कम से कम एक काफिर को मार डाले और यह बड़ी संमान की पदवी थी। इसी समान के कारण भूषणजी कदाचित् शिवाजी के नाम के साथ अनेक ठौर गाजी लगा दिया करते थे, नहीं तो सच पूछिए तो इसे अशुद्ध ही समझना चाहिए। गर्जनेवाला भी अर्थ हो सकता है। संभव है, भूषण मुसलमानों को मारनेवाले हिंदू को गाजी कहते हों। २ शान, महत्व।

३ एलान, इश्तिहार, (यहाँ पर) हुक्म।

४ ये जयपुराधीश महाराजा मिर्जा जयसिह के पुत्र थे। जयसिह के कहने से जब शिवाजी दिल्ली को गए, तब ये ही दिल्लीश्वर की ओर से उनकी

असंगति (प्रथम)

लक्षण—दोहा

हेतु अनत ही होय जहँ काज अनत ही होय।
ताहि असगति कहत है भूषन सुमति समोय ॥१९९॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

महाराज सिवराज चढ़त तुरग पर ग्रीवा जाति नै करि गनीम अतिबल को। भूषन चलत सरजा की सैन भूमि पर छाती दरकति है खरी अखिल खल की॥ कियौ दौरि घाव उमरावन अमीरन पै गई कटि नाक सिगरेई दिल्ली-दल की। सूरत[1] जराई कियो दाहु पातसाहु उर स्याही जाय सब पातसाही मुख झलकी ॥२००॥

असगति (द्वितीय)

लक्षण—दोहा

आन ठौर करनीय सो करै और ही ठौर।
ताहि असगति और कवि भूषन कहत सगौर ॥२०१॥

उदाहरण—मनहरण दडक

भूपति सिवाजी तेरी धाक सो सिपाहिन के राजा पातसाहिन के मन ते अह[2]गली। भौंसिला अभग तू तौ जुरतो जहाँई जग तेरी एक फते होति मानो सदा सग ली॥ साहि के सपूत पुहुमी के पुरहूत कवि

अगवानी को आए थे और उन्हे दिल्ली से निकल भागने मे इन्होने भी छिपकर सहायता दी थी।

१ पहले सन् १६६४ मे और फिर १६७० मे शिवाजी ने सूरत शहर को लूटा था। दोनों बार करोडों का माल इनके हाथ लगा और बादशाह की बडी बदनामी हुई। वहाँ के केवल मुसलमानो को इन्होंने लूटा था।

२ अहकार गल गया।

भूषन भनत तेरी खरग उदग्गली[1]। सत्रुन की सुकुमारी थहरानी सुंदरी
औ सत्रु के अगारन मैं राखे जंतु जंगली ॥२०२॥

असंगति (तृतीय)

लक्षण—दोहा

करन लगै औरै कछू करै औरई काज।
तहाँ असंगति होति है कहि भूषन कविराज ॥२०३॥

उदाहरण—मालती सवैया

साहितनै सरजा सिव के गुन नेकहु भाषि सक्यो न प्रबीनो।
उद्यत होत कछू करिबे को करै कछु बीर महा रस भीनो॥
ह्याँ ते गयो चकतै[2] सुख देन को गोसलखाने[3] गयो दुख दीनो।
जाय दिली दरगाह सुसाह को भूषन बैरि बनाय ही लीनो ॥२०४॥

विषम

लक्षण—दोहा

कहाँ बात यह कहँ वहै, यो जहँ करत बखान।
तहाँ विषम भूषन कहत, भूषन सुकबि सुजान ॥ २०५ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

जावलि[4] बार सिगारपुरी[5] औ जवारि[6] को राम के नैरि[7] को गाजी।

---

१ उद्दंड। २ चकत्ता अर्थात् चगताईखाँ के वंशज औरंगजेब को।
३ गुस्लखाने की घटना भूमिका में देखिए।
४ चंद्रराव मोरे जावली का राजा था। उसे जीतकर शिवाजी ने सन् १६५५ ई० में राज्य छीन लिया। इसी स्थान पर शिवाजी ने सन् १६५६ में अफजल खाँ को मारा (छं० नं० ६३ नोट देखिए)।

५ कोंकण देश में सतारा शहर के पश्चिम दक्षिण सिंगारपुर है। इसे १६६१ ई० में शिवाजी ने अपने अधिकृत किया।

६ रावर के निकट एक छोटा सा स्थान है। इसे जयपुर (राजपूताने वाला नहीं) भी कहते हैं। शायद यह जौहर हो जिसे शिवाजी ने १६७८ में जीता।
७ छंद नं० १७३ का नोट देखिए।

भूषन भौंसिला भूपति ते सब दूरि किए करि कीरति ताजी ॥
बैर कियो सिवजी सों खवासखाँ[1] डौंड़ियै सैन बिजैपुर[2] बाजी ।
बापुरो एदिल साहि कहाँ कहाँ दिल्लि को दामनगीर सिवाजी ? ॥२०६॥

लै[3] परनालो सिवा सरजा करनाटक[4] लौं सब देस बिबूँचे ।
बैरिन के भगे बालक बृंद कहै कवि भूषन दूरि पहूँचे ॥
नाँघत नाँघत घोर घने बन हारि परे यो कटे मनो कूँचे ।
राजकुमार कहाँ सुकुमार कहाँ बिकरार पहार वे ऊँचे ? ॥२०७॥

सम

लक्षण—दोहा

जहाँ दुहूँ अनुरूप को करिए उचित बखान ।
सम भूषन तासों कहत भूषन सकल सुजान ॥२०८॥

---

१ सन् १६७२ की घटना है ।

२ यह बीजापुर के प्रधान मंत्री खान मुहम्मद का लड़का था और स्वयं मत्री भी था । जब प्रसिद्ध बादशाह अलीआदिलशाह (एदिल शाही) मृत-शय्या पर था, तब उसने खवासखॉ को अपने नाबालिग पुत्र सुल्तान सिकदर का वली व पालक (Regent and guardian) सन् १६७२ मे बनाया । शिवाजी से इसने कई समर किए पर यह स्वयं युद्ध में न गया । सन् १६७५ में यह छिपकर औरगजेब से मिल गया और इसी कारण बहलोल खॉ (छंद नं० ६६ का नोट देखिए) इत्यादि के इशारे पर मारा गया ।

३ छंद नबर १०७ का नोट देखिए । यह छद सन् १६५९ के परनाला विजय तथा १६६१–६२ के करनाटक विद्रोह का कथन करता है । पश्चिमी करनाटक मे शिवाजी ने जो गड़बड़ मचाई थी, उसका भी हवाला इस छद में माना जा सकता है । छद नं० ११७ का नोट देखिए ।

४ छंद नं० ११७ का नोट देखिए ।

उदाहरण—मालती सवैया

पंज हजारिन[1] बीच खड़ा किया मैं उसका कुछ भेद न पाया।
भूषन यों कहि औरँगजेब उजीरन सों बेहिसाब रिसाया॥
कम्मर की न कटारी दई इसलाम ने गोसलखाना बचाया।
जोर सिवा करता अनरत्थ भली भइ हत्थ हथ्यार न आया॥२०९॥

पुनः—दोहा

कछु न भयो केतो गयो, हार्यो सकल सिपाह।
भली करै सिवराज सो, औरँग करै सलाह॥२१०॥

विचित्र

लक्षण—दोहा

जहँ करत है जतन फल, चित्त चाहि बिपरीत।
भूषन ताहि बिचित्र कहि, बरनत सुकवि विनीत॥२११॥

उदाहरण—दोहा

तैं जयसिंहहि[2] गढ़ दिये, सिव सरजा जस हेत।
लीन्हें कैयो बरस मै, बार न लागी देत॥२१२॥

---

१ पाँच हजार सेना जिस सरदार के अधिकार में हो। शिवाजी औरंगजेब के दरबार में पंजहजारियों में खड़े किए गये थे जिस पर वे बिगड़ उठे थे। पहले वादा प्रथम श्रेणी में स्थान मिलने का हुआ था, किंतु पीछे अपनी मामी (शाइस्ताखाँ की बेगम) के कहने पर औरंगजेब ने पहला हुक्म रद करके शिवाजी को तृतीय श्रेणी में खड़ा किया।

२ ये जयपुर के महाराजा थे और औरंगजेब ने इन्हे "मिर्जा" की उपाधि दी थी जिससे इनको "मिर्जा जयसिंह" अथवा "मिर्जा राजा" भी कहते है। ये सन् १६२१ ई० में गद्दी पर बैठे थे। (इनके बहुत दिनों बाद सवाई जयसिंह १६९९ मे गद्दी पर बैठे और उन्होंने जयपुर शहर बसाया)। मिर्जा जयसिंह और दिलेर खाँ सन् १६६५ मे शिवाजी से लड़ने भेजे गए। जयसिंह ने

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

बेदर[1] कल्यान[2] दै परेंभा[3] आदि कोट साहि एदिल गँवाय है नवाय निज सीस को। भूषन भनत भागनगरी[4] कुतुब साई[5] दै करि गँवायो रामगिरि[6] से गिरीस को॥ भौंसिला भुवाल साहि तनै गढ़पाल दिन

सिंहगढ को घेरा और दिलेर खाँ ने पुरंधर को। शिवाजी ने जयसिंह से दब कर संधि की जिससे उन्हों (शिवाजी) ने मुगलों के जितने किले जीते थे, वे सब और निजामशाही बादशाहों से जीतें हुए ३२ किलों मे से २० किले मिर्जा राजा को भेंट किये और शिवाजी स्वय मार्च १६६६ में आगरे गए, पर दिसबर में निकल आए। सन् १६६७ मे मिर्जा राजा का देहात हुआ। ये शश (छः) हजारी मनसबदार थे।

१ बहमनीवंशज "बादशाहों" की राजधानी। इसे तथा कल्याणी को १६५७ मे औरंगजेब ने जीता। पीछे यह शिवाजी को मिला।

२ कल्हान का सूबा कोंकण में था। पहले यह अहमदनगर के निजाम-शाही "बादशाहो" का था, पर सन् १६३६ में बीजापुर के अधिकार में आया और सन् १६४८ में शिवाजी ने इसे बीजापुर के बादशाह आदिलशाह (एदिल) से जीत लिया।

३ इस (परेंझा) नाम का कोई किला या स्थान इतिहास में नहीं मिलता, हाँ एक किला परेंदा नामक था जिसका अपभ्रंश परेंझा जान पड़ता है। यह भी पहले अहमदनगर का था और फिर आदिलशाह का हो गया जिससे सन् १६६० मे इसे मुगलों ने जीता जिनसे दूसरे ही साल शिवाजी ने इसे छीन लिया।

४ छंद नं० ११७ का नोट देखिए। शिवाजी ने यहाँ कर वसूल किया पर अधिकार नहीं पाया।

५ कुतुबशाह। छंद नं० ६२ का नोट देखिए।

६ इस नाम का एक परगना था जिसमें इसी (रामगिरि) नाम की एक

दोउ ना लगाए गढ़ लेत पंचतीस[1] को। सरजा सिवाजी जयसाह मिरजा को लेन सौ गुनी बड़ाई[2] गढ़ दीन्हें हैं दिलीस को॥ २१३ ॥[3]

प्रहर्षण

लक्षण—दोहा

जहँ मन वांछित अरथ ते प्रापति कछु अधिकाय।
तहाँ प्रहरषन कहत हैं भूषन जे कबिराय[4] ॥२१४॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

साहि तनै सरजा कि कीरति सों चारों ओर चाँदनी बितान छिति छोर छाइयतु है। भूषन भनत ऐसो भूप भौंसिला है जाको द्वार भिच्छुकन सों सदाई भाइयतु है॥ महादानि सिवाजी खुमान या जहान पर दान के प्रमान जाके यो गनाइयतु है। रजत की हौस किए हेम पाइयतु जासों हयन की हौस किए हाथी पाइयतु है॥ २१५॥

पहाड़ी है और इसीके पास रामगढ़ अथवा रामनेरि का किला भी था। यह गोलकुडा की रियासत में था। छद नं० १७३ देखिए।

१ शायद पैंतीस किले शिवाजी ने मिर्जा जयसिह को भेंट किए थे।

२ अर्थात् आपने जयसिह को दब कर किले नहीं दिए वरन् हिंदू रुधिर बहाने के ठौर अपनी हार मान कर उन्हे गढ दिए जिससे आपकी बड़ाई हुई और यश बढा। छद के पहलेवाले दोहे मे भूषणजी ने यह शिवाजी के यश बढ़ाने का कारण कहा है पर बड़ी ही चतुराई से इसे "विचित्र" अलकार के उदाहरण में लिखा।

३ विचित्र के दोनों उदाहरण तृतीय असंगति से भी कुछ कुछ मिल जाते है। असगति में कार्य का पूरा होना कहा जाता है किंतु विचित्र में नही।

४ वास्तव में यहाँ दूसरे प्रहर्षण के लक्षण और उदाहरण है। भूषण ने पहला और तीसरा प्रहर्षण नहीं लिखा है।

विषादन[1]

लक्षण—दोहा

जहँ चित चाहे काज ते उपजत काज विरुद्ध।
ताहि बिषादन कहत है भूषण बुद्धि विसुद्ध॥२१६॥

उदाहरण—मालती सवैया

दारहि[2] दारि[3] मुरादहि[4] मारि कै संगर साह[5] सुजै बिचलायो।
कै कर मैं सब दिल्लि कि दौलति औरहु देस घने अपनायो॥
बैर कियो सरजा सिव सों यह नौरँग के न भयो मन भायो।
फौज पठाइ हुती गढ़ लेन को गाँठिहु[6] के गढ़ कोट गँवायो॥२१७॥

अपरंच—दोहा

महाराज सिवराज तव बैरी तजि रस रुद्र।
बचिबे को सागर तिरे बूड़े सोक समुद्र॥२१८॥

अधिक

लक्षण—दोहा

जहाँ बड़े आधार ते बरनत बढ़ि आधेय।
ताहि अधिक भूषन कहत जानि सुग्रंथ प्रमेय॥२१९॥

---

१ भूषण का विषादन तीसरे विषम से मिला जाता है; किंतु इन्होंने विषम एक ही कहा है, सो गड़बडी नहीं पड़ती।

२, ४, ५ ये तीनों औरंगजेब के भाई थे। इनका हाल प्रसिद्ध ही है कि इन्हे मारकर औरंगजेब सिंहासन पर बैठा।

३ सूली देकर।

६ गाँठ के = अपने भी। धोती की मुरीं में लोग रुपए पैसे रख लेते हैं, उससे यह मुहाविरा निकला है।

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा तव हाथ को नहि बखान करि जात।
जाको बासी सुजस सब त्रिभुवन मैं न समात ॥२२०॥

पुनः—कवित्त मनहरण

सहज सलील सील जलद से नील डील पब्बय से पील देत नाहि अकुलात है। भूषन भनत महाराज सिवराज देत कंचन को ढेरु जो सुमेरु सो लखात है॥ सरजा सवाई कासो करि कविताई तव हाथ की बड़ाई को बखान करि जात है? जाको जस टंक सात दीप नव खंड महि मंडल की कहा ब्रहमंड ना समात है ॥२२१॥

अन्योन्य

लक्षण—दोहा

अन्योन्या उपकार जहँ यह बरनन ठहराय।
ताहि अन्योन्या कहत है अलंकार कविराय ॥२२२॥

उदाहरण—मालती सवैया

तो कर सो छिति छाजत दान है दान हू सों अति तो कर छाजै।
तैही गुनी की बड़ाई सजै अरु तेरी बड़ाई गुनी सब साजै॥
भूषन तोहि सों राज बिराजत राज सों तू सिवराज बिराजै।
तो बल सों गढ़ कोट गजै अरु तू गढ़ कोटन के बल गाजै ॥२२३॥

विशेष

लक्षण—दोहा

बरनत हैं आधेय को जहँ बिनही आधार।
ताहि बिसेष बखानहीं भूषन कबि सरदार ॥२२४॥

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा सों जंग जुरि चंदावत[१] रजवंत।

---

१ अमरसिह चदावत। छंद न० ६७ का नोट देखिए।

राव अमर[1] गो अमरपुर समर रही रज तंत ॥२२५॥

पुनः—कवित्त मनहरण

सिवाजी खुमान सलहेरि मैं दिलीस दल कीन्हों कतलाम करवाल[2] गहि कर मैं। सुभट सराहे चंदावत कछवाहे मुगलौ पठान ढाहे फरकत परे फर मैं॥ भूषन भनत भौंसिला के भट उद्भट जीति घर आए धाक फैली घर घर मैं। मारु के करैया अरि अमर पुरै गे तऊ अजौं मारु मारु सोर होत है समर मै॥२२६॥

व्याघात

लक्षण—दोहा

और काज करता जहाँ करै औरई काज।
ताहि कहत व्याघात है, भूषन कवि सिरताज॥२२७॥

उदाहरण—मालती सवैया

ब्रह्म रचै पुरुषोत्तम पोसत संकर सृष्टि सँहारनहारे।
तू हरि को अवतार सिवा नृप काज सँवारे सबै हरिवारे॥
भूषन यों अवनी यवनी कहै "कोऊ कहै सरजा सों हहारे।
तू सबको प्रतिपालनहार बिचारे भतार न मारु हमारे"॥२२८॥

अन्यच्च कवित्त मनहरण

कसत मैं बार बार वैसोई बुलंद होत वैसोई सरस रूप समर भरत है। भूषन भनत महराज सिवराज मनि, सघन सदाई जस फूलन धरत

---

१ अमर सिंह राव तो अमरपुर चला गया पर उसकी राज्यश्री (यहाँ पर वीरता) निराधार युद्धस्थल मे रह गई।

२ "हाथ मे तलवार लेकर" शिवाजी इस युद्ध में नही लड़े थे। वे तो इस युद्ध में थे ही नही और उनके मंत्री मोरोपंत नामक ब्राह्मण ने यह युद्ध जीता था। हाँ "लड़ै सिपाही और नाम हो सरदार का।" इसका हाल छं० नं० ९७ के नोट में देखिए।

है ॥ बरछी कृपान गोली तीर केते मान, जोरावर गोला बान तिनहू को निदरत है। तेरो करबाल भयो जगत को ढाल, अब सोई हाल[1] म्लेच्छन के काल को करत है ॥ २२९ ॥

(कारण माला) गुम्फ

लक्षण—दोहा

पूरब पूरब हेतु कै उत्तर उत्तर हेतु।
या बिधि धारा बरनिए गुम्फ कहावत नेतु ॥२३०॥

उदाहरण—मालती सवैया

शंकर की किरपा सरजा पर जोर बढ़ी कवि भूषन गाई।
ता किरपा सों सुबुद्धि बड़ी भुव भौंसिला साहि तनै की सवाई ॥
राज सुबुद्धि सो दान बढ्यो अरु दान सों पुन्य समूह सदाई।
पुन्य सो बाढ़्यो सिवाजि खुमान खुमान सों बाढ़ी जहान भलाई ॥२३१॥

पुनः—दोहा

सुजस दान अरु दान धन धन उपजै किरवान।
सो जग मैं जाहिर करी सरजा सिवा खुमान ॥२३२॥

एकावली[2]

लक्षण—दोहा

प्रथम बरनि जहँ छोड़िए जहाँ अरथ की पाँति।
बरनत एकावलि अहै कवि भूषन यहि भाँति ॥२३३॥

उदाहरण—हरिगीतिका छंद

तिहुँ भुवन मैं भूषन भनै नरलोक पुन्य सुसाज मैं।

---

१ इस समय।

२ कारणमाला में कारण कार्य्य का संबध होता है, पर एकावली में नहीं होता, तथा मालादीपक मे दीपक का संबंध होता है सो भी एकावली मे नहीं होता।

नरलोक[1] मैं तीरथ लसै महि तीरथों कि समाज मैं ॥
महि मैं बड़ी महिमा भली महिमै[2] महारज लाज मैं ।
रज लाज राजत आजु है महराज श्री सिवराज मैं ॥२३४॥

मालादीपक एवं सार[3]

लक्षण—दोहा

दीपक एकावलि मिले मालादीपक होय ।
उत्तर उत्तर उतकरष सार कहत है सोय ॥२३५॥

उदाहरण

माला दीपक—कवित्त मनहरण

मन कवि भूषन को सिव की भगति जीत्यो सिव की भगति जीत्यो साधु जन सेवा ने । साधु जन जीते या कठिन कलिकाल कलिकाल महावीर महाराज महिमेवा ने[4] ॥ जगत मे जीते महावीर महाराजन ते महाराज बावन हू पातसाह लेवा ने । पातसाह बावनौ दिली के पातसाह दिल्लीपति पातसाहै जीत्यो हिंदुपति सेवा ने ॥२३६॥

सार यथा—मालती सवैया

आदि बड़ी रचना है बिरंचि कि जामैं रह्यौ रचि जीव[5] जड़ो है ।
ता रचना महँ जीव बड़ो अति काहे ते ता उर ज्ञान गड़ो है ॥

---

१ नरलोक में तीरथों की समाज मे महि (एक) तीरथ लसै ।

२ महिमै (महिमाही) में रजलाज (बड़ी) । यहाँ दूरान्वयी दूषण है ।

३ यहाँ धर्म अलग अलग नहीं कहना चाहिये । पृथक् पृथक् से दीपक न होकर यहाँ आवृत्ति दीपक हो गया है । दीपक मे धर्म एक ही बार कहा जाता है । दीपक मे सादृश्य का सपर्क होता है किंतु मालादीपक में अभाव ।

४ महिमावान् ।

५ जीवधारी और जड़ पदार्थ ।

जीवन मैं नर लोग बड़े कवि भूषन भाषत पैज अड़ो है।
है नर लोग मैं राज बड़ो सब राजन मे सिवराज बड़ो है ॥२३७॥

यथासंख्य

लक्षण—दोहा

क्रम सों कहि तिनके अरथ क्रम सों बहुरि मिलाय।
यथासंख्य ताको कहैं भूषन जे कविराय ॥२३८॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

जेई चहौ तेई गहौ सरजा सिवाजी देस संके दल दुवन के जे वै बड़े उर के। भूषन भनत भौंसिला सों अब सनमुख कोऊ ना लरैया है धरया धीर धुर के॥ अफजल[1] खान रुसामै[2] जमान फत्ते[3] खान खूटे कूटे लूटे ए उजीर बिजैपुर के। अमर[4] सुजान मोहकम[5] इखलास[6] खान खाँड़े छाँड़े डाँड़े उमराय दिलीसुर के ॥२३९॥

---

१ छद न० ६२ का नोट देखिए।

२ सन् १६५९ के दिसबर मे इसकी शिवाजी से परनाले के निकट मुठभेड़ हुई और शिवाजी ने इसकी सेना का बड़ा ही भयकर कतलआम किया तथा इ से कृष्णा नदी के उस पार तक खदेड़ा। इसका शुद्ध नाम रुस्तमे जमा था। भीतर से यह शिवाजी से मिला हुआ था।

३ सन् १६७० मे शिवाजी से जजीरा के किले मे लड़ा। यह शिवाजी से मिल गया और इस कारण इसके तीन साथियों ने इसे बदी कर लड़ाई जारी रक्खी।

४ छ० न० ६७ का नोट देखिए।

५ मोहकमसिंह अमरसिंह का लड़का था। सन् १६७१ में सलहेरि के युद्ध मे मरहठों ने इसे बंदी करके छोड़ दिया तथा इसके पिता अमरसिंह को मार डाला।

६ किसी किसी प्रति मे इखलास खाँ की जगह में बहलोल खाँ पाठ है,

पर्य्याय

लक्षण—दोहा

एक अनेकन में रहै एकहि में कि अनेक।
ताहि कहत परयाय हैं भूषण सुकवि विवेक ॥२४०॥

अनेकों में एक—उदाहरण—दोहा

जीति रही अवरंग मैं सबै छत्रपति छाँड़ि।
तजि ताहू कौ अब रही शिवसरजा करि माँड़ि ॥२४१॥

पुनः—कवित्त मनहरण

कोट गढ़ दै कै माल मुलुक मैं बीजापुरी गोलकुंडा वारो पीछे ही को सरकतु है। भूषन भनत भौंसिला भुवाल भुजबल रेवा ही[1] के पार अवरंग हरकतु है। पेसकसैं[2] भेजत इरान[3] फिरगान[4] पति उनहूँ के उर याकी धाक धरकतु है। साहितनै सिवाजी खुमान या जहान पर कौन पातसाह के न हिए खरकतु है? ॥२४२॥

किंतु कथन सलहेरि पर हारे हुए दिल्ली के सरदारों का है। इखलास खाँ ऐसा सरदार था। बहलोल खाँ बीजापूर का सरदार था और सलहेरि में लड़ा भी न था।

१ नर्मदा नदी के उत्तर ओर ही।

२ पेशकश, नजर, खिराज।

३ ईरान, फारस।

४ योरपवाले जैसे अंगरेज, पोर्चुगीज इत्यादि। ये युरोपियन सौदागर शिवाजी की लूट से बचने के लिये उन्हे वार्षिक कर भेजते थे। यह बात सन् १६६२ से प्रारंभ हुई, जिस सन् में शिवाजी ने पुर्तगालवालों की ६००० सेना काट डाली थी। बाबर के पिता का राज्य भी फिरंगाना कहलाता था।

एक में अनेक

अगर के धूप धूम उठत जहाँई तहाँ उठत बगूरे अब अति ही अमाप हैं। जहाँई कलावँत अलापैं मधुर स्वर तहाँई भूत-प्रेत अब करत विलाप है। भूषन सिवाजी सरजा के बैर बैरिन के डेरन मैं परे मनो काहु के सराप हैं। बाजत हे जिन महलन में मृदंग तहाँ गाजत मतंग सिंह बाघ दीह दाप हैं ॥२४३॥

परिवृत्ति

लक्षण—दोहा

एक बात को दै जहाँ आन बात को लेत।
ताहि कहत परिवृत्ति हैं भूषन सुकवि सचेत ॥२४४॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

दच्छिन धरन धीर धरन खुमान, गढ़ लेत गढ़ धरन सों धरम दुवारु[1] दै। साहि नरनाह को सपूत महाबाहु लेत मुलुक महान छीनि साहिन को मारु दै॥ संगर मै सरजा सिवाजी अरि सैनन को सारु हरि लेत हिंदुवान सिर सारु दै। भूषन भुसिल जय जस को पहारु लेत हरजू को हारु हरगन को अहारु दै ॥२४५॥

परिसंख्या[2]

लक्षण—दोहा

अनत बरजि कछु वस्तु जहँ बरनत एकहि ठौर।
तेहि परिसंख्या कहत है भूषन कवि दिलदौर ॥२४६॥

---

१ सन् १६४७ मे शिवाजी ने तीन भाइयों का आपसी झगड़ा तै करने को जाकर पुरंदर किला प्राप्त किया था। इसीसे धर्म द्वार देकर गढ लेना कहा जा सकता है। यह भी अर्थ होता है कि धर्मराज का द्वार (मृत्यु) देकर गढ़ लेते है।

२ पर्यस्तापन्हुति मे स्थापना पहले ही रूप में होती है, किंतु परिसंख्या मे

उदाहरण—मनहरण दंडक

अति मतवारे जहाँ दुरदै निहारियत तुरगन ही में चंचलाई परकीति है। भूषन भनत जहाँ पर लगैं बानन में कोक पच्छिनहि माहि बिछुरन रीति है ॥ गुनि गन चोर जहाँ एक चित्त ही के, लोक बंधैं जहाँ एक सरजा की गुन-प्रीति है। कंप[1] कदली मैं बारि बुंद बदली मैं सिवराज अदली के राज मैं यों राजनीति है ॥२४७॥

विकल्प

लक्षण—दोहा

कै वह कै यह कीजिए जहँ कहनावति होय।
ताहि विकल्प बखानहीं भूषन कवि सब कोय ॥२४८॥

उदाहरण[2]—मालती सवैया

मोरँग[3] जाहु कि जाहु कुमाऊँ[4] सिरीनगरै[5] कि कवित्त बनाए।

कहने भर को वही रूप होकर भी वास्तविक प्रयोजन बदल जाता है। जैसे कदली में कप स्वभावज है, किंतु मनुष्यों मे दोष रूप भयादि के कारण से।

१ इसका दूसरा पाठ यों है "कप ...... सिवराज अदली मै अदली का राजनीति है"।

२ ये दोनों ही उदाहरण (छं० न० २४६, २५०) अशुद्ध हैं। विकल्प में सदेह ही रहना चाहिए, पर इन दोनों छंदों में अंत मे सदेह हटा कर एक बात निश्चयात्मक कह दी गई है। कदाचित् अपने नायक की पूर्ण प्रशसा ही के लिये भूषणजी ने अपने ठीक उदाहरण अंत मे जान बूझ कर अशुद्ध कर दिए हों, पर यह अन्य प्रकार से भी संभव था।

३ इस नाम की रियासत कूचबिहार के पश्चिम और पुर्निया के उत्तर में थी। इसे मुगलों ने सन् १६६४ तथा १६७६ मे जीता। यह पहाड़ी राज्य था।

४ कमाऊँ (गढ़वाल) की रियासत में भूषणजी गए थे। इस विषय मे भूमिका देखिए। ५ काश्मीर की राजधानी।

बांधव[1] जाहु कि जाहु अमेरि[2] कि जोधपुरै कि चितौरहि[3] धाए ॥
जाहु कुतुब्ब कि एदिल पै कि दिलीसहु पै किन जाहु बोलाए।
भूषन गाय फिरौ महि मैं बनिहै चित चाह सिवाहि रिझाए ॥२४९॥

पुनः मालती सवैया

देसन देसन नारि नरेसन भूषन यों सिख देहि दया सों।
मंगन ह्वै करि, दंत गहौ तिन, कंत तुम्है है अनंत महा सों[4] ॥
कोट गहौ कि गहौ बन ओट कि फौज की जोट सजौ प्रभुता सों।
और करौ किन कोटिक राह सलाह बिना बचिहौ न सिवा सों ॥२५०॥

समाधि

लक्षण—दोहा

और हेतु मिलि कै जहाँ होत सुगम अति काज।
ताहि समाधि बखानहीं भूषन जे कविराज ॥२५१॥

उदाहरण—मालती सवैया

बैर कियो सिव चाहत हो तब लौं अरि बाह्यो कटार कठैठो।
योंहीं मलिच्छहि छाँड़ै नहीं सरजा मन तापर रोस मे पैठो ॥
भूषन क्यो अफजल्ल बचै अठपाव[5] कै सिंह को पाँव उमैठो।
बीछू के घाय धुक्योई[6] धरक्क ह्वै तो लगि धाय धराधर बैठो ॥२५२॥

---

१ बांधव की रियासत (रीवाँ)।

२ जयपुर मे इस नाम का प्रसिद्ध किला है जहाँ शक्ति शिलामयी देवी है। "जय जय शक्ति शिलामयी जय जय गढ़ आमेर। जय जयपुर सुरपुर सरिस जो जाहिर चहुँ फेर" ॥

३ चित्तौर अर्थात् मेवाड़ अथवा उदयपुर। ४ सौहँ, कसम।

५ उपद्रव, शरारत। "करौ तुम आठपाव पाधै हम गारी गाँव में" (रघुनाथ—रसिकमोहन)। बुंदेलखड में इसे अठाव कहते हैं।

६ धुकधुकाया, कलेजा काँपा।

समुच्चय

लक्षण—दोहा

एक बारही जहँ भयो बहु काजन को धध ।
ताहि समुच्चय कहत है भूषन जे मतिबध ॥२५३॥

उदाहरण—मालती सवैया

माँगि पठायो सिवा कछु देस वजीर अजानन बोल गहे ना ।
दौरि लियो सरजै परनालो[1] यो भूषन जो दिन दोय लगे ना ॥
धाक सो खाक बिजैपुर भो मुख आय गो खान[2] खबास के फेना[3] ।
भै भरकी करकी धरकी दरकी दिल एदिल साहि कि सेना ॥२५४॥

द्वितीय समुच्चय

लक्षण[4]—दोहा

वस्तु अनेकन को जहाँ बरनत एकहि ठौर ।
दुतिय समुच्चय ताहि को कहि भूषन कबिमौर ॥२५५॥

उदाहरण—मालती सवैया

सुदरता गुरुता प्रभुता भनि भूषन होत है आदर जामैं ।
सज्जनता औ दयालुता दीनता कोमलता झलकै परजा मैं ॥
दान कृपानहु को करिबो करिबो अभै दीनन को बर जामैं ।
साहन सो रन टेक बिबेक इते गुन एक सिवा सरजा मैं ॥२५६॥

---

१ छ० न० १०७ का नोट देखिए । मार्च सन् १६७३ की घटना है ।

२ छ० न० २०६ का नोट देखिए ।

३ भयानक रसपूर्ण ।

४ अन्य कवि इसका लक्षण यों देते हैं—"द्वितीय समुच्चय मे एक काज को कई कारण पुष्ट करते हैं ।" प्रथम समुच्चय मे कई क्रियाये एक ही भाव को साथ ही पुष्ट करती हैं। तथा दूसरे मे बहुत से ऐसे कारण मिलकर एक ही कार्य सपादित करते है, जिन कारणों मे प्रत्येक प्रधान रहता है और यह प्रकट नही होता कि उनमें से किससे कार्यसिद्धि हुई ।

प्रत्यनीक

लक्षण–दोहा

जहँ जोरावर सत्रु के पच्छी पै कर जोर।
प्रत्यनीक तासो कहैं भूषन बुद्धि अमोर ॥२५७॥

उदाहरण—अलसा सवैया[1]

लाज धरौ सिवजू सों लरौ सब सैयद सेख पठान पठाय कै।
भूषन ह्याँ गढ़ कोटन हारे उहाँ तुम क्यों मठ[2] तोरे रिसाय कै ? ॥
हिंदुन के[3] पति सों न बिसाति सतावत हिंदु गरीबन पाय कै।
लीजै कलंक न दिल्लि के बालम आलम आलमगीर[4] कहाय कै ॥२५८॥

---

१ अलसा सवैया नवीन मत की है। इसमें पहले सात भगण फिर एक रगण (रगनंत भ मुनि) होते हैं। भगण के तीन अक्षरों मे पहला गुरु और शेष दो लघु होते हैं तथा रगण के तीन अक्षरों में पहला व तीसरा गुरु होता है और दूसरा लघु। इसका रूप यों है—०ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।ऽ०

२ औरंगजेब ने हिंदुओं को सताने के लिये अनेक मदिर तुड़वा दिए, यहाँ तक कि काशीजी में श्री विश्वनाथजी तक का मंदिर तुड़वा कर उसकी एक ओर की दीवार पर मसजिद बनवा दी जो अब तक जैसी की तैसी विद्यमान है। न जाने इसमें हिंदुओं की क्या वास्तविक हानि हो गई, पर हाँ, इतना अवश्य हुआ कि ऐसी ही बातों से मुगलों के ऐसे सुदृढ़ राज्य की नीव हिल गई और कुछ ही दिनों में वह भरभरा कर ढेर हो गया। आश्चर्य है कि औरगजेब जैसे राजनीतिज्ञ शासक ने ऐसी उत्कट भूलें कीं। अस्तु। सन् १६६६ ई० की घटना है। वीभत्स रस।

३ मेवाड़ (उदयपुर) के राणा "हिंदूपति" कहलाते हैं। शिवाजी को उसी वंश के होने से भूषणजी ने इस नाम से पुकारा।

४ औरगजेब का यह भी नाम था जिसका अर्थ है संसार भर पर अधिकार कर लेनेवाला।

पुनः—कवित्त मनहरण

गौर[1] गरबीले अरबीले राठवर[2] गह्यो लोह[3] गढ़ सिंहगढ़ हिम्मति हरषते। कोट के कँगूरन मैं गोलंदाज तीरंदाज राखे हैं लगाय, गोली तीरन बरषते॥ कै कै सावधान किरवान कसि कम्मरन सुभट अमान चहुँ ओरन करषते। भूषन भनत तहाँ सरजा सिवा तैं चढ़ो राति के सहारे ते अराति अमरष[4] ते॥ २५९॥

अर्थापत्ति (काव्यार्थापत्ति)

लक्षण—दोहा

"वह कीन्ह्यो तौ यह कहा" यों कहनावति होय।
अर्थापत्ति बखानहीं तहाँ सयाने लोय॥२६०॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

सयन मैं साहन को सुंदरी सिखावैं ऐसे सरजा सों बैर जनि करौ महा बली है। पेसकसैं[5] भेजत विलायति पुरुतगाल सुनिकै सहमि जात करनाट[6] थली है॥ भूषन भनत गढ़ कोट माल मुलुक दै सिवा सों सलाह राखिए तौ बात भली है। जाहि देत दंड सब डरिकै अखंड सोई दिली दलमली तौ तिहारी कहा चली है?"॥ २६१॥

---

१ छं० नं० १३४ का नोट देखिए।

२ जोधपुर के राजा। यहाँ उदयभानु राठौर (छं० नं० १०० देखिए)।

३ सिंहगढ़ (छं० न० १०० देखिए) के गढ़ अर्थात् किले मे लोह अर्थात् तलवार गही।

४ शत्रु पर क्रोध करके।

५ छं० नं० २४२ का नोट देखिए।

६ छं० नं० ११७ का नोट देखिए।

काव्यलिंग[1]

लक्षण—दोहा

है दिढ़ाइबे जोग जो ताको करत दिढ़ाव।
काव्यलिग तासों कहैं भूषन जे कबिराव॥ २६२॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

साइति लै लीजिए बिलाइति को सर कीजै बलख बिलायति को बंदि अरि डावरे। भूषन भनत कीजै उत्तरी भुवाल बस पूरब के लीजिए रसाल गज छावरे॥ दच्छिन के नाथ से सिपाहिन सों बैर करि अवरंग साहिजू कहाइए न बावरे। कैसे सिवराज मानु देत अवरंगै गढ़ गाढ़े गढ़पती गढ़ लीन्हे और रावरे॥२६३॥

अर्थांतरन्याम

लक्षण[2]—दोहा

कह्यो अरथ जहँही लिये और अरथ उल्लेख।
सो अर्थांतरन्यास है कहि सामान्य बिसेख॥२६४॥

उदाहरण—सामान्य भेद—कवित्त मनहरण

बिना चतुरंग संग बानरन लैके बाँधि बारिध को लंक रघुनंदन जराई है। पारथ अकेले द्रोन भीषम से लाख भट जीति लीन्ही नगरी

---

१ काव्यलिग में हेतु ज्ञापक मात्र होता है, कारक नहीं। ज्ञापक केवल ज्ञान देने वाले को कहते हैं और कारक कर्म करने वाले को। कारक को उत्पादक हेतु भी कहते हैं।

२ इसका लक्षण अन्य कवि यों देते हैं—अर्थांतरन्यास वह है जहाँ सामान्य से विशेष का या विशेष से सामान्य का समर्थन हो। इसमे सामान्य विशेष दोनों होते हैं, किंतु दृष्टांत में या तो सामान्य ही सामान्य रहते हैं या विशेष ही विशेष।

बिराट में बड़ाई है ॥ भूषन भनत ह्वै गुसुलखाने मे खुमान अवरंग साहिबी हथ्याय हरिलाई है । तौ कहा अचंभो महराज सिवराज सदा वीरन के हिम्मतै हथ्यार होति आई है ॥२६५॥

विशेष भेद—मालती सवैया

साहि तनै सरजा समरत्थ करी करनी धरनी पर नीकी ।
भूलिगे भोज से बिक्रम से औ भई बलि बेनु कि कीरति फीकी ॥
भूषन भिच्छुक भूप भए भलि भीख लै केवल भौंसिला ही की ।
नैसुक रीझि धनेस करै, लखि ऐसियै रीति सदा सिवजी की ॥२६६॥[1]

प्रौढ़ोक्ति

लक्षण—दोहा

जहँ[2] उतकरष अहेत को बरनत हैं करि हेत ।
प्रौढ़ोकति तासों कहत भूषन कबि बिरदेत[3] ॥२६७॥

[4]उदाहरण—कवित्त मनहरण

मानसर बासी हंस बंस न समान होत, चंदन सो घस्यो घनसारऊ[5]

---

१ २६५ मे सामान्य से विशेष का समर्थन है तथा २६६ मे विशेष से सामान्य का ।

२ इसका लक्षण अन्य कवियों ने यों भी कहा है—प्रौढोक्ति वह है जहाँ कोई बहुत बड़ा काज हो और उसके वास्ते कोई कारण वर्णित न हो, वहाँ पर कोई कल्पित कारण कहा जाय ।

३ विरद (प्रशसा) करनेवाले ।

४ इस उदाहरण मे उपमानों की निदा मात्र है और रूप प्रतीप का निकलता है । फिर भी कैलासवाले हिम के सपर्क से चंद्रमा की श्वेतता में वृद्धि मानी जाने से प्रौढ़ोक्ति भी निकल ही आती है ।

५ कपूर भी ।

घरीक है। नारद की सारद की हाँसी मैं कहाँ सी आभ सरद की सुर-सरी कौन पुंडरीक है ॥ भूषन भनत छक्यो छीरधि मैं थाह लेत फेन लपटानो ऐरावत को करी कहै ?। कयलास ईस ईस सीस रजनीस वहौ अवनीस सिवा के न जस को सरीक है ॥२६८॥

संभावना

लक्षण—दोहा

"जु यों होय तौ हौय इमि" जहँ संभावन होय।
ताहि कहत संभावना कबि भूषन सब कोय ॥२६९॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

लोमस की ऐसी आयु होय कौन हू उपाय तापर कवच जो करनवारो धरिए। ताहू पर हूजिये सहसबाहु ता पर सहस गुनो साहस जो भीमहू ते करिए ॥ भूषन कहैं यों अवरंगजू सों उमराव नाहक कहौ तौ जाय दच्छिन मे मरिए। चलै न कछू इलाज भेजियत वेही काज ऐसो होय साज तौ सिवा सों जाय लरिए ॥२७०॥

मिथ्याध्यवसित

लक्षण—दोहा

झूठ अरथ की सिद्धि को झूठो बरनत आन।
मिथ्याध्यवसित कहत हैं भूषन सुकबि सुजान ॥२७१॥

उदाहरण—दोहा

पम रन मैं चल यों लसै ज्यों अंगद पग ऐन।
धुव सो भुव सो मेरु सो सिव सरजा को बैन[1] ॥२७२॥

---

[1] इसमें शिवाजी के विषय में झूठी बाते झूठी उपमाओं द्वारा कही गई हैं जैसा कि भूषणजी ने लक्षण में साफ लिख दिया है।

पुनः—कवित्त मनहरण

मेरु सम छोटो पन सागर सो छोटो मन धनद को धन ऐसो छोटो जग जाहि को। सूरज सो सीरो तेज चाँदनी सी कारी कित्ति अमिय सो कटु लागै दरसन ताहि को॥ कुलिस सो कोमल कृपान अरि भंजिबे को भूषन भनत भारी भूप भौंसिलाहि को। भुव सम चल पद सदा महिमंडल में ध्रुव सो चपल ध्रुव बल सिव साहि को॥२७३॥

उल्लास

लक्षण—दोहा

एकहि के गुन दोष ते औरै को गुन दोस।
बरनत हैं उल्लास सो सकल सुकबि मतिपोस॥२७४॥

उदाहरण (गुणेन दोषो)। मालती सवैया

काज मही सिवराज बली हिंदुवान बढ़ाइबे को उर ऊटै।
भूषन भू निरम्लेच्छ करी चहै, म्लेच्छन मारिबो को रन जूटै॥
हिंदु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौं कोइ टूटै।
चंद अलोक ते लोक सुखी यहि कोक अभागे को सोक न छूटै॥२७५॥

पुनः (दोषेण गुणो)। मनहरण दंडक

देस दहपट्ट कीने लूटि कै खजाने लीने बचे न गढ़ोई काहू गढ़ सिरताज के। तोरादार[१] सकल तिहारे मनसबदार डाँड़े, जिनके सुभाय जंग दै मिजाज के॥ भूषन भनत बादसाह को यों लोग सब बचन सिखावत सलाह की इलाज के। डावरे की बुद्धि ह्वै कै बावरे न कीजै बैरु रावरे के बैर होत काज सिवराज के॥ २७६ ॥

अन्यच्च (गुणेन गुणो)। दोहा

नृप समान मैं आपनी होन बड़ाई काज।
साहितनै सिवराज के करत कबित कबिराज॥२७७॥

---

१ तिहारे सकल तोरादार (तथा) मनसबदार जिनके सुभाव मिजाज के (अभिमानी थे) युद्ध करके डाँड़े।

अपरंच (दोषेण दोषो)। दोहा

सिव सरजा के बैर को यह फल आलमगीर।
छूटे तेरे गढ़ सबै कूटे गए वजीर ॥२७८॥

पुनरपि। मनहरण दंडक

दौलति दिली की पाय कहाए अलमगीर बब्बर[1] अकब्बर[2] के बिरद बिसारे तैं। भूषन भनत लरि लरि सरजा सों जंग निपट असंगगढ़कोट सब हारे तैं॥ सुधर्‌यो न एकौ साज भेजि भेजि बेहीकाज बड़े बड़े बे इलाज उमराव मारे तैं। मेरे कहे मेर करु, सिवाजी सो बैर करि गैर[3] करि नैर[4] निज नाहक उजारे तैं॥२७९॥

अवज्ञा[5]

लक्षण—दोहा

औरे के गुन दोस ते होत न जहँ गुन दोस।
तहाँ अवज्ञा होति है भनि भूषन मतिपोस ॥२८०॥

उदाहरण। मालती सवैया

औरन के अनबाढ़े कहा अरु बाढ़े कहा नहि होत चहा है।
औरन के अनरीझे कहा अरु रीझे कहा न मिटावत हा[6] है॥
भूषन श्री सिवराजहि माँ गिए एक दुनो बिच दानि महा है।
मंगन औरन के दरबार गए तो कहा न गए तौ कहा है? ॥२८१॥

---

१ बाबर बादशाह, औरँगजेब के पाँच पुस्त ऊपर वाला भारत का पहला मुगल बादशाह था।

२ अकबर औरगजेब का परदादा था।

३ गैर करि=बेजा करके।

४ नगर; देश।

५ विशेषोक्ति मे कारण का आभास मात्र है, किंतु अवज्ञा में शुद्ध कारण होने पर भी फल प्राप्ति नहीं होती।

६ "हाय" अर्थात् दुःख को नही मिटाता।

अनुज्ञा

लक्षण—दोहा

जहाँ सरस गुन देखि कै करै दोस की हौस।
तहाँ अनुज्ञा होति है भूषण कबि यहि रौस ॥२८२॥

उदाहरण। कवित्त मनहरण

जाहिर जहान सुनि दान के बखान आजु महादानि साहितनै गरिब-नेवाज के। भूषन जवाहिर जलूस जरबाफ जोति देखि देखि सरजा के सुकबि समाज के॥ तप करि करि कमलापति सो माँगत यो लोग सब करि मनोरथ ऐसे साज के। बैपारी जहाज के न राजा भारी राज के भिखारी हमैं कीजै महाराज सिवराज के॥ २८३॥

लेश

लक्षण—दोहा

जहँ बरनत गुन दोष, कै कहै दोष गुन रूप।
भूषन ताको लेस कहि गावत सुकबि अनूप ॥२८४॥

उदाहरण—दोहा[1]

उदैभानु राठौर बर धरि धीरज गढ़ ऐड।
प्रगटे फल ताको लह्यौ परिगो सुरपुर पैंड ॥२८५॥
कोऊ बचत न सामुहें सरजा सो रन साजि।
भली करी पिय! समर ते जिय लै आए भाजि ॥२८६॥

तद्गुण[2]

लक्षण—दोहा

जहाँ आपनो रग तजि गहै और को रंग

---

१ पहले उदाहरण मे गुण दोष रूप है और दूसरे में दोष गुण रूप।

२ भूषण ने इसमे केवल रग का कथन किया है किंतु किसी भी गुण का हो सकता है।

ताको तदगुन कहत है भूषन बुद्धि उतंग ॥२८७॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

पंपा[1] मानसर आदि अगन तलाब लागे जेहि के परन मैं अकथ युत[2] गथ के। भूषन यों साज्यो रायगढ़[3] सिवराज रहे देव चक चाहि कै बनाए राजपथ के॥ बिन[4] अवलंब कलिकानि[5] आसमान मैं ह्वै होत बिसराम जहाँ इंदु औ उदथ[6] के। महत उतंग मनि जोतिनकेसंग[7] आनि कैयो रंग चकहा[8] गहत रबि रथ के॥ २८८॥

पूर्वरूप

लक्षण—दोहा

प्रथम रूप मिटि जात जहँ फिरि वैसोई होय।
भूषन पूरब रूप सो कहत सयाने लोय ॥२८९॥

---

१ जिस (रायगढ़) के पक्षों अर्थात् पक्खों में पपा, मानसरोवर आदि अगणित तालाब लगे हैं अर्थात् चित्रित हैं।

२ वे (तालाब) अकथनीय हैं और उनके साथ कितनी ही गाथाएँ लगी है अर्थात् वे इतिहासों और पुराणों में प्रसिद्ध हैं।

३ इसका वर्णन छंद नं० १४ के नोट एव छंद न० १५, २४ मे देखिए। जान पड़ता है कि वह वर्णन रायगढ़ ही का है न कि राजगढ़ का। भूमिका देखिए।

४ बिना किसी चीज पर सहारा पाने के सूर्य और चद्रमा आसमान मे परेशान होकर जिस रायगढ़ पर विश्राम ले लेते हैं।

५ परेशानी।

६ उदय व अस्त होनेवाला, सूर्य।

७ के संग आनि—से मिलान होकर।

८ पहिए।

[1]उदाहरण । मालती सवैया

ब्रह्म के आनन ते निकसे ते अत्यंत पुनीत तिहुँ पुर मानी ।
राम युधिष्ठिर के बरने बलमीकिहु ब्यास के संग सोहानी ॥
भूषन यों कलि के कबिराजन राजन के गुन पाय नसानी ।
पुन्य चरित्र[2] सिवा सरजा सर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी ॥२९०॥
यों सिर पै छहरावत छार हैं जाते उठैं असमान बगूरे ।
भूषन भूधरऊ धरकैं जिनके धुनि धक्कन यों बल रूरे ॥
ते सरजा सिवराज दिए कविराजन को गजराज गरूरे ।
सुंडन सों पहिले जिन सोखि कै फेरि महामद सों नद पूरे ॥२९१॥
श्री सरजा सलहेरि[3] के जूझ घने उमरावन के घर घाले ।
कुंभ चदावत सैद पठान कबंधन धावत भूधर हाले ॥
भूषन यों सिवराज कि धाक भए पियरे अरुने रँग वाले ।
लोहै कटे लपटे बहु लोहु[4] भए मुँह मीरन के पुनि लाले ॥२९२॥
यों कबि भूषन भाषत है यक तौ पहिले कलिकाल कि सैली ।
तापर हिंदुन की सब राहनि नौरँगसाहि करी अति मैली ॥

---

१ भूषण के चारो उदाहरणों में प्रथम पूर्व है। द्वितीय भेद आपने न कहा न उसका उदाहरण दिया ।

२ इसको पढकर तुलसीदासजी की—

"भगत हेतु विधि भवन बिहाई । सुमिरत सारद आवति धाई ॥" "राम चरित सर बिनु अन्हवाए । सो श्रम जाय न कोटि उपाए ॥" इत्यादि चौपाइयों का स्मरण हो आता है । इस विषय मे हमने अपने विचार सरस्वती भाग १ संख्या १२ में "हिंदी काव्य (आलोचना)" शीर्षक निबंध में प्रकट किए हैं । विषयी राजाओं के कारण लोभी कवियों ने नायिका इत्यादिक विषयों पर काव्य कर सरस्वती देवी को अपवित्र सा कर दिया था ।

३ छंद नं० ९७ का नोट देखिए ।

४ लहू; रुधिर ।

साहि तनै सिव के डर सों तुरकौ गहि बारिध की गति पैली।
बेद पुरानन की चरचा अरचा दुज देवन की फिरि फैली ॥२९३॥

अतद्गुण

लक्षण—दोहा

जहँ संगति ते और को गुन कछूक नहिं लेत ।
ताहि अतदगुन कहत हैं भूषन सुकबि सचेत ॥ २९४ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

दीन दयालु दुनी प्रतिपालक जे करता-निरम्लेच्छ मही के।
भूषन भूधर उद्धरिबो सुने और जिते गुन ते सब जी के ॥
या कलि मैं अवतार लियो तऊ तेई सुभाय सिवाजि बली के।
आय धर्यो हरि ते नर रूप पै काज करै सिगरे हरिही के ॥२९५॥

पुनः—कवित्त मनहरण

सिवाजी खुमान तेरो खग्ग बढ़े मान बढ़े मानस लौं वदलत कुरुष उछाह[1] ते। भूषन भनत क्यो न जाहिर जहान होय प्यार पाय तो से ही दिपत नर नाह ते॥ परताप फेटो रहो सुजस लपेटो रहो बरनत खरो नर पानिप अथाह ते। रंग रंग रिपुन के रकत सों रँगों रहै रातो दिन रातो पै न रातो होत स्याह ते ॥ २९६ ॥

अपरंच। दोहा

सिव सरजा की जगत मैं राजति कीरति नौल।
अरि तिय अंजन हग हरै तऊ धौल की धौल ॥२९७॥

अनुगुण

लक्षण—दोहा

जहाँ और के संग ते बढ़ै आपनो रंग।
ता कहँ अनुगुन कहत हैं भूषन बुद्धि उतंग ॥ २९८ ॥

---

१ मानसरोवर की भाँति बेरुखी उछाह मे परिणत हो जाती है।

उदाहरण—कवित्त मनहरण

साहि तनै सरजा सिवा के सनमुख आय कोऊ बचि जाय न गनीम भुज बल मैं। भूषन भनत भौंसिला की दिलदौर सुनि धाक ही मरत म्लेच्छ औरंग के दल मै॥ रातौ दिन रोवत रहत यवनी है सोक परोई रहत दिली आगरे सकल मैं। कज्जल कलित अँसुवान के उमंग संग दूनो होत रोज रंग जमुना के जल मैं॥२९९॥

मीलित

लक्षण—दोहा

सदृश वस्तु मैं मिलि जहाँ भेद न नेक लखाय।
ताको मीलित कहत हैं भूषन जे कबिराय॥३००॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

इंद्र निज हेरत फिरत गज-इंद्र अरु इंद्र को अनुज[1] हेरै दुगधन-दीस[2] को। भूषन भनत सुरसरिता को हंस हेरै बिधि हेरै हंस को चकोर रजनीस को॥ साहि तनै सिवराज करनी करी है तै जु होत है अचंभो देव कोटियौ तैंतीस को। पावत न हेरे तेरे जस मैं हिराने निज गिरि को गिरीस हेरैं गिरिजा गिरीस को॥ ३०१॥

उन्मीलित

लक्षण—दोहा

सदृस वस्तु मैं मिलत पुनि जानत कौनेहु हेत।
उनमीलित तासों कहत भूषन सुकबि सचेत॥ ३०२॥

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा तव सुजस मैं मिले धौल छबि तूल।
बोल बास ते जानिए हंस चमेली फूल॥३०३॥

---

१ इंद्र के छोटे भाई अर्थात् विष्णु जो क्षीर समुद्र मे शयन करते है।
२ दुग्ध समुद्र।

सामान्य[1]

लक्षण—दोहा

भिन्न रूप जहँ सदृश ते भेद न जान्यो जाय।
ताहि कहत सामान्य है भूषन कबि समुदाय ॥२०४॥

उदाहरण—मालती सवैया

पावस की यक राति भली सु महाबली सिंह सिवा गमके ते।
म्लेच्छ हजारन ही कटि गे दस ही मरहट्टन के झमकेते ते॥
भूषन हालि उठे गढ़ भूमि पठान कबंधन के धमके ते।
मीरन के अवसान गये मिलि धोपनि[2] सों चपला चमके ते ॥२०५॥

विशेषक

लक्षण—दोहा

भिन्न रूप सादृश्य मैं लहिए कछू बिसेख।
ताहि बिशेषक कहत हैं भूषन सुमति उलेख ॥२०६॥

---

१ मीलित मे सादृश्य के कारण दो वस्तुयें मिलकर एक ही (अभिन्न) हो जाती हैं, इधर सामान्य मे बनी दोनों रहती हैं किंतु कौन कौन हैं सो पता नहीं पड़ता।

२ संगीन की भाँति एक हथियार। यथा "छत्रसाल जेहि दिसि पिलै धारि धोप कर माहि। तेहि दिसि सीस गिरीस पै बनत बटोरत नाहि"॥ (छत्रप्रकाश) यहाँ अफजल खाँ वाली लड़ाई का इशारा भूषणजी ने किया है। जब खाँ दिन मे मारा जा चुका था, तब शाम को किले में पाँच तोपे दागी गई। इस पर नेताजी पालकर तथा मोरोपंत ने खाँ की सेना पर रात मे आक्रमण करके हजारों आदमियों को मारा और सेना भागी। यह सितबर सन् १६५६ की घटना है। यहाँ १६७० वाली महोली या जँजीरा की लड़ाइयों का भी कथन संभव है।

उदाहरण—कवित्त मनहरण

अहमदनगर[1] के थान किरवान लै कै नवसेरी खान[2] ते खुमान भिरथो बल ते। प्यादेन सों प्यादे पखरैतन सो पखरैत बखतरवारे बखतरवारे हल ते॥ भूषन भनत एते मान घमसान भयो जान्यो न परत कौन आयो कौन दल ते। सम वेष ताके, तहाँ सरजा सिवा के बाँके बीर जाने हाँ के देत, मीर जाने चलते॥३०७॥

पिहित

लक्षण—दोहा

परके मन की जानि गति ताको देत जनाय।
कछू क्रिया करि, कहत हैं पिहित ताहि कबिराय॥३०८॥

उदाहरण—दोहा

गैर मिसिल ठाढ़ो सिवा अंतरजामी नाम।
प्रकट करी रिस, साहि को सरजा करि न सलाम॥३०९॥

आनि[3] मिल्यो अरि, यों गह्यो चखन चकत्ता चाव।
साहि तनै सरजा सिवा दियो मुच्छ पर ताव॥३१०॥

---

१ निजामशाही "बादशाहों" की राजधानी। यहाँ पर शिवाजी ने नौशेरी खाँ को सन् १६५७ में लूटा। यहीं १६६१ में शिवाजी के सेनापति प्रतापराव गूजर ने बादशाही अफसर महकूब सिंह को मारा।

२ नौशेरी खाँ को खानदौरा की उपाधि थी (छंद न० १०३ का नोट देखिए।) कारतलब खाँ तथा करण सिंह भी इसी युद्ध में लड़े। शिवाजी ने अहमदनगर को इस मौके पर थोड़ा बहुत लूटा।

३ वीर रस अपूर्ण।

प्रश्नोत्तर[1]

लक्षण—दोहा

कोऊ बूझै बात कछु कोऊ उत्तर देत।
प्रश्नोत्तर ताको कहत भूषन सुकबि सचेत ॥३११॥

प्रथम भेद—उदाहरण—मालती सवैया

लोगन सों भनि भूषन यों कहै खान[2] खवास कहा सिख दैहौ।
आवत देसन लेत सिवा सरजै मिलिहौ भिरिहौ कि भगैहौ॥
एदिल की सभा बोलि उठी यों सलाह करौऽब कहाँ भजि जैहौ।
लीन्हो कहा लरिकै अफजल्ल कहा लरिकै तुमहूँ अब लैहौ? ॥३१२॥

दूसरा भेद—उदाहरण—दोहा

को दाता को रन चढ़ो को जग पालनहार?।
कवि भूषन उत्तर दियो सिव नृप हरि अवतार ॥३१३॥

व्याजोक्ति[3]

लक्षण—दोहा

आन हेतु सों आपनो जहाँ छिपावै रूप।
व्याज-उकुति तासो कहत भूषन सुकबि अनूप ॥३१४॥

---

१ पहले प्रश्नोत्तर में अभग सभग द्वारा प्रश्न ही मे उत्तर निकलता है, तथा दूसरे में कई प्रश्नो का एक ही उत्तर होता है। भूषण का दूसरा उदाहरण तो ठीक है, किंतु पहले में अभग सभग का समावेश न तो लक्षण मे है न उदाहरण मे। जैसे प्रश्न—को करत कामिनी को मनभायो? उत्तर—कोक रत। यहाँ सभग द्वारा प्रश्न ही में उत्तर निकल आया।

२ छद नं० २०६ का नोट देखिए।

३ यहाँ अपना आकार दूसरा हेतु कहकर छिपाया जाता है। छेकापन्हुति मे उक्ति मात्र छिपाई जाती है और व्याजोक्ति में आकार।

उदाहरण—मालती सवैया

साहिन के उमराव जितेक सिवा सरजा सब लूटि लए हैं।
भूषन ते बिन दौलति ह्वै कै फकीर ह्वै देश बिदेश गए हैं॥
लोग कहैं इमि दच्छिन[1] जेय सिसौदिया रावरे हाल ठए है ?।
देत रिसाय कै उत्तर यों हमहीं दुनियाँ ते उदास भए है[2] ॥३१५॥

पुनः—दोहा

सिवा बैर औरंग बदन लगी रहै नित आहि।
कवि भूषन बूझे सदा कहै देत दुख साहि[3] ॥३१६॥

लोकोक्ति एवं छेकोक्ति

लक्षण—दोहा

कहानवति जो लोक की लोक उकुति सो जानि।
जहाँ कहत उपमान ह्वै छेक उकुति तेहि मानि॥३१७।

उदाहरण

लोकोक्ति—यथा—दोहा

सिव सरजा की सुधि करौ भली न कीन्ही पीव।
सूबा ह्वै दच्छिन चले धरे जात कित जीव ? ॥३१८॥

[4]छेकोक्ति—यथा—दोहा

जे सोहात सिवराज को ते कवित्त रस मूल।
जे परमेश्वर पै चढ़ैं तेई आछे फूल॥३१९॥

---

१ दक्षिण का जीतनेवाला सिसौदिया अर्थात् शिवाजी।

२ इन दो पदों का पाठातर यों है—"ईजति राखि सकै अपनी इमि स्यानपनो करि त्योर ठए हैं। भेटत ही सब ही सो कहैं हम या दुनियाॅ ते उदास भए हैं।"

३ शाही, राज्यभार।

४ इसमे प्रायः किसी का अपमान किया जाता है।

पुनः—किरीटी सवैया[1]

औरँग जो चढ़ि दक्खिन आवै तो ह्याँ ते सिधावै सोऊ बिनु कप्पर।
दीनो मुहीम को भार बहादुर[2] छागो[3] सहै क्यों गयंद का झप्पर ?॥
सासता खाँ सँग वे हठि हारे जे साहब सातएँ ठीक भुवप्पर।
ये अब सूबहु आवैं सिवा पर "काल्हि के जोगी कलींदे[4] को खप्पर"॥३२०॥

वक्रोक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ श्लेष सों काकु[5] सों अरथ लगावै और।
वक्र उकुति ताको कहत भूषन कवि सिरमौर॥३२१॥

उदाहरण

श्लेष से वक्रोक्ति—कवित्त मनहरण

साहि बनै तेरे बैर बैरिन को कौतुक सो बूझत फिरत कहौ काहे रहे तचि हौ ?। सरजा के डर हम आए इतै भाजि तब सिंह सों डराय याहू ठौर ते उकचि[6] हौ॥ भूषन भनत वै कहैं कि हम सिव कहैं तुम चतुराई

---

१ इस सवैया में "वसुभा" अर्थात् आठ भगण होते हैं। एक गुरु फिर दो लघु अक्षर=भगण।

२ कदाचित् यह खानबहादुर=खाजहाँ बहादुर के विषय में हो। इसका हाल छंद न० ६६ में बहलोलवाले नोट मे देखिए।

३ बकरा; छगरा।

४ तरबूजा। "नई नाइन बाँस का नहन्ना" की तरह यह भी एक कहावत है।

५ स्वर फिराकर अर्थ का बदलना।

६ उचकोगे; उठ भागोगे। सरजा यहाँ सिंह के अर्थ में आया है। सर जाह ऊँची पदवीवाले को कहते हैं और सिंह का पद ऊँचा है ही।

सो कहत बात रचि हौ। सिव जापै रूठैं तौ निपट कठिनाई तुम बैर त्रिपुरारि के त्रिलोक मैं न बचिहौ ॥३२२॥

[1]काकु से वक्रोक्ति—कवित्त मनहरण

सासता[2] खाँ दक्खिन को प्रथम पठायो तेहि बेटा के समेत हाथ जाय कै गँवायो है। भूषन भनत जौ लौं भेजौं उत औरै तिन वे ही काज बरजोर कटक कटायो है॥ जोई सूबेदार जात सिवाजी सों हारि तासों अवरंग साहि इमि कहै मन भायो है। मुलुक लुटायो तौ लुटायो, कहा भयो? तन आपनो बचायो महाकाज करि आयो है॥ ३२३॥

पुनः—दोहा

करि मुहीम आये कहत हजरत मनसब दैन।
सिव सरजा सो जंग जुरि ऐहै बचिकै है न॥३२४॥

स्वभावोक्ति

लक्षण—दोहा

साँचो तैसो बरनिए जैसो जाति स्वभाव।
ताहि सुभावोकति कहत भूषन जे कबिराव॥३२५॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

दान[3] समै द्विज देखि मेरहू कुबेरहू की संपति लुटायबे को हियो ललकत है। साहि के सपूत सिव साहि के बदन पर सिव की कथान मैं सनेह झलकत है॥ भूषन जहान हिंदुवान के

---

१ यहाँ शरीर बचाने मात्र से महा काज वास्तव मे हुआ नहीं, किंतु कहने के ढग से स्वर द्वारा उमरावो की निंदा की गई है। दोहा वाले उदाहरण (नं० ३२४) मे भी काकु मौजूद है। है न का अर्थ लेना पड़ैगा सच है न।

२ छंद नं० ३५ का नोट देखिए।

३ इस कवित्त मे दान, दया तथा युद्ध वीर सभी वर्णित है और वीररस भी पूर्ण है।

उबारिबे को तुरकान मारिबे को बीर बलकत है। साहिन सों लरिबे की चरचा चलति आनि सरजा के दृगन उछाह छलकत है ॥३२६॥

काहू[1] के कहे सुने ते जाही ओर चाहै ताही ओर इकटक घरी चारिक चहत[2] हैं। कहे ते कहत बात कहे ते पियत खात भूषन भनत ऊँची साँसन जहत हैं॥ पौढ़े है तौ पौढ़े बैठे बैठे खरे खरे हम को है कहा करत यो ज्ञान न गहत हैं। साहि के सपूत सिव साहि तव बैर इमि साहि सब रातौ दिन सोचत रहत है॥ ३२७॥

उमड़ि कुड़ाल[3] मैं खवास खान आए भनि भूषन त्यो धाए सिवराज पूरे मन के। सुनि मरदाने बाजे हय हिहनाने घोर मूछैं तरराने मुख वीर धीर जन के॥ एकै कहै मार मार सम्हरि समर एकै म्लेच्छ गिरे मार बीच बेसम्हार तन के। कुडन[4] के ऊपर कड़ाके उठै ठौर ठौर जीरन[5] के ऊपर खड़ाके खड़गन के॥ ३२८॥

आगे आगे तरुन तरायले चलत चले तिनके अमोद[6] मद मद मोद सकसै। अड़दार बड़े गड़दारन[7] के हाँके सुनि अड़े गैर[8] गैर माहि रोस रस अकसै॥ तुंडनाय सुनि गरजत गुजरत भौर भूषन भनत तेऊ महा

---

१ भयानक रस।

२ देखते हैं।

३ इसे शिवाजी ने सावत वाड़ी के रईस से सन् १६६१ मे जीता। पहले यहाँ खवास खाँ ससैन्य आया था, किंतु फिर करनाटक चला गया। तब शिवाजी ने कुडाल ले लिया।

४ लोहे का टोप।

५ जिरह बख्तर।

६ खेल कूद।

७ छंद ३१-३४ का नोट देखिए।

८ गैल गैल, राह राह।

मद छकसै। कीरति के काज महाराज सिवराज सब ऐसे गजराज कबि-राजन को बकसै ॥ ३२९ ॥

भाविक

लक्षण—दोहा

भयो, होनहारो, अरथ बरनत जहँ परतच्छ।
ताको भाविक कहत है भूषन कबि मतिस्वच्छ ॥३३०॥

भूतकाल प्रत्यक्ष—उदाहरण—कवित्त मनहरण

अजौ भूतनाथ मुंडमाल लेत हरषत भूतन अहार लेत अजहूँ उछाह है। भूषन भनत अजौं काटे करवालन के कारे कुंजरन परी कठिन कराह है॥ सिह सिवराज सलहेरि[1] के समीप ऐसो कीन्हो कतलाम दिली दल को सिपाह है। नदी रन मंडल रुहेलन रुधिर अजौं अजौं रविमंडल रुहेलन की राह है ॥३३१॥

भविष्यकाल का प्रत्यक्ष

गजघटा उमड़ि महा घनघटा सी घोर भूतल सकल मदजल सौ पटत है। बेला छाँड़ि उछलत सातौ सिंधु बारि, मन मुदित महेस मग नाचत कढ़त है॥ भूषन बढ़त भौंसिला भुआल को यों तेज जेतो सब बारहौ तरनि मैं बढ़त है। सिवाजी खुमान दल दौरत जहान पर आनि तुरकान पर प्रलै प्रगटत है॥ ३३२ ॥

भाविक छबि

लक्षण—दोहा

जहँ दूरस्थित वस्तु को देखत बरनत कोय।
भूषन भूषन राज भनि भाविक छबि सो होय ॥३३३॥

---

[1] छंद ६७ का नोट देखिए।

उदाहरण—मालती सवैया

सूबन साजि पठायत है निज फौज लखे मरहट्टन केरी।
औरँग आपनि दुग्ग जमाति बिलोकत तेरियै फौज दरेरी॥
साहि तनै सिव साहि भई भनि भूषन यों तुव धाक घनेरी।
रातहु दौस दिलीस तकै तुव सैन कि सूरति[1] सूरति[2] घेरी॥३३४॥

उदात्त

लक्षण—दोहा

अति संपति बरनन जहाँ तासों कहत उदात।
कै आनै सु लखाइए बड़ी आन की बात॥३३५॥

अति संपत्ति—उदाहरण—कवित्त मनहरण

द्वारन मतंग दीसैं आँगन तुरंग हीसैं बंदीजन बारन[3] असीसैं जसरत है। भूषन बखानै जरबाफ के सम्याने ताने झालरन मोतिन के झुण्ड झलरत हैं। महाराज सिवा के नेवाजे कविराज ऐसे साजि कै समाज जेहि ठौर बिहरत है। लाल करैं प्रात तहाँ नीलमनि करैं रात याही भाँति सरजा की चरचा करत हैं॥ ३३६॥

दूसरे को बड़ी बात दिखलाना

जाहु जनि आगे खता खाहु मति यारौ गढ़ नाह के डरन कहैं खान यों बखान कै। भूषन खुमान यह सो है जेहि पूना माहि लाखन मैं सासता[4] खाँ डारथो बिन मान कै॥ हिदुवान द्रुपदी की ईजति बचैबे काज झपटि बिराटपुर बाहर प्रमान कै। वहै है सिवाजी जेहि भीम ह्वै

१ शकल।

२ छं० २०० का नोट। सूरत नाम का गुजरात मे प्रसिद्ध शहर।

३ दरवाजों पर अथवा बार बार।

४ शाइस्ता खाँ। छ० ३५ का नोट देखिए।

अकेले मारयो अफजल कीचक[1] को कीच घमसान कै ॥ ३३७ ॥

पुन —दोहा

या पूना मैं मति टिकौ खान[2] बहादुर आय।
ह्याँई साइस खान को दीन्हीं सिवा सिजाय ॥३३८॥

अत्युक्ति[3]

लक्षण—दोहा

जहाँ सूरतादिकन की अति अधिकाई होय।
ताहि कहत अति उक्ति है भूषन जे कबिलोय ॥ ३३९ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक[4]

साहि तनै सिवराज ऐसे देत गजराज जिन्है पाय होत कविराज बे-फिकिरि है। झूलत झलमलात झूलै जरबाफन की जकरे जँजीर जोर करत किरिरि है॥ भूषन भँवर भननात घननात घंट पग झननात मनो घन रहे घिरि है। जिनकी गरज सुने दिग्गज बे-आब होत मद ही के आब गडकाब होत गिरि है॥ ३४० ॥

आजु यहि समै महाराज सिवराज तुही जगदेव[5] जनक जजाति

---

१ राजा विराट का साला जिसने द्रौपदी का सतीत्व भंग करना चाहा था। इसे भीमसेन ने मार डाला। (महाभारत, विराट पर्व्व।)

२ खान बहादुर खाँजहाँ बहादुर को कहते थे। इसे औरंगजेब ने १६७२ में दक्षिण का गवर्नर नियत किया था। इसका हाल छं० नं० ६६ में बहलोल-वाले के नोट में देखिए।

३ उदात्त में धनाधिक्य का भारी कथन होता है और अत्युक्ति में शौर्यादि का।

४ इस छंद में हाथियों के जंजीर पर जोर लगाकर गरजने तथा उसके फलों का विशेष वर्णन है।

५ पँवारो का बडा प्रसिद्ध और तेजस्वी वीर।

अंबरीक सो। भूषन भनत तेरे दान-जल-जलधि मैं गुनिन को दारिद गयो बहि खरिक[1] सो॥ चंद कर किंजलक[2] चाँदनी पराग उड़-बृंद मकरंद बुंद पुंज के सरीक सो। कुंद[3] सम कयलास नाक-गंग नाल तेरे जस पुंडरीक को अकास चंचरीक सों॥ ३४१॥

पुनः—दोहा

महाराज सिवराज के जेते सहज सुभाय।
औरन को अति उक्ति से भूषन कहत बनाय॥३४२॥

निरुक्ति

लक्षण—दोहा

नामन को निज बुद्धि सों कहिए अरथ बनाय।
ताको कहत निरुक्ति हैं भूषन जे कबिराय॥३४३॥

उदाहरण—दोहा

कवि गन को दारिद दुरद याही दल्यो अमान।
याते श्री सिवराज को सरजा कहत जहान॥३४४॥
हर्‍यो रूप इन मदन को याते भो सिव नाम।
लियो बिरद सरजा सबल अरि गज दलि संग्राम॥३४५॥

पुनः—कवित्त मनहरण

आजु सिवराज महाराज एक तुही सरनागत जनन को दिवैया अभैदान को। फैली महिमंडल बड़ाई चहुँ ओर ताते कहिए कहाँ लौं ऐसे बड़े परिमान को?॥ निपट गँभीर कोऊ लाँघि न सकत बीर जोधन को रन देत जैसे भाऊ[4] खान को। दिल दरियाव क्यों न कहैं कबिराव तोहि तो मैं ठहरात आनि पानिप जहान को॥ ३४६॥

---

१ खरीका, दाँत खरोदने की सींक। तृण।

२ कमल फूल के बीच में चारों ओर जो पीली और सफेद सींकें सी होती हैं।

३ कुंद का छोटा सफेद फूल।

४ भाऊसिंह के विषय में छंद नं० ३५ का नोट देखिए। इन्हें "भाऊखान"

हेतु[1]

लक्षण—दोहा

"या निमित्त यहई भयो" यो जहँ बरनन होय।
भूषन हेतु बखानही कबि कोबिद सब कोय ॥३४७॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

दारुन दइत हरनाकुस बिदारिबे को भयो नरसिंह रूप तेज बिकरार है। भूषन भनत त्योंही रावन के मारिबे को रामचद्र भयो रघुकुल सरदार है॥ कंस के कुटिल बल बसन बिधुसिबे को भयो यदुराय बसुदेव को कुमार है। पृथी पुरहूत साहि के सपूत सिवराज म्लेच्छन के मारिबे को तेरो अवतार है॥ ३४८॥

अनुमान

लक्षण—दोहा

जहाँ काज ते हेतु कै जहाँ हेतु ते काज।
जानि परत, अनुमान तहँ कहि भूषन कविराज ॥३४९॥

काज से हेतु का अनुमान—उदाहरण—मनहरण दंडक

चित्त अनचैन आँसू उमगत नैन देखि बीबी कहै बैन मियाँ कहियत काहि नै ?। भूषन भनत बूझे आए दरबार ते कँपत बार बार क्यो सम्हार तन नाहिनै ?॥ सीनो धकधकत पसीनो आयो देह सब हीनो

वैसे ही कहा गया है जैसे अबर (जयपुर) के महाराज जयसिह "मिर्जा" कहाते थे। वास्तव में भाऊ खाँ नामक कोई मुसलमान सरदार न था। सभव है कि भाऊ और खान दोनों का यहाँ कथन हो।

१ प्रथम हेतु मे कार्य का कारण के साथ ही कथन होता है और द्वितीय मे कार्य कारण अभेद होते है। जैसे कर्तव्य मे स्थिति ही ईश्वर की कृपा है। भूषण ने एक ही हेतु कहा है।

भयो रूप न चितौन बाएं दाहिनै। सिवाजी की सक मानि गए हौ सुखाय तुम्है जानियत दक्खिन को सूबा करो साहि नै ॥ ३५० ॥

अभ्रा[1] सी दिन कि भई एझा सी सकल दिसि गगन लगन रही गरद छवाय है। चील्ह गीध वायस समूह घोर रोर करै ठौर ठौर चारो ओर तम मडराय है। भूपन अँदेस देस देस के नरेस गन आपुस मै कहत यों गरब गॅवाय है। बडो बडवा को जितवार चहुँघा को दल सरजा सिवा को जानियत इत आयहै ॥ ३५१ ॥

अथ शब्दालकार

दोहा

जे अरथालकार ते भूपन कहे उदार।
अब शब्दालकार ये कहियत मति अनुसार ॥३५२॥

छेक एव लाट अनुप्रास

लक्षण—दोहा

सुर समेत अच्छर पदनि आवत सहस प्रकास।
भिन्न अभिन्नन पदन सो छेक लाट अनुप्रास ॥३५३॥

उदाहरण—अमृतध्वनि छद[2]

दिल्लिय दलन दबाय करि सिव सरजा निरसक। लूटि लियो सूरति

---

१ नागा अर्थात् दिन गायब सा हो गया।

२ इसमे छ पद होते है जिनमे प्रथम दो मिलकर एक दोहा होते हैं, और चार अतिम पदों मे काव्य छद होता है। अत के चारों पदों मे आठ आठ कलाओं के पीछे यति होती है। हमने जिन आचार्यो के दिए हुए लच्चण देखे, उन्होंने यह नही लिखा है कि इस छद के पदों का अतिम अच्चर अवश्य लघु होता है, पर यह बात सदा पाई जाती है। भूपणजी इसमे कुडलिया की भाँति प्रथम के एक या दो शब्द अत मे भी अवश्य लाते हैं, यद्यपि यह आवश्यक नही है। अन्य कवियों की अमृतध्वनियों मे थोडे बहुत शब्द अथवा

सहर बंकक्करि[1] अति डंक ॥ बंकक्करि अति डंकक्करि अस संकक्कुलि[2] खल । सोचच्चकित भरोचच्चलिय[3] बिमोचच्चखजल ॥ तट्ठट्ठइमन[4] कट्ठ-ट्ठिक[5] सोइ रट्ठट्ठिल्लिय[6]। सद्दिसि[7] दिसि भद्दबिभइ[8] रद्दहिल्लय[9] ॥३५४॥

गत बळ खानदलेल[10] हुव खान बहादुर मुद्ध ।

अक्षरसमूह निरर्थक आ जाते हैं, पर भूषणजी इस दोष से खूब ही बचे हैं। इसका नाम जैसा अच्छा है, वैसा ही यह पढने में बड़ा टेढा छद है। इसका नाम तो 'विषध्वनि' होता तो ठीक था।

१ डका बक (टेढा) करके।

२ इस तरह सब खलो को सशक करके।

३ भरोच शहर भागा।

४ वही बात मन मे ठान कर।

५ कठिन (पूरे) तौर से ठीक करके।

६ रट कर अर्थात् बार बार कह कर ठेल दिया।

७ भली भॉति सब दिशाओं में।

८ भद होकर और दब कर। या धावो की भद (गर्दा) से दब कर।

९ दिल्ली रद हो गई।

१० दिलेर खॉ के विषय मे छंद न० २१२ के नोट में मिर्जा जयसिह वाला नोट देखिए। शिवाजी की हार के बाद दिलेर खाँ (दलेल खॉ) दक्षिण और मालवे का सूबेदार रहा। सन् १६७२ मे दिलेर खॉ ने चाकन और सलहेरि को साथ साथ घेरा और सलहेरि में उसकी फौज की शिवाजी ने खूब ही खबर ली। छं० न० ६७ का नोट देखिए। १६७७ मे दिलेर खॉ ने गोल-कुडा पर धावा किया था, पर मदन्नपत से उसे हारना पडा। १६७९ मे शभाजी अपने पिता (शिवाजी) से नाराज होकर दिलेर खॉ के यहॉ भाग गया और उसने बाप बेटों को लड़ाना चाहा पर औरंगजेब ने उसे (शंभाजी को) दिल्ली भेज देने को लिखा। इसी बीच मे दिलेर खॉ शिवाजी के

सिव सरजा सलहेरि[1] ढिग कुद्धद्धरि[2] किय युद्ध ॥
कुद्धद्धरि किय युद्धद्धुव[3] अरि अद्धद्धरि[4] धरि ।
मुंडड्डरि[5] तहँ रुंडड्डकरत[6] ड्डुंडड्डग[7] भरि ॥
खेद्दिद्दर[8] बर छेद्दिद्दय[9] करि मेदद्दधि[10] दल ।
जंगग्गति[11] सुनि रंगग्गलि[12] अवरंगग्गत [13]बल ॥३५५॥
लिय धरि मोहकम[14] सिह कहँ अरु किसोर नृपकुंभ[15] ।

सेनापति जनार्दन पंत से युद्ध मे हारा और शभाजी को दिल्ली न भेज कर उसने उस (शभाजी) से अपना बचन न तोड़ने को जान बूझ कर उसे भाग जाने दिया । दिलेर खाँ १६८४ मे मरा । सलहेरि के युद्ध मे दिलेर खाँ तथा खान बहादुर मिल कर नेता थे ।

१ छ० ६७ का नोट देखिए ।

२ क्रोध धर कर ।

३ ध्रुव (निश्चय) युद्ध किया ।

४ आधे आधे करके; काट कर ।

५ मुड डाल कर ।

६ रुंड डकार रहे हैं ।

७ डुड (हाथ कटे हुए कबध) डग भरते (दौड़ते) हैं ।

८ दर (स्थान; मोरचा) से खेद कर ।

९ छेद डाला ।

१० फौज के मेद (चर्बी) को दही ऐसा फेट डाला ।

११ जग का हाल ।

१२ रग गल गया ।

१३ बल जाता रहा ।

१४ छं० २३६ का नोट देखिए ।

१५ नृप कुमार किशोर सिह, कोटा नरेश महाराज माधव सिंह के पुत्र थे ।

श्री सरजा संग्राम किय भुम्मिम्मधि[1] करि धुम्म ॥
भुम्मिम्मधि किय धुम्मम्मड़ि[2] रिपु जुम्मम्मलिकरि[3] ।
जंगग्गरजि[4] उतंगग्गरब[5] मतंगग्गन[6] हरि ॥
लक्खक्खन[7] रन दक्खक्खलनि[8] अलक्खक्खिति[9] भरि ।
मोलल्लहि[10] जस नोलल्लरि[11] बहलोलल्लिय[12] धरि ॥३५६॥

लिय जिति दिल्ली मुलुक सब सिव सरजा जुरि जंग ।
भनि भूषन भूपति भजे भंगग्गरब तिलंग ॥
भंगग्गरब तिलंगग्गयउ कलिंगग्गलि अति ।

दक्षिण में ये मुगलों की ओर से लड़ने गए। वहीं शिवाजी से भी इनसे लड़ाई हुई होगी। सन् १६८८ ई० तक ये दक्षिण मे लड़े। सलहेरि के युद्ध में इनका पकड़ा जाना भूषण कहते है।

१ भूमि मे।

२ धूम छादित कर।

३ जुम्मा (मुँह) मल कर।

४ जंग मे गरज कर।

५ ऊँचे गर्ववाले।

६ हाथियों के समूह।

७, ८, ९ लाखों दक्ष खलन से क्षण (भर के) रण (मे) अलक्षित पृथ्वी भर दी। पृथ्वी नही दिखाई देती थी, केवल मृत योद्धा दिखाई देते थे।

१० मोल लेकर।

११ नवल (नई तरह से) लड़ कर।

१२ पीछे से बढ़ कर बहलोल के बराबर पहुँच कर शिवाजी ने उसे जीत लिया। इस छंद मे मार्च सन् १६७३ वाले पनाले के युद्ध तथा १६७२ वाले सलहेरि के युद्ध के कथन हैं।

दुंदद्दबि दुद्दु दंदद्दलनि[1] बुलंदद्दहसति[2] ॥
लच्छच्छिन करि म्लेच्छच्छय किय[3] रच्छच्छबि[4] छिति ।
हल्लल्लगि[5] नरपल्लल्लरि परनल्लल्लिय[6] जिति ॥३५७॥

पुनः—छप्पय

मुंड कटत कहुँ रुंड नटत कहुँ सुंड पटत घन । गिद्ध लसत कहुँ सिद्ध हँसत सुख वृद्धि रसत मन ॥ भूत फिरत करि बूत भिरत सुर दूत घिरत तहँ । चंडि नचत गन मंडि रचत धुनि डंडि[7] मचत जहँ ॥ इमि ठानि घोर घमसान अति भूषन तेज कियो अटल । सिवराज साहि सुव खग्ग बल दलि अडोल बहलोल दल ॥३५८॥

कुद्ध फिरत सति युद्ध जुरत नहि रुद्ध मुरत भट । खग्ग बजत अरि बग्ग[8] तजत सिर पग्ग सजत चट ॥ ढुक्कि फिरत मद झुक्कि भिरत करि

---

१ युद्ध मे दब कर दोनों दलों (तिलग और कलिग) को दद (दुःख) हुआ । तिलग और कलिग उस समय गोलकुडा के राज्य मे थे । यह वर्णन सन् १६७०–७२ का है, जब गोलकुडा दबकर आपको कर देने लगा था । तिलग का कोई स्वतत्र राजा न था वरन् गोलकुडा के अधीनस्थ राजे भागे होंगे । १६७०-७२ मे शिवाजी ने गोलकुडा के सब प्रात लूटे और स्वय सुल्तान से एक करोड़ रुपए लूट में लिए ।

२ बड़ा डर हुआ ।

३ क्षण भर मे लाखों म्लेच्छों का क्षय करके ।

४ भूमि (भारत भूमि) की छबि की रक्षा की ।

५ हल्ला (धावा) कर ।

६ परनाले (छद १०७ का नोट देखिये) को जीत लिया ।

७ दड लेने की, डॉड़ लेने की ।

८ घोडे की बाग छोड़ कर भागते है ।

कुक्कि गिरत गनि। रंग रकत[1] हर संग[2] छकत चतुरंग थकत भनि॥ इमि करि संगर अति ही विषम भूषन सुजस कियो अचल। सिवराज साहि सुव खग्ग बल दलि अडोल बहलोल दल ॥३५९॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

बानर बरार[3] बाघ बैहर बिलार बिग[4] बगरे बराह जानवरन के जोम हैं। भूषन भनत भारे भालुक भयानक हैं भीतर भवन भरे लीलगऊ लोम[5] है॥ ऐंड़ायल गज गन गैंड़ा गररात गनि गेहन में गोहन[6] गरुर गहे गोम[7] है। सिवाजी कि धाक, मिले खल कुल खाक, बसे खलन के खेरन खबीसन के खोमे[8] है ॥३६०॥

तुरमती[9] तहखाने तीतर गुसुलखाने सूकर सिलहखाने कूकत करीस है। हिरन हरमखाने स्याही हैं सुतुरखाने पाढ़े[10] पीलखाने औ करंज-खाने[11] कीस हैं॥ भूषन सिवाजी गाजी खग्ग सों खपाए खल, खाने खाने खलन के खेरे भये[12] खीस हैं। खड़गी[13] खजाने खरगोस

१ मजे के नाच मे। रकत फारसी मे नाच को कहते हैं।

२ साथी गण (यहाँ पर हर के साथी अर्थात् भूत प्रेत)।

३ बरियार। प्रबल ।

४ भेड़िया।

५ लोमड़ी।

६ गोह नामक जतुओं ने।

७ स्थान (यह शब्द गाँव से निकला है)।

८ कौम, जाति।

९ तुरमुत्ती एक शिकारी पक्षी।

१० एक प्रकार का मृग।

११ मुरगों के रहने का घर।

१२ खलों का एक एक घर नष्ट हो गया।

१३ गैंडा।

खिलवतखाने[1] खीसैं खोले खसखाने खाँसत खबीस है ॥३६१॥

अन्यच्च—दोहा

औरन के जाँचे कहा नहि जाँच्यो सिवराज ? ।
औरन के जाँचे कहा जो जाँच्यो सिवराज ? ॥३६२॥

यमक अनुप्रास

लक्षण—दोहा

भिन्न अरथ फिरि फिरि जहाँ ओई अच्छर वृंद ।
आवत है, जो जमक करि बरनत बुद्धि बुलंद ॥३६३॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

पूनावारी[2] सुनि कै अमीरन की गति लई भागिबे को मीरन समीरन की गति है। मार्‍यो जुरि जंग जसवंत[3] जसवंत[4] जाके संग केते रजपूत[5] रजपूत पति[6] है ॥ भूषन भनै यो कुलभूषन भुसिल सिवराज ! तोहि दीन्ही सिव राज बरकति है। नौहू खंड दीप[7] भूप भूतल के दीप[8] आजु समै के दिलीप[9] दिलीपति को सिदति[10] है ॥३६४॥

१ एकात का कमरा ।

२ शाइस्ता खाँ इशारा है ।

३ जसवत सिह (छद न० ३५ का नोट) जसवत मे यमकानुप्रास है ।

४ यशवाला, यशी ।

५ राजपूत ।

६ राजपूतों का स्वामी । राजपूत पति जसवंत जसवंत मार्‍यो है, जाके सग केते राजपूत (थे) ।

७ द्वीप सात हैं ।

८ चिराग ।

९ रघु के पिता राजा दिलीप ।

१० सीदति, कष्ट देती है ।

पुनरुक्ति वदाभास

लक्षण—दोहा

भासति है पुनरुक्ति सी नहि निदान पुनरुक्ति।
वदाभास-पुनरुक्ति सो भूषन बरनत युक्ति ॥३६५॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

अरिन के दल सैन[1] संगर मैं समुहाने टूक टूक सकल कै डारे घमसान मैं। बार बार रूरो महानद परवाह पूरो बहत है हाथिन के मद जल दान मैं ॥ भूषन भनत महा बाहु भौंसिला भुवाल सूर,[2] रबि कैसो तेज तीखन कृपान मै। माल मकरंद जू के नंद कला निधि तेरो सरजा सिवाजी जस जगत[3] जहान मैं ॥३६६॥

चित्र

लक्षण—दोहा

लिखे सुने अचरज बढ़ै रचना होय बिचित्र।
कामधेनु आदिक घने भूषन बरनत चित्र ॥३६७॥

उदाहरण (कामधेनु चित्र)। माधवी[4] सवैया

---

१ शयन (मे) सग रमैं अर्थात् साथ ही साथ मरे पड़े है।

२ बीर।

३ जागता है।

४ इस सवैया मे "बसुसा" अर्थात् आठ सगण होते हैं। सगण के तीन अक्षरों मे प्रथम दो लघु और अतिम गुरु होता है। देवजी एक दूसरे प्रकार की सवैया को माधवी कहते हैं और आठ सगण वाली सवैया का वर्णन नहीं करते। कविराज श्री सुखदेव मिश्र उसी सवैया को "बाम" कहते है और इस "बसुसा" वाली का नाम उन्होंने माधवी लिखा है। भूषणजी का यह कामधेनु चित्रवाला छंद बिलकुल अच्छा नहीं। इसमे ७×४=२८ छंद अवश्य बनते है। ऐसे छंद प्रायः अच्छे हो भी नहीं सकते।

ध्रुव जो	गुरता	तिनको	गुरु भूषन	दानि बडो	गिरजा	यिव है।
हुव जो	हरता	रिनको[1]	तरु[2] भूषन	दानि बडो	सिरजा[3]	छिव[4] है।
भुव जो	भरता	दिनको[5]	नरु भूषन	दानि बड़ो	सरजा	सिव है।
तुव जो	करता	इनको	अरु भूषन	दानि बड़ो	बरजा[6]	निव है ३६८

संकर[7]

लक्षण—दोहा

भूषन एक कबित्त मैं भूषन[8] होत अनेक।
संकर ताको कहत हैं जिन्है कबित की टेक ॥३६९॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

ऐसे बाजिराज देत महाराज सिवराज भूषन जे बाज की समाजै निदरत[9] है। पौन[10] पाय हीन, दृग घूंघट मै लीन, मीन जल मैं बिलीन,

---

१ (औरों के) कर्ज को।

२ कल्प वृक्ष।

३ रचा हुआ, पैदायशी।

४ छीव, उन्मत्त।

५ वर्तमान समय का।

६ बर जानिब है, बडा जानकार (ज्ञाता) है।

७ ससृष्टि मे विविध अलकार एक ही स्थान पर होकर भी तिलतदुलवत् अलग रहते है, किंतु सकर मे नीरक्षीरवत् मिले होते है। ससृष्टि आपने नही कही है। जो सकर के उदाहरण दिये है वह बहुधा ससृष्टि के है।

८ अलकार। ९ अनुप्रास, ललितोपमा, एव प्रतीप अलकार।

१० अनुप्रास एवं अधिक तद्रूप रूपक।

क्यों बराबरी करत हैं ? ॥ सबते[1] चलाक चित तेऊ कुलि आलम के रहैं उर अंतर मैं धीर न धरत हैं। जिन[2] चढ़ि आगे को चलाइयतु तीर, तीर[3] एक भरि तऊ तीर पीछे ही परत हैं ॥३७०॥

ग्रंथालंकार नामावली। गीतिका छंद[4]

उपमा अनन्वै कहि बहुरि उपमा प्रतीप प्रतीप। उपमेय[5] उपमा है बहुरि मालोपमा कवि दीप॥ ललितोपमा रूपक बहुरि परिनाम पुनि उल्लेख। सुमिरन भ्रमौ संदेह सुद्धापन्हुत्यौ सुभ बेख॥३७१॥

हेतूअपन्हुत्यौ बहुरि परजस्तपन्हुति जान। सुभ्रांत पूर्ण अपन्हुत्यो छेकाअपन्हुति मान॥ बर कैतवापन्हुति गनौ उतप्रेक्ष बहुरि बखानि। पुनि रूपकातिसयोक्ति भेदक अतिसयोक्ति सुजानि॥३७२॥

अरु अक्रमातिसयोक्ति चंचल अतिसयोक्तिहि लेखि। अत्यंतअति-सैउक्ति पुनि सामान्य चारु बिसेखि॥ तुलियोगिता दीपक अवृति प्रतिबस्तुपम दृष्टांत। सु निदर्सना व्यतिरेक और सहोक्ति बरनत शांत॥ ३७३॥

सु बिनोक्ति भूषन समासोक्तिहु परिकरौ अरु बंस। परिकर सु अंकुर श्लेष त्यों अप्रस्तुतौपरसंस॥ परयायउक्ति गनाइए ब्याजस्तुतिहु आक्षेप। बहुरो बिरोध बिरोधभास बिभावना सुख खेप॥३७४॥

सु बिसेषउक्ति असंभवौ बहुरे असंगति लेखि। पुनि बिषम सम सुबिचित्र प्रहषन[6] अरु बिषादन पेखि॥ कहि अधिक अन्योन्यहु बिसेष

---

१ प्रतीप।

२ यमक एवं अत्युक्ति।

३ जितनी दूर पर जाकर तीर गिर पड़े।

४ यह छब्बीस कला का छंद होता है। इसके प्रत्येक पद के अंत में लघु अक्षर होता है।

५ उपमेयोपमा।

६ प्रहर्षण।

व्यघात भूषन चारु । अरु (गुंफ) एकावली मालादीपकहु पुनि सारु ॥ ३७५ ॥

पुनि यथासंख्य बखानिए परजाय अरु परिवृत्ति । परिसंख्य कहत बिकल्प है जिनके सुमति संपत्ति ॥ बहुरयो समाधि समुच्चयो पुनि प्रत्यनीक बखानि । पुनि कहत अर्थापत्ति कबिजन काव्यलिंगहि जानि ॥३७६॥

अरु अर्थअंतरन्यास भूषन प्रौढ़उक्ति गनाय । संभावना मिथ्याध्यवसितऽरु यों उलासहि गाय ॥ अवज्ञा अनुज्ञा लेस तदगुन पूर्वरूप-उलेखि । अनुगुन अतदगुन मिलित उन्मीलितहि पुनि अवरेखि ॥३७७॥

सामान्य और विशेष पिहितौ प्रश्न उत्तर जानि । पुनि ब्याजउक्ति रु लोकउक्ति सु छेकउक्ति बखानि ॥ बक्रोक्ति जानि सुभाव उक्तिहु भाविकौ निरधारि । भाविकछबिहु सु उदात्त कहि अत्युक्ति बहुरि बिचारि ॥३७८॥

बरने निरुक्तिहु हेतु पुनि अनुमान कहि अनुप्रास ।
भूषन भनत पुनि जमक गनि पुनरुक्तिवद आभास ॥
युत चित्र संकर एक सत भूषन कहे अरु पाँच[1] ।
लखि चारु ग्रंथन निज मतो[2] युत सुकबि मानहु साँच ॥३७९॥

---

१ एक+सत+पाँच=१०६ अलंकार । भूषणजी १०६ अलंकार वर्णन करना लिखते हैं, पर ग्रंथ में १०६ अलंकार पाए जाते हैं; लुप्तोपमा, न्यूनाधिक रूपक और गमगुप्तोत्प्रेक्षा के लक्षण और उदाहरण ग्रंथ में दिए हैं (छंद नं० ३६–३८, ६४–६६ और १०६–१०८ देखिये) और ये सब छंद भूषण कृत अवश्य जान पड़ते हैं, पर इनका नाम इस सूची में नहीं है। कदाचित् भूषणजी ने इन्हे मुख्य अलंकारों में न माना हो।

२ दूसरे आचार्यों के मत के अतिरिक्त इन्होंने कुछ बातें अपने ही मत से लिखी हैं। जान पड़ता है कि इसी कारण कभी कभी इनके लक्षण अन्य आचार्य्यों से भिन्न हो जाते हैं (छंद न० ६०, १४६, २५५ और २६७ आदि देखिए)।

दोहा

सुभ सत्रहसै तीस पर बुध सुदि[1] तेरसि मान।
भूषण सिव भूषन कियो पढ़ियौ सुनो सुजान ॥३८०॥

आशीर्वाद—मनहरण दंडक

एक प्रभुता को धाम, सजे तीनो वेद काम, रहैं पंच आनन षड़ानन सरबदा। सातौ बार आठौ याम जाचक नेवाजै नव अवतार थिर राजै कृपन[2] हरि गदा॥ सिवराज भूषन अटल रहै तौलौं जौलौं त्रिदस भुवन सब, गंग औ नरमदा। साहि तनै साहसिक भौंसिला सुरज बंस दासरथि राज तौलौं सरजा थिर सदा॥ ३८१॥

पुनः—दोहा

पुहुमि पानि रबि ससि पवन जब लौं रहै अकास।
सिव सरजा तब लौं जियौ भूषन सुजस प्रकास ॥३८२॥

इति श्री कवि भूषण विरचिते शिवराज भूषणे अलंकार वर्णनं समाप्तम्।

शुभमस्तु

श्री शिवा[3] बावनी

छप्पय[4]

कौन करै बस वस्तु कौन यहि लोक बड़ो अति ?। को साहस को

---

१ सवत् १७३० बुध सुदी १३ को ग्रथ समाप्त हुआ, पर किस मास में, सो नही लिखा। इसका ब्योरा भूमिका मे देखिए। कार्तिक ठीक बैठता है।

२ कृपाण, तलवार।

३ जैसा कि भूमिका में लिखा गया है, यह कोई स्वतत्र ग्रथ नहीं, वरन् भूषणजी के ५२ छदों का एक संग्रह मात्र है। इसी हेतु प्रचलित प्रतियों का क्रम छोड़ कर हमने अपना नया क्रम स्थिर किया है, क्योंकि हम उक्त प्रचलित क्रम को बहुत ही अनुपयुक्त समझते हैं।

४ यह छंद "स्फुट कविता" से लेकर उपयुक्त जान हमने यहाँ रख दिया है।

सिधु कौन रज लाज धरे मति ? ॥ को चकवा को सुखद बसै को सकल सुमन महि ? । अष्ट सिद्धि नव निद्धि देत माँगे को सो कहि ? ॥ जग बूझत उत्तर देत इमि कबि भूषन कबि कुल सचिब । दच्छिन नरेस सरजा सुभट साहिनंद मकरंद[1] सिव ॥ १ ॥

कवित्त—मनहरण

साजि चतुरंग वीर रंग मैं तुरंग चढ़ि सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है । भूषन भनत नाद बिहद नगारन के नदी नद मद गब्बरन[2] के रलत है ॥ ऐल[3] फैल खैल-भैल[4] खलक मैं गैल गैल गजन की ठेल पेल सैल उसलत है । तारा सो तरनि धूरि धारा मैं लगत, जिमि थारा पर पारा पारावार[5] यों हलत है ॥ २ ॥

बाने[6] फहराने घहराने घंटा गजन के नाहीं ठहराने राव राने देस देस के । नग भहराने ग्राम नगर पराने सुनि बाजत निसाने[7] सिवराज जू नरेस के[8] ॥ हाथिन के हौदा उकसाने कुंभ कुञ्जर के भौन को भजाने

---

१ माल मकरद ।

२ गर्व-धारियों के ।

३ अहिलौ, बहुत विशेषता ।

४ खलभल ।

५ समुद्र ।

६ एक झडीदार अस्त्र ।

७ निशान का अर्थ झंडा है, पर भूषणजी ने उसे डका के अर्थ में लिखा है ।

८ सरदार कवि ने इसके द्वितीय पद के अंतिम भाग को यों लिखा है—“सुनि बाजत निशाने भाउ सिहजू नरेश के” और तीसरे पद का प्रथमार्द्ध यों—“ककुभ के कुंजर कसमसाने गंग भनै” । परंतु शब्दों एवं वाक्य-रचना से यह भूषण कृत जॅचता है । इसके अतिरिक्त गंगजी अकबर शाह के समय मे थे, पर भाऊसिह सन् १६५८ ईसवी में बूँदी की गद्दी पर बैठे, सो यह कवित्त गगकृत नहीं हो सकता ।

अलि छूटे लट केस के। दल के दरारे[1] हुते कमठ करारे फूटे केरा कैसे पात बिहराने फन सेस के॥ ३॥

प्रतिनी पिसाचऽरु निसाचर निसाचरिहु मिलि मिलि आपुस मै गावत बधाई है। भैरौं भूत प्रेत भूरि भूधर भयंकर से जुत्थ जुत्थ जोगिनी जमाति जुरि आई है॥ किलकि किलकि कै कुतूहल करति काली, डिम डिम डमरू दिगंबर बजाई है। सिवा पूँछै सिव सों समाज आजु कहाँ चली, काहू पै सिवा नरेस भृकुटी चढ़ाई है?॥ ४॥

बद्दल न होहि दल दच्छिन घमंड माहि घटा हू न होहि दल सिवाजी हँकारी के। दामिनी दमंक नाहि खुले खग्ग बीरन के, बीर सिर छाप लखु तीजा असवारी[2] के॥ देखि देखि मुगलो की हरमैं भवन त्यागैं उझकि उझकि उठैं बहत बयारी के। दिल्ली मति भूली कहै बात घनघोर घोर बाजत नगारे जे सितारे गढ़ धारी के॥ ५॥

बाजि गजराज सिवराज सैन साजतहि दिल्ली दिलगीर दसा दीरघ दुखन की। तनियाँ न तिलक सुथनियाँ पगनियाँ न घामै घुमरात छोड़ि सेजियाँ सुखन की॥ भूषन भनत पतिबाँह बहियाँ न[3] तेऊ छहियाँ छबीली ताकि रहियाँ रुखन की[4]। बालियाँ बिथुरि जिमि आलियाँ[5] नलिन पर लालियाँ मलिन मुगलानियाँ मुखन की॥ ६॥

कत्ता की कराकनि[6] चकत्ता को कटक काटि कीन्ही सिवराज बीर अकह कहानियाँ। भूषन भनत तिहु लोक मै तिहारी धाक दिल्ली औ

---

१ सेना के दरेरे (दबाव) से।

२ संभवतः तीज का चद्रमा।

३ पति की बाँहों से नही बहीं अर्थात् अलग नहीं हुई।

४ रूखों (पेड़ों) की।

५ अलि; भौरे।

६ कड़ाके से; जोर से चलने से।

बिलाइति सकल बिललानियाँ ।। आगरे अगारन[1] है फाँदती कगारन छ्वै बाँधती न बारन मुखन कुम्हिलानियाँ। कीबी कहै कहा[2] औ गरीबी गहे भागी जाहि बीबी गहे सूथनी सु नीबी[3] गहे रानियाँ ।। ७ ।।

ऊँचे घोर मंदर[4] के अंदर रहन वारी ऊँचे घोर मंदर[5] के अंदर रहाती है। कद[6] मूल भोग करैं कंद[7] मूल भोग करैं, तीनि[8] बेर खातीं सो तो तीनि[9] बेर खाती है ।। भूषन[10] सिथिल अंग भूषन[11] सिथिल अंग बिजन[12] डुलातीं तेब[13] बिजन[14] डुलाती[15] है। भूषन भनत सिवराज बीर तेरे त्रास नगन[16] जड़ाती ते वै नगन[17] जड़ाती है ।। ८ ।।

---

१ मकानों मे।

२ कहती है कि क्या करेगी ?

३ नारा, धोती का बंधन, धोती, लहँगा।

४ मदिर, मकान।

५ पर्व्वत।

६ कद मूलक (व्यंजन), ऐसे व्यंजन जिनमे कंद (मीठा) पड़ा हो।

७ जड़े और जमीन के अदर होनेवाले फल।

८ तीन मर्तबा।

९ बेरी के तीन फल।

१० जेवरों से ।

११ भूखों से।

१२ पंखा।

१३ ते अब।

१४ अकेली।

१५ मारी मारी फिरती है।

१६ जेवरों में नगों को जडवाती थीं।

१७ नंगी जाड़ा खा रही हैं।

उतरि पलंग ते न दियो है धरा पै पग तेऊ सगबग निसि दिन चली जाती हैं। अति अकुलातीं मुरझातीं ना छिपातीं गात बात न सोहाती बोलैं अति अनखाती हैं॥ भूषन भनत सिह साहि के सपूत सिवा तेरी धाक सुने अरि नारी बिललाती हैं। कोऊ करैं घाती कोऊ रोतीं पीटि छाती घरैं तीनि बेर खातीं ते वै बीनि बेर खाती हैं॥ ९॥

अंदर ते निकसीं न मंदिर को देख्यो द्वार बिन रथ पथ ते उघारे पाँव जाती हैं। हवा हू न लागती ते हवा ते बिहाल भईं लाखन की भीरि में सम्हारतीं न छाती हैं॥ भूषन भनत सिवराज तेरी धाक सुनि हयादारी[1] चीर फारि मन झुझलाती हैं। ऐसी परीं नरम[2] हरम बादसाहन की नासपाती खातीं ते बनासपाती[3] खाती हैं॥ १०॥

अतर गुलाब रस चोवा[4] घनसार सब सहज सुवास की सुरति बिसराती हैं। पल भरि पलँग ते भूमि न धरति पावँ भूलीं खान पान फिरैं बन बिललाती हैं॥ भूषन भनत सिवराज तेरी धाक सुनि दारा हार बार न सम्हार अकुलाती हैं। ऐसी परी नरम हरम बादसाहन की नासपाती खातीं ते बनासपाती खाती हैं॥ ११॥

सोंधे[5] को अधार किसमिस जिनको अहार चारि को सो अंक लंक चंद सरमाती हैं। ऐसी अरि नारी सिवराज बीर तेरे त्रास पायन मैं छाले परे कंद मूल खाती हैं॥ ग्रीषम तपनि एती तपती न सुनि कान कंज कैसी कली बिनु पानी मुरझाती हैं। तोरि तोरि आछे[6] से पिछौरा सों निचोरि मुख कहैं "अब कहाँ पानी मुकतौं मैं पाती हैं?"॥ १२॥

---

१ हया (शर्म) रखनेवाली।

२ कमजोर। बुदेलखंडी शब्द लरम है इसी अर्थ का।

३ बनस्पति।

४ कई सुगंधित वस्तुओं से बनाया हुआ द्रव पदार्थ।

५ सुगंध।

६ अच्छे से अर्थात् बढ़िया।

*साहि सिरताज औ सिपाहिन मैं पातसाह अचल सुसिंधु केसे जिनके सुभाव हैं। भूषन भनत परी शस्त्र रन सिवा धाक काँपत रहत न गहत चित चाव हैं ॥ अथह विमल जल कालिंदी के तट केते परे युद्ध विपति के मारे उमराव हैं। नाव भरि बेगम उतारैं बाँदी डोंगा भरि साहि मिसि मक्का उतरत दरियाव हैं ॥१३॥

किबले[1] के ठौर बाप बादसाह साहिजहाँ ताको कैद कियो मानो मक्के आगि लाई है। बड़ो भाई दारा वाको पकरि कै कैद कियो मेहेरहु[2] नाहिं वाको जायो सगो भाई है ॥ बंधु तौ मुरादबक्स बादि चूक[3] करिबे को बीच लै कुरान खुदा की कसम खाई है। भूषन सुकवि कहै सुनो नवरंगजेब एते काम कीन्हें फेरि पादसाही पाई है ॥१४॥

हाथ तसबीह[4] लिए प्रात उठि बंदगी को आपही कपट रूप कपट सु जप के। आगरे मे जाय दारा चौक मैं चुनाय लीन्हों छत्र ही छिनायो मनो बूढ़े मरे बप के ॥ कीन्हो है सगोत घात सो मैं नाहि कहौं फेरि पील पै तोरायो[5] चारि चुगुल के गप[6] के। भूषन भनत छरछंदी मति-मंद महा सौ सौ चूहे खाय कै बिलारी बैठी तप के ॥१५॥

कैयक हजार जहाँ गुर्ज-बरदार ठाढ़े करि कै हुस्यार नीति पकरि समाज की। राजा जसवंत को बुलाय कै निकट राखे तेऊ लखैं नीरे जिन्हैं लाज स्वामि-काज की ॥ भूषन तबहुँ ठठकत ही गुसुलखाने सिह

---

१ ऊँचा। पूज्य। किबलागाही।

२ मेहरबानी भी।

३ दगाबाजी।

४ जपने की मुसल्मानी माला।

५ हाथी से मरवा डाला।

६ गप्प मारने से, झूठ बोलने से।

लौं झपट[1] गुनि साहि महराज की। हटकि हथ्यार फड़ बाँधि उमरावन को कीन्ही तब नौरँग ने भेंट सिवराज की ॥१६॥

सबन के ऊपर ही ठाढ़ो रहिबे के जोग ताहि खरो कियो जाय जारन के नियरे। जानि गैर मिसिल गुसीले गुसा धरि उर कीन्ही ना सलाम न बचन बोले सियरे॥ भूषन भनत महाबीर बलकन लाग्यो सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे। तमक ते लाल[2] मुख सिवा को निरखि भये स्याह मुख नौरँग सिपाह मुख पियरे ॥१७॥

राना भो चमेली और बेला सब राजा भए ठौर ठौर रस लेत नित यह काज है। सिगरे अमीर आनि कुंद होत घर घर भ्रमत भ्रमर जैसे फूलन की साज है॥ भूषन भनत सिवराज वीर तैंहीं देस देसन में राखी सब दच्छिन कि लाज है। त्यागे सदा षटपद-पद अनुमानि यह अलि नवरंगजेब चंपा सिवराज है ॥१८॥

कूरम[3] कमल कमधुज[4] है कदमफूल गौर है गुलाब राना[5] केतकी बिराज है। पाँडरि पँवार जुही सोहत है चंद्रावल सरस बुँदेला सो चमेली साज बाज है॥ भूषन भनत मुचकुंद बड़गूजर हैं बघेले बसंत सब कुसुम समाज है। लेइ रस एतेन को बैठि न सकत अहै अलि नवरंगजेब चंपा सिवराज है[6] ॥१९॥

---

१ इस छंद में भयानक रस है।

२ दिल्ली में कुछ लोगों ने ऐसी हवा उड़ा रक्खी थी कि शिवाजी कभी कभी २५ हाथ का एक डग रखते थे। इस छंद में कथित प्रायः सभी बाते ऐतिहासिक हैं।

३ महाराज जयपुर कछवाहे होने के कारण कूर्मवंशी कहलाते हैं।

४ महाराज जोधपुर। कबंधज। युद्ध में इनके पूर्वपुरुष जयचंद महाराज कन्नौज का कबंध उठा था, इसी से उनके वंशी कबंधज कहलाते हैं।

५ महाराना उदयपुर।

६ इस छंद में सम अभेद रूपक है।

देवल गिरावते फिरावते निसान अली ऐसे डूबे राव राने सबी गए लबकी[1]। गौरा गनपति आप औरन को देव ताप आप के मकान सब मारि गये दबकी ॥ पीरा पयगंबरा दिगंबरा दिखाई देत सिद्ध को सिधाई गई रही बात रब[2] की। कासिहु ते कला जातो मथुरा मसीद होती सिवाजी न होतो तौ सुनति[3] होति सब की ॥ २० ॥

साँच को न मानै देवी देवता न जानै अरु ऐसी उर आनै मैं कहत बात जब की। और पातसाहन के हुती चाह हिंदुन की अकबर साहजहाँ कहै साखि तब की ॥ बब्बर के तिब्बर[4] हुमायूँ हद्द बाँधि गये दो मैं एक करी ना कुरान[5] बेद ढब की। कासिहु की कला जाती मथुरा मसीद होती सिवाजी न होतो तौ सुनति होति सब की ॥ २१ ॥

कुंभकर्न असुर औतारी अवरंगजेब कीन्ही कत्ल मथुरा[6] दोहाई फेरी रब की। खोदि डारे देवी देव सहर मुहल्ला बाँके लाखन तुरुक कीन्हे छूटि गई तब की ॥ भूषन भनत भाग्यो कासीपति बिश्वनाथ[7] और कौन

१ लबलबा गए, निर्बल हो गए। यह भी हो सकता है कि लवा [छोटा पक्षी] के समान हो गए।

२ खुदा, (यहाँ पर) मुसलमानी देवता।

३ खतना, मुसल्मानी।

४ तीन बार।

५ कुरान और वेद की जो ढबै हैं उनको एक मे न किया, अर्थात् वेद की रीतियों के उठाने का प्रयत्न न किया।

६ सन् १६६६ ई० में औरंगजेब ने देहरा केशवराय को मथुरा मे तोड़ा। इसे महाराज वीरसिंहदेव बुंदेला ने ३३ लक्ष मुद्रा लगाकर बनवाया था।

७ औरंगजेब ने विश्वनाथजी का मंदिर सन् १६६६ ई० मे तोड़ा। उसी समय कहा जाता है कि श्रीविश्वनाथजी की मूर्ति मंदिर से ज्ञानवापी नामक कूप मे (जो मंदिर के पिछवाड़े है) जाकर कूद पड़ी। वह मूर्ति अब भी कुयें में है।

गिनती मैं भूली गति भव की। चारौं बर्न धर्म्म छोड़ि कलमा[1] नेवाज पढ़ि सिवाजी न होतो तौ सुनति होति सब की ॥२२॥

दावा पातसाहन सों कान्हो सिवराज बीर जेर कीन्हो देस हद्द बाँध्यों दरबारे[2] से। हठी मरहठी तामैं राख्यो ना मवास[3] कोऊ छीने हथियार डोलैं बन बनजारे से॥ आमिष अहारी माँसहारी दै दै तारी नाचैं खाँड़े तोड़ किरचैं उड़ाये सब तारे से। पील सम डील जहाँ गिरि से गिरन लागे मुंड मतवारे गिरैं झुंड मतवारे[4] से॥ २३॥

छूटत कमान[5] और तीर गोली बानन के मुसकिल होति मुरचान हू की ओट मैं। ताही समै सिवराज हुकुम कै हल्ला कियो दावा बाँधि पर हला बीर भट जोट मैं॥ भूषन भनत तेरी हिम्मति कहाँ लौं कहौं किम्मति इहाँ लगि है जाकी भट झोट[6] मैं। ताव दै दै मूछन कँगूरन पै पाँव दै दै अरि मुख घाव दै दै कूदै परैं कोट[7] मैं॥ २४॥

उतै पातसाह जू के गजन के ठट्ट छुटे उमड़ि घुमड़ि मतवारे घन भारे है। इतै सिवराज जू के छूटे सिहराज औ बिदारे कुंभ करिन के चिक्करत कारे हैं॥ फौजै सेख सैयद मुगल औ पठानन की मिलि

---

१ कलमा यह है—"ला इलाहे इल्लिल्लाः मुहम्मद उल्रसूलिल्लाः" अर्थात् सिवा परमेश्वर के कोई सबल नही है, मुहम्मद परमेश्वर का बसीठी है। मुसलमानों के अनुसार जो कोई ये दोनों बाते मानता हो, वही मुसल्मान है।

२ दरबार से, दरबार ही से, खास दरबार से।

३ किला, मोर्चा।

४ पूर्णोपमा अलंकार।

५ तोप।

६ झुरमुट, समूह।

७ इस छंद में पूर्ण वीर रस एव पदार्थावृत्त अलंकार है।

इखलास[1] काहू मीर न सम्हारे है। इह हिंदुवान की बिहद्द तरवारि राखि कैयो बार दिली के गुमान झारि डारे है ॥ २५ ॥

जीत्यो सिवराज सलहेरि को समर सुनि सुनि असुरन[2] के सु सीने धरकत है। देवलोक नागलोक नरलोक गावैं जस अजहूँ लौं परे खग्ग दाँत खरकत हैं॥ कटक कटक काटि कीट से उड़ाय केते भूषन भनत मुख मोरे सरकत हैं। रनभूमि लेटे अधकटे फरलेटे परे रुधिर लपेटे पठनेटे फरकत है ॥ २६ ॥

मालती सवैया

केतिक देस दल्यो दल के बल दच्छिन चंगुल चापि कै चाख्यो।
रूप गुमान हर्‌यो गुजरात को सूरति[3] को रस चूसि कै नाख्यो[4] ॥
पंजन पेलि मलिच्छ मले सब सोई बच्यो जेहि दीन ह्वै भाख्यो।
सो रँग है सिवराज बली जेहि नौरँग मैं रँग[5] एक न राख्यो ॥२७॥

सूबा निरानंद बादरखान गे लोगन बूझत ब्योत बखानो।
दुग्ग सबै सिवराज लिये धरि चारु बिचारु हिये यह आनो ॥
भूषन बोलि उठे सिगरे हुतो पूना मैं साइतखान को थानो।
जाहिर हैं जग मैं जसवंत लियो गड़सिंह मै गीदर[6] बानो ॥२८॥

---

१ सलहेरि के युद्ध मे मुगलो का सेनापति इखलास खाँ था। किसी किसी प्रति में अफजल खाँ इसके स्थान पर लिखा है। वह बीजापुरी सरदार था किंतु यहाँ दिल्ली की ओर से सलहेरि मे लड़नेवाले मुगल सरदार का वर्णन है।

२ मुसल्मान (टाड देखिए)।

३ सन् १६६४ और १६७० ई० मे शिवाजी ने सूरत लूटा।

४ गुजराती भाषा मे—फेंक दिया।

५ काव्यलिंग अलंकार।

६ जसवंतसिंह ने सिंहगढ़ को सन् १६६३ में नाम मात्र को घेरा, परंतु फिर कुछ किए बिना मोहासिरा उठा लिया। यह छंद स्फुट कविता से यहाँ रक्खा गया है।

कवित्त मनहरण

जोरि करि जैहैं जुमिला[1] हू के नरेस पर तोरि अरि खड खड सुभट समाज पै। भूषन असाम रूम बलख बुखारे जैहैं चीन सिलहट[2] तरि जलधि जहाज पै॥ सब उमरावन की हठ कूरताई देखौ कहैं नवरगजेब साहि सिरताज पै। भीख माँगि खैहैं बिनु मनसब रैहैं पै न जैहैं हजरत महाबली सिवराज पै॥ २९॥

चद्रावल चूर करि जावली जपत[3] कीन्ही मारे सब भूप औ सँहारे पुर धाय कै। भूषन भनत तुरकान दलथभ[4] काटि अफजल मारि डारे तबल[5] बजाय कै॥ एदिल सौ बेदिल हरम कहै बार बार अब कहा सोवो सुख सिहहि जगाय कै। भेजना है भेजौ सो रिसाले[6] सिवराज जू की बाजी करनालै परनालै पर आय कै॥ ३०॥

मालती सवैया

साजि[7] चमू जनि जाहु सिवा पर सोवत जाय न सिह जगावो।
तासो न जग जुरौ न भुजग महा विष के मुख मैं कर नावो॥
भूषन भाषत बैरिबधू जनि एदिल औरँग लौ दुख पावो।
तासु सलाह कि राह तजौ मति, नाह दिवाल कि राह न धावो॥३१॥

---

१ शि० भू० छद न० ११२ देखिए।

२ आसाम मे है। वहाँ की नारगी मशहूर है।

३ शि० भू० छद न० २०६ का नोट देखो। चद्रावल, चदरावल, चद्रराव मोरे।

४ दल थभ का कोई पता नही लगता। स्यात् यह रणथभ हो, जहाँ का राजा हम्मीर देव प्रसिद्ध हो गया है अथवा दल (फौज) का थामनेवाला (आधार) सेनापति।

५ डका।

६ खिराज।

७ यह छद स्फुट कविता से आया है।

छप्पय

बिज्जपूर[1] बिदनूर[2] सूर सर धनुष न संधहिँ । मंगल बिनु मल्लारि[3] नारि धम्मिल[4] नहि बंधहिँ ॥ गिरत गब्भ[5] कोटै गरब्भ[6] चिजी चिजा[7] डर । चालकुंड[8] दलकुंड[9] गोलकुंडा संका उर ॥ भूषन प्रताप सिवराज तव इमि दच्छिन दिसि संचरहि । मधुरा[10] धरेस धकधकत सो द्रविड़ निबिड़ उर दबि डरहि ॥ ३२ ॥

कवित्त मनहरण

अफजल खान को जिन्हो ने मयदान मारा बीजापुर गोलकुंडा मारा जिन आज है । भूषन भनत फरासीस त्यों फिरंगी मारि हबसी तुरक डारे उलटि जहाज है ॥ देखत मै रुसतम[11] खाँ को जिन खाक किया

---

१ किसी बिज्जपुर का पता नहीं लगता । शायद यह बिजैपुर (बीजापुर) हो ।

२ यहाँ एक रानी राज्य करती थी । उसके कारपरदाज उससे बिगड़े हुए थे । उसकी प्रार्थना पर शिवाजी ने सन् १६७७ के लगभग रानी का अधिकार ठीक कर दिया । सन् १६६४ में इन्होंने बिदनूर जीता भी था ।

३ मलाबार बासी ।

४ फूल मोती आदि से गुथे हुए बाल ।

५ गर्भ ।

६ किले के भीतर ही, कोट गर्भ्भ मे ही ।

७ लड़की लड़का । इसका प्रयोजन जिजी से नहीं है, क्योंकि जिंजी का वास्तविक नाम चंडी था जो शब्द चिजी चिजा से असंबद्ध है ।

८ चाल एक बंदरगाह है । इसके पास सन् १५३१ ई० के लगभग ईसाइयों ने एक किला बनवाया था ।

९ डल कश्मीर मे एक बड़ी झील है ।

साल की सुरति आजु सुनी जो अवाज है। चौंकि[1] चौंकि चकता कहत चहुँधा ते यारौ लेत रहौ खबरि कहाँ लौं सिवराज है ॥ ३३ ॥

फिरगाने[2] फिकिरि औ हद सुनि हबसाने भूषन भनत कोऊ सोवत न घरी है। बीजापुर बिपति बिडरि सुनि भाज्यो सब दिल्ली दरगाह बीच परी खरभरी है ॥ राजन के राज सब साहिन के सिरताज आज सिवराज पातसाही[3] चित धरी है। बलख बुखारे कसमीर लौं परी पुकार धाम धाम धूमधाम रूम साम परी है[4] ॥ ३४ ॥

गरुड़[5] को दावा सदा नाग के समूह पर दावा नाग ह पर सिह सिरताज को। दावा पुरहू[6] को पहारन के कुल पर पच्छिन के गोल पर दावा सदा बाज को ॥ भूषन अखड नवखड महिमडल मै तम पर दावा रवि किरन समाज को। पूरब पछाँह देस दच्छिन ते उत्तर लौं जहाँ पादसाही तहाँ दावा सिवराज को ॥ ३५ ॥

दारा की न दौर यह रारि नहीं खजुवे[7] की बाँधिबो नहीं है कैधौं मीर सहबाल[8] को। मठ विश्वनाथ को न बास ग्राम गोकुल को देवी को न देहरा न मदिर गोपाल को ॥ गाढ़े गढ लीन्हे अरु बैरी कतलाम

---

१ पूर्ण भयानक रस।

२ बाबर के पिता का राज्य।

३ इस छद मे शिवाजी के अभिषेक का कथन है।

४ भयानक रस।

५ निदर्शना अलकार।

६ इद्र।

७ खजुए मे शाहशुजा औरगजेब से हारा था।

८ इसका इतिहास मे नाम नही मिलता, कोई छोटा सर्दार होगा। लाल कवि ने इसका वर्णन किया है। इसका ठीक नाम शहबाज खाँ था।

कीन्हे ठौर ठौर हासिल[1] उगाहत है साल को। बूड़ति है दिल्ली सो सम्हारै क्यो न दिल्लीपति धक्का आनि लाग्यो सिवराज महाकाल को ॥३६॥

गढ़न[2] गँजाय गढ़धरन सजाय करि छाँड़े केते धरम दुवार दै भिखारी से[3]। साहि के सपूत पूत बीर सिवराज सिंह केते गढ़धारी किये बन बनचारी से॥ भूषन बखानै केते दीन्हे बंदीखाने सेख सैयद हजारी[4] गहे रैयत बजारी से। महता[5] से मुगल महाजन[6] से महाराज डाँड़ि लीन्हे पकरि पठान पटवारी से[7] ॥ ३७ ॥

यो पहिले उमराय लरे रन जेर किये जसवंत अजूबा।
साइतखाँ अरु दाउदखाँ पुनि हारि दिलेर मोहम्मद डूबा॥
भूषन देखे बहादुर खाँ पुनि आय महावत खाँ अति ऊबा।
सूखत जानि सिवाजि के तेज सों पान से फेरत नौरंग सूबा॥३८॥

वारिध के कुंभभव घन बन दावानल तरुन तिमिर हू के किरन समाज हौ। कंस के कन्हैया कामधेनु हू के कंटकाल[8] कैटभ के कालिका बिहंगम के बाज हौ॥ भूषन भनत जग जालिम के सचीपति पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज हौ। रावन के राम कार्तवीज के परसुराम दिल्लीपति दिग्गज के सेर सिवराज हौ[9] ॥ ३९ ॥

---

१ चौथ, सरदेशमुखी आदि।

२ किलों को गँजवा कर।

३ यहाँ पर प्रताप राव गूजर द्वारा बहलोल खाँ के छोड़े जाने का इशारा समझ पड़ता है। सन् १६७३ की घटना है।

४ एक हजार सिपाहियों का अफसर।

५ महतौं, मुसद्दी।

६ कलवार।

७ पूर्णोपमा।

८ काँटों का घर।

९ समाभेद रूपक।

दर बर दौरि करि नगर उजारि डारि कटक कटाई कोटि दुजन दरब[1] की। जाहिर जहान जंग जालिम है जोरावर चलै न कछूक अब एक राजा रब[2] की॥ सिवराज तेरे त्रास दिल्ली भयो भुवकंप थर थर काँपति बिलायति अरब[3] की। हालत दहलि जात काबुल कँधार वीर रोष करि काढ़ै समसेर ज्यो गरब[4] की[5]॥ ४०॥

सिवा की बड़ाई औ हमारी लघुताई क्यो कहत बार बार कहि पातसाह गरजा। सुनिये, खुमान[6] हरि तुरुक गुमान महि देवन जेंवायो, कवि भूषन यों सरजा॥ तुम वाको पाय कै जरूर रन छोरो वह रावरे वजीर छोरि देत करि परजा। मालुम तिहारो होत याहि मैं निवारो रनु कायर सों कायर औ सरजा सो सरजा॥ ४१॥

कोट गढ़ ढाहियतु एकै पातसाहन के एकै पातसाहन के देस डाहि-यतु है। भूषन भनत महाराज सिवराज एकै साहन की फौज पर खग्ग बाहियतु है॥ क्यौंन[7] होहि बैरिन की बौरी सुनि बैर बधू दौरनि तिहारे कहौ क्यों निबाहियतु है। रावरे नगारे सुने बैरवारे नगरनि नैनवारे नदन निवारे चाहियतु है[8]॥ ४२॥

चकित चकत्ता चौंकि चौंकि उठै बार बार दिल्ली दहसति चित

---

१ दुर्जन के द्रव्य से इकट्ठी की हुई सेना कटवा डाली।

२ राव।

३ अरब की विलायत थर थर काँपती है।

४ अहंकार की अथवा पच्छिम [मगरिब] की तलवार।

५ यह छंद स्फुट कविता से आया है।

६ शिवाजी।

७ भयानक रस। बैर [शिवाजी से] सुन बैरिन की बधू क्यों बौरी न होहिं।

८ चंचलातिशयोक्ति।

चाहै खरकति है। बिलखि बदन बिलखात बिजैपुर पति फिरत फिरंगिन की नारी फरकति है॥ थर थर काँपत कुतुब साहि गोलकुंडा हहरि हबस भूप भीर भरकति है। राजा[1] सिवराज के नगारन की धाक सुनि केते पातसाहन की छाती दरकति है॥ ४३॥

मोरँग[2] कुमाउँवौ पलाऊ[3] बाँधे एक पल कहाँ लौं गनाऊँ जेऽब भूपन के गोत हैं। भूषन भनत गिरि बिकट निवासी लोग, बावनी बवंजा[4] नव कोटि धुंध[5] जोत हैं॥ काबुल कँधार खुरासान जेर कीन्हो जिन मुगल पठान सेख सैयदहु रोत हैं। अब लगि[6] जानत हे बड़े होत पातसाह सिवराज प्रगटे ते राजा बड़े होत[7] हैं॥४४॥

दुग्ग पर दुग्ग जीते सरजा सिवाजी गाजी डग्ग नाचे डुग्ग पर रुंड मुंड फरके। भूषन भनत बाजे जीति के नगारे भारे सारे करनाटी[8]

---

१ भयानक रस।

२ शि० भू० छंद न० २४६ का नोट देखिए।

३ 'भागना' हो सकता है, 'पला' भी। पला नामक एक ग्राम यमुनाजी के किनारे था।

४ बजूना नामक एक स्थान फतेहपुर सिकरी के पास था। उत्तर पश्चिमी बोली मे बावन को बवजा कहते हैं। बावनी बुंदेलखंड में एक मुसल्मानी रियासत है। इसी से बावनी के पीछे बवंजा लगाया गया है। करनाटक के युद्ध में शिवाजी ने बावन गिरि जीता था। संभव है, बावनी शब्द से उसी का अभिप्राय हो। बावन बवजा प्रायः कहते हैं।

५ धुँधली जोति के अर्थात् तेजहत।

६ काव्यलिंग अलकार।

७ यह छंद स्फुट कविता से यहाँ आया है।

८ करनाटक पर शिवाजी ने सन् १६७६–७८ में आक्रमण किया।

भूप सिंहल को सरके ॥ मारे सुनि सुभट पनारेवारे[1] उदभट तारे लगे फिरन सितारे गढ़धर के। बीजापुर बीरन के, गोलकुंडा धीरन के, दिल्ली उर मीरन के दाड़िम से दरके[2] ॥४५॥

मालवा उजैन भनि भूषन भेलास[3] ऐन सहर सिरोज[4] लौं परावने परत हैं। गोंडवानो[5] तिलगानो फिरगानो[6] करनाट[7] रुहिलानो रुहिलन[8] हिये हहरत हैं ॥ साहि के सपूत सिवराज तेरी धाक सुनि गढ़पति बीर तेऊ धीर न धरत है। बीजापुर, गोलकुंडा, आगरा, दिली के कोट बाजे बाजे रोज दरवाजे उघरत हैं ॥ ४६ ॥

मारि करि पातसाही खाकसाही कीन्हीं जिन जेर कीन्हों जोर सों लै हद्द सब मारे की। खिसि गई सेखी फिसि गई सरताई सब हिसि गई हिम्मति हजारो लोग सारे की ॥ बाजत दमामे लाखौं धौंसा आगे

---

१ इस छंद में पनारे गढ़ का वर्णन तीसरी जीत सन् १६७६ वाली का है। परनाले मे सन् १६५९-१६६० ई० एव सन् १६७२ में भी लड़ाई हुई थी।

२ पूर्णोपमा।

३ भेलसा, इसमें बहुत से प्राचीन बौद्ध स्तूप हैं। यह ग्वालियर राज्य में है।

४ शीराज हो सकता है—सिरोज नामक एक शहर बुंदेलखड के समीप भी था। सिरोज सागर के भी पास है।

५ वर्त्तमान समय का बहुत सा मध्य प्रदेश उस समय गोंडवाना कहलाता था क्योंकि वहाँ विशेषतया गोंड़ रहते थे।

६ बाबर के पिता का राज्य।

७ करनाटक।

८ भूमिका देखिए। रुहेलखड। किसी किसी प्रति में "हिंदुवानो हिंदुन के हिए हहरत हैं" यह भी पाठ है जो अशुद्ध समझ पड़ता है।

घहरात गरजत मेघ ज्यों बरात चढ़े भारे की। दुलहो[1] सिवाजी भयो दच्छिनी दमामेवारे दिल्ली दुलहिनि भई सहर सितारे की ॥४७॥

डाढ़ी के रखैयन की डाढ़ी[2] सी रहति छाती बाढ़ी मरजाद जस हद्द हिंदुवाने की। कढ़ि गई रैयति के मन की कसक सब मिटि गई ठसक तमाम तुरकाने की॥ भूषन भनत दिलीपति दिल धकधका सुनि सुनि धाक सिवराज[3] मरदाने की। मोटी भई चंडी बिनु चोटी के चबाय सीस खोटी भई संपति चकत्ता के घराने की॥४८॥

जिन फन फुतकार उड़त पहार भार कूरम कठिन जनु कमल बिदलि गो। विषजाल ज्वालामुखी लवलीन होत जिन झारन चिकारी मद दिग्गज उगलि गो॥ कीन्हो जेहि पान पयपान सो जहान कुल कोलहू उछलि जल सिंधु खलभलि गो। खग्ग[4] खगराज महराज सिवराज जू को अखिल भुजंग मुगलद्दल निगलि गो॥४९॥

सुमन[5] मैं मकरंद रहत है साहि नंद मकरंद सुमन रहत ज्ञान बोध है। मानस मैं हंस बंस रहत हैं तेरे जस हंस में रहत करि मानस बिसोध है॥ भूषन भनत भौंसिला भुवाल भूमि तेरी करतूति रही अद्भुत रस ओध है। पानि में जहाज रहे लाज के जहाज महाराज सिवराज तेरे पानिप पयोध है॥५०॥

बेद राखे बिदित पुरान राखे सारयुत रामनाम राख्यो अति रसना

---

१ सम अभेद रूपक।

२ जली हुई। जंगल में पत्तियाँ जलाई जाती हैं; उसे "दाढ़ा" कहते हैं। "दाढ़ा" मुख्यतः दौरहा अग्नि का नाम है।

३ इस छंद में कहीं कहीं शिवराज के स्थान पर छत्रसाल का नाम लिखा है, परंतु शुद्ध शिवराज ही का नाम समझ पड़ता है।

४ सम अभेद रूपक।

५ यह छंद स्फुट कविता से आया है।

सुघर मैं। हिंदुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की काँधे मैं जनेउ राख्यो माला राखी गर मै॥ मीड़ि राखे मुगल मरोड़ि राखे पातसाह बैरी पीसि राखे बरदान राख्यो कर मै। राजन की हद्द राखी तेग बल सिवराज देव राखे देवल स्वधर्म्म राख्यो घर मैं॥५१॥

सपत नगेस चारौ ककुभ[1] गजेस कोल कच्छप दिनेस धरैं धरनि अखड को। पापी घालै धरम सुपथ चालै मारतड करतार प्रन पालै प्रानिन के चड को॥ भूषन भनत सदा सरजा सिवाजी गाजी म्लेच्छन को मारै करि कीरति घमड को। जगकाज वारे निहचित करि डारे सब भोर देत आसिष तिहारे भुजदड को॥५२॥

श्री छत्रसाल दशक

इक हाडा[2] बूँदी धनी मरद महेवा वाल।
सालत नौरँगजेब को ये दोनो छतसाल[3]॥

---

१ पृथ्वी के हाथी अर्थात् दिग्गज।

२ एक छत्रसाल हाडा बूँदी-नरेश थे। ये महाराज गोपीनाथ के पुत्र और राव रतनसिंह के पौत्र थे। ये स्वय बावन लडाइयों मे शरीक रहे थे। सन् १६५८ ई० में धौलपूर मे दारा और औरगजेब की जो लडाई राज्यार्थ हुई थी, उसमें ये महाराज दारा के दल के हरौल मे थे। उसी लडाई मे बडी बहादुरी दिखा कर ये मारे गए। उसी का वर्णन भूषण ने इस दशक के प्रथम दो छदों में किया है।

३ दूसरे छत्रसाल चपति राय बुँदेला के पुत्र थे। इन्हीं के अनिवार्य प्रयत्नों से इनका राज्य बुँदेलखड भर मे फैल गया था।

वै देखौ छत्ता पता यै देखौ छतसाल।
वै दिल्ली की ढाल[1] यै दिल्ली ढाहन वाल ॥

कवित्त मनहरण

छत्रसाल हाड़ा बूँदी नरेश विषयक

चले चदबान[2] घनबान औ कुहूकबान[3] चलत कमान[4] धूम आसमान छ्वै रह्यो। चली जमडाढै बाढवारै तरवारै जहाँ लोह-आँच जेठ के तरनि मान वै रह्यो ॥ ऐसे समै फौजै बिचलाईं छत्रसालसिंह अरि के चलाये पायँ वीररस च्वै रह्यो। हय चले हाथी चले सग छोड़ि साथी चले ऐसी चलाचली मै अचल हाडा ह्वै रह्यो[5] ॥ १ ॥[6]

दारा साहि नौरंग जुरे हैं दोऊ दिल्ली दल एकै गये भाजि एकै गये रुँधि चाल मै[7]। बाजी कर कोऊ दगाबाजी करि राखी जेहिं कैसेहू प्रकार

---

१ क्योंकि वे दिल्ली की ओर हो दारा की तरफ से लडे थे।

२ अर्द्धचद्र बाण।

३ अधेरे मे चलनेवाले बाण, इनके चलने से कुहू कुहू आवाज होने से ये कुहूँक बान कहलाते थे।

४ तोप, कैनन।

५ पूर्णोपमा, पदार्थावृत्त दीपक, परिसख्या और भूषणानुसार पर्याय अलकार।

६ एक महाशय का कथन है कि उन्हे यह छद भूषण कृत नहीं समझ पडता।

७ कोई भाग गए और कोई सेना के सचालन में फँस गए, अर्थात् इस प्रकार से सेना चलाई गई कि उनकी सेना ऐसे स्थान पर जा पडी कि जहाँ से वह शत्रु से भली भाँति लड नहीं सकती थी। चलने से कुचल गए।

प्रान बचत न काल[1] मैं ॥ हाथी ते उतरि हाड़ा जूझो लोह लंगर[2] दै एती लाज कामें जेती लाज छत्रसाल मैं । तन तरवारिन मैं मन परमेसुर मैं प्रान स्वामि-कारज मैं माथो हरमाल मैं ॥ २ ॥

छत्रसाल बुँदेला महेवानरेश विषयक

निकसत म्यान ते मयूखैं[3] प्रलै भानु कैसी फारै तम तोम से गयंदन के जाल को । लागति लपटि कंठ बैरिन के नागिनि सी रुद्रहि रिझावै दै दै मुंडन के माल को ॥ लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली कहाँ लौं बखान करौं तेरी करबाल को । प्रतिभट[4] कटक कटीले केते काटि काटि कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल को[5] ॥ ३ ॥

भुज भुजगेस की ह्वै संगिनी भुजंगिनी सी खेदि खेदि खाती दीह दारुन दलन के । बखतर पाखरिन बीच धसि जाति मीन पैरि पार जात परबाह ज्यों जलन के ॥ रैया राय चंपति[6] को छत्रसाल महाराज

१ कोई ऐसे थे कि जिस समय किसी प्रकार नहीं बचते थे, तो उन्होंने दगाबाजी करके अपने हाथ बाजी रक्खी, (अर्थात् प्रान बचाए)। यह भी हो सकता है कि हाथ में घोड़ा पकड़ कर सईस बनकर बच गए।

२ जब हाथी लड़ाई से भागने लगते हैं, तब उनके पैरों में लगड़ (मोटी जंजीर) डाल देते हैं कि वे भाग न सके।

३ किरनें।

४ पूर्णोपमा अलंकार।

५ एक महाशय का निराधार कथन है कि छंद नंबर २ व ३ गोरेलाल कृत हैं, किंतु वे महाराजा छत्रसाल पन्ना नरेश के कवि व माफीदार थे न कि बूँदीनरेश के।

६ चंपतिराय छत्रसाल बुँदेला के पूज्य पिता थे। ये महाशय बुँदेलों में बड़े ही प्रतापी हो गए हैं। पहले महाराज चंपति शाहजहाँ से मित्रता रखते थे और उनकी ओर से दारा के साथ काबुल में लड़ने भी गए थे। वहाँ इन

भूषन सकत को बखानि यों बलन के। पच्छी पर-छीने[1] ऐसे परे पर छीने[2] बीर तेरी बरछी ने बर[3] छीने हैं खलन के ॥ ४ ॥

रैया राय चंपति को चढ़ो छत्रसालसिंह भूषन भनत समसेर जोम जमकैं[4]। भादौं की घटा सी उठी गरदैं गगन घेरै सेलैं समसेरैं फेरै दामिन सी दमकै ॥ खान उमरावन के आन राजा रावन के सुनि सुनि उर लागैं घन कैसी घमकैं। बैहर[5] बगारन की अरि के अगारन की नाँघती पगारन[6] नगारन की धमकैं ॥ ५ ॥

अत्र गहि छत्रसाल खिझ्यो खेत बेतवै के उत ते पठाननहू कीन्हीं झुकि झपटैं। हिम्मति[7] बड़ी के गबड़ी[8] के खिलवारन लौं देत सै हजा-

---

महाराज ने इतनी वीरता दिखाई और अफगानों को इतना शीघ्र परास्त कर दिया कि दारा को इनकी वीरता से द्वेष उत्पन्न हुआ। इसी द्वेष के कारण इनसे दारा की शत्रुता हो गई। तब ये महाराज औरंगजेब की ओर हो गए और इन्होंने धौलपुर के युद्ध में हरौल दल के नेता होकर दारा को परास्त करके औरगजेब को राज्य दिलाने में पूरा योग दिया (यथा "चंपति राय जगत जस छायो—ह्वै हरौल दारा बिचलाओ" लालकृत छत्रप्रकाश।)

१ पंखकटे।

२ पर अर्थात् शत्रु खण्डित हो गए।

३ बल।

४ पूर्णोपमा अलंकार।

५ वायु।

६ घेरा।

७ पूर्णोपमा अलंकार।

८ गबड़ी 'कबड्डी' एक प्रकार का खेल होता है। इसमें खिलाड़ी दो भागों में विभक्त हो जाते हैं। एक समूह का एक खिलाड़ी कबड्डी कबड्डी कहता दूसरे गोल में जाता है और यह प्रयत्न करता है कि उसकी एक ही साँस न टूटने

रन हजार बार चपटैं ॥ भूषन भनत काली हुलसी असीसन को सीसन को ईस[1] की जमाति जोर जपटैं[2]। समद लौं समद[3] की सेना त्यों बुँदेलन की सेलैं समसेरैं भई बाड़व की लपटैं ॥ ६ ॥

हैबर हरट्ट[4] साजि गैबर[5] गरट्ट[6] सम[7] पैदर के ठट्ट फ़ौज जुरी तुरकाने की। भूषन भनत राय चंपति को छत्रसाल रोप्यो रन ख्याल ह्वै के ढाल हिंदुवाने की ॥ कैयक हजार एक बार बैरी मारि डारे रंजक दगनि मानो अगिनि रिसाने की। सैद अफगन[8] सेन सगर सुतन लागी कपिल सराप लौं तराप तोपखाने की ॥ ७ ॥

पावे और वह उस गोल के किसी खिलाड़ी को छूकर लौट आवे। अगर उसने ऐसा कर लिया तो उस गोल के जिस खिलाड़ी को उसने छूआ उसे मानों उसने मार डाला, नहीं तो स्वयं मर गया। दूसरे गोल वाले चाहते है कि उसे मार डालें अर्थात् उसकी एक साँस डौल से तुड़वा दे, और एक साँस बिना तोड़े उसे लौटने न दे। उसके पीछे दूसरे गोल का एक खिलाड़ी वैसा ही करता है। इसी प्रकार जब किसी गोल के सब खिलाड़ी मर जाते हैं, तो वह गोल हार जाता है।

१ महादेव जी।

२ चपेट करते हैं।

३ अब्दुस्समद दिल्ली का एक सरदार था। बेतवै नदी के किनारे सन् १६६० ई० के करीब यह छत्रसाल से भारी युद्ध में हारा।

४ हृष्ट पुष्ट।

५ गजबर; अच्छे हाथी।

६ समूह।

७ उसी भाँति के सैनिक युक्त।

८ सैद अफगन दिल्ली का एक सरदार था और छत्रसाल से लड़ने को भेजा गया था। छत्रसाल ने उसे पराजित किया। लाल कवि कृत छत्र-प्रकाश

चाक[1] चक चमू के अचाक[2] चक चहूँ ओर चाक सी फिरति धाक चपति के लाल की। भूषन भनत पातसाही मारि जेर कीन्हीं काहू उमराव ना करेरी करबाल[3] की ॥ सुनि सुनि रीति बिरदैत[4] के बडप्पन की थप्पन उथप्पन की बानि छत्रसाल की। जग जीतिलेवा ते वे ह्वैकै दामदेवा[5] भूप सेवा लागे करन महेवा महिपाल की ॥ ८ ॥

कीबे को समान प्रभु ढूंढि देख्यो आन पै निदान दान युद्ध मे न कोऊ ठहरात हैं। पचम[6] प्रचड भुज दड को बखान सुनि भागिबे को पच्छी लौ पठान थहरात है ॥ सका मानि सूखत अमीर दिलीवारे जब चपति के नद के नगारे घहरात हैं। चहूँ ओर चकित चकत्ता के दलन पर छत्ता के प्रताप के पताके फहरात हैं[7] ॥ ९ ॥

राजत अखड तेज छाजत सुजस बड़ो गाजत गयद दिग्गजन हिय साल को। जाहि के प्रताप सो मलीन आफताप[8] होत ताप तजि दुज्जन

देखिए। मटौंध जीतने के बाद छत्रसाल ने पहले स्वय विचलित होकर फिर घोर युद्ध कर इसे हराया था, तब इसकी जगह शाह कुली नियत हुआ था। यह सन् १७०० की घटना है।

१ चाक, मोटी ताजी।

२ अचानक।

३ तलवार।

४ यश वर्णन करनेवाला।

५ कर देनेवाले।

६ पचमसिंह बुँदेलों के पूर्व पुरुष थे। महाराज बुँदेल (जो बुँदेलों के पुरखा थे) इनके पुत्र थे। पचमसिंह बडे प्रतापी और विंध्यवासिनी देवी के बडे भारी भक्त थे।

७ पूर्णोपमा, चचलातिशयोक्ति, पूर्ण भयानक रस। यह छद स्फुट कविता से यहाँ आया है।

८ आफताब, सूर्य।

करत बहु ख्याल को ॥ साज सजि गज तुरी[1] पैदरि कतार दीन्हे भूषन भनत ऐसो दीन प्रतिपाल को ? और राव राजा[2] एक मन मैं न ल्याऊँ अब साहू[3] को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को ॥ १० ॥

स्फुट काव्य

दोहा

रेवा[4] ते इत देत नहि पथिक म्लेच्छ निवास।
कहत लोग इन पुरनि मैं है सरजा को त्रास ॥ १ ॥

कवित्त मनहरन

बाजि[5] बंब चढ़ो साजि बाजि जब कलौं भूप गाजी महाराज राजी भूषन बखानतैं। चंडी की सहाय महि मंडी तेजताई ऐंड छंडी राय राजा जिन दंडी औनि आन तैं[6] ॥ मंदीभूत रबि रज[7] बंदीभूत हठधर

---

१ घोड़ा।

२ भूमिका एवं स्फुट काव्य के छद नं० ३ का नोट देखिए।

३ महाराज साहूजी छत्रपति शिवाजी के पौत्र थे। शिवाजी के पुत्र और साहू जी के पिता का नाम शभाजी था। साहू जी के ही राज्यकाल में मुगल साम्राज्य पूर्ण रूप से ध्वस्त हो गया था। साहू जी ने बहुत वर्ष राज्य किया था। शाही कैद से इनका सन् १७०७ ई० मे छुटकारा हुआ था।

४ नर्म्मदा नदी।

५ यह छंद शिवाबावनी से आया है; क्योंकि यह शिवाजी विषयक नहीं है। सन् १६६६ के लगभग का कथन है।

६ देवीजी की सहायता से (सुलंकी ने) पृथ्वी तेज से ता (छादित) कर मढ़ दी, और उन राय राजाओं ने भी, जिन्होंने औरों से भूमि दड में ले ली थी, ऐंड छोड़ दी।

७ राज्य श्री।

नदी भूतपति भो अनदी अनुमान तें। एकीभूत दुवन करंकीभूत[1] दिगदती पकीभूत[2] समुद सुलकी के पयान तें[3] ॥ २ ॥

सागनि सो पेलि पेलि खग्गन सो खेलि खेलि समद[4] सो जीत्यो जो समद लौं बखाना है। भूषन बुँदेला मनि चम्पति सपूत धनि, जाकी धाक बचा एक मरद मियाँ ना[5] है ॥ जगल के बल सो उदगल[6] प्रबल लूटा अहमद अमीखाँ का कटक खजाना है। बीररस मत्ता जाते काँपत चकत्ता यारौ कत्ता ऐसा बाँधिये जो छत्ता[7] बाँधि जाना है ॥ ३ ॥

देस दहपट्टि आयो आगरे दिली के मेले बरगी बहरि[8] चारु दल जिमि देवा को। भूषन भनत छत्रसाल, छितिपाल मनि ताके[9] ते कियो बिहाल जगजीति लेवा को ॥ खड खड सोर यो अखड महि मडल मैं

---

१ कलकी, दिग्गज श्वेत वर्ण थे, सो इस रज मे आच्छादित होने से वे मैले हो गए और इसी कारण कलकी कहे गए।

२ चहला (कीच) से भरा हुआ।

३ अनुप्रास। पँवार आदि जो चार अग्निकुल के क्षत्री है, उनमे एक सुलकी भी हैं। बघेले सुलकी क्षत्रियों मे हैं। बघेलखड के अतिरिक्त ये लोग गुजरात मे भी राज्य करते थे। इनके राज्य अब भी बहुत से हैं जिनमे रीवाँ प्रधान है। मेवार में भी इनकी एक शाखा है जिसकी सोलह उपशाखाएँ हैं। यह छद हृदयराम सुत रुद्र के विषय मे हो सकता है। शि० भू० छद न० २८ का नोट देखिये।

४ वह अब्दुल समद जीता जिसका यश समुद्र तक पहुँचा हुआ है।

५ एक भी बहादुर मियाँ (बडे आदमी का बेटा) न बचा।

६ उद्दड, उच्छृखल।

७ छत्रसाल।

८ साथियों से बहर कर (बहिलाकर, भूलकर) जैसे साथियों से भूल कर देवता इद्र का दल हो।

९ युद्ध में जीतने वाले दल को केवल देखकर परेशान (विह्वल) कर दिया

मडो तैं बुँदेल खड मडल महेवा को। दक्खिन के नाथ को कटक रोक्यो महाबाहु ज्यो सहसबाहु नै प्रवाह रोक्यो रेवा[1] को ॥ ४ ॥

तहवर खान हराय ऐड अनवर कि जग हरि।
सुतुरदीन[2] बहलोल गये अबदुल समद मुरि ॥
महमद को मद मेटि सेर अफगनहिँ जेर किय।
अति प्रचड भुजदड बलन कहि नै सुदड दिय ॥
भूषन बुँदेल छत्रसाल डर रगत ज्यो अवरग लजि।
झुके निसान तजि समर सो मक्के तक्कि[3] तुरुक भजि ॥ ५ ॥

सक्त जिमि सैल पर अर्क[4] तम फैल पर बिघन की रैल पर लबोदर[5] लेखिये। राम दसकध पर भीम जरासध पर भूषन ज्यो सिवु पर कुभज[6] बिसेसिये ॥ हर ज्यो अनग पर गरुड भुजंग पर कौरव के अग पर पारथ ज्यो पेखिये। बाज ज्यो बिहग पर सिह ज्यो मतग पर म्लेच्छ चतुरग पर चितामणि[7] देखिये[8] ॥ ६ ॥

---

१ नर्मदा नदी।

२ सदरुद्दीन।

३ ताक (देख) कर।

४ सूर्य्य।

५ गणेशजी।

६ अगस्त्य मुनि जिन्होंने समुद्र पी लिया था। वे घड़े से उत्पन्न कहे गये हैं। वास्तव में उन्होंने जलसेना प्रस्तुत कर के अरब समुद्र के डाकुओं को पराजित करके तत्कालीन भारतीय समुद्री व्यापार कटक रहित कर दिया था, जिससे उनका भारी यश हुआ।

७ चितामणि को चिमणाजी भी कहते थे। आप एक भारी महाराष्ट्र महापुरुष थे जिनके विभव का समय सन् १७२३ के निकट था।

८ इस छद मे मालोपमा की बहार है।

पौरच नरेस अमरेस जू के अनिरुद्ध तेरे जस सुने ते सोहात[1] सौत सीतलैं। चंदन की चाँदनी सी चादरैं सी चहूँ ओर पथ पर फैलती है परम पुनीत लैं ॥ भूखन बखानी कबि मुखन प्रमानी सोतो बानी जू के बाहन हरख हंस हीतलैं। सरद के घन की घटान सी घुमंडती है मेरु ते उमंडती हैं मंडती महीतलैं ॥ ७ ॥

उठि गयो आलम सों रुजुक सिपाहिन को, उठि गो बँधैया सबै बीरता के बाने को। भूषन भनत उठि गयो है धरा सों धर्म, उठि गो सिगार सबै राजा राव राने को। उठि गो सुसील कबि, उठि गो जसीलो डील, फैलो मध्य देस मैं समूह तुरकाने को। फूटे भाल भिच्छुक के जूझे भगवंत[2] राय, अरराय टूटो कुल खंभ हिंदुवाने को ॥ ८ ॥

अकबर पायो भगवंत के तनै सों मान बहुरि जगतसिंह महा मरदाने सों। भूषन त्यो पायो जहांगीर महासिंह सो साहिजहाँ पायो जयसिंह जग जाने सों ॥ अब अवरंगजेब पायो रामसिंह जू सों और दिन दिन पैहै कूरम के माने सो। केते राजा राय मान पावै पातसाहन सों पावैं पातसाहमान मान के घराने सो ॥ ९ ॥

भले भाई भासमान आसमान भान जाको भानता भिखारिन के भूरि भय जात है। भोगन को भोगी, भोगीराज[3] कैसी भाँति भुजा भारी भूमि भार कै उतारन को ख्याल है ॥ भावतो समान भूमि भावती को भरतार भूषन भरत खंड भरत भुवाल है। बिभौ को भँडार औ भलाई को भवन भासै भाग भरो भाल जयसिंह भुवपाल है ॥१०॥

बाजे बाजे राजे तैं निवाजे हैं नजरि किये, बाजे बाजे राजे काटे

---

१ तेरा यश सुनकर कान शीतल और शोभित होते हैं।

२ कहीं कहीं भगवत के स्थान पर जसवंत भी लिखा हुआ है।

३ शेष; सर्पराज।

काढ़ि असिमत्ता सों। बाँके बाँके सूबा नालबन्दी[1] दै सलाह करैं, बाजे बाजे सूबा करे एक एक लत्ता सों॥ बाजे गाढ़े गढ़पति काटे रामद्वार[2] दै दै बाजे गाढ़े गढ़पति आने तरे कत्ता सों। बाजीराव गाजी तैं उबार्यो आप छत्रसाल[3] आमिल बिठायो बल करि कै चकत्ता सों॥ ११॥

साजिदल सहज सितारा महराज चलै बाजत नगारा बढ़ै धाराधर[4] साथ से। राय उमराय राना देसदेस पति भागे तजि तजि गढ़न गढ़ोई दसमाथ[5] से॥ पैग पैग होत भारी डावाँ डोल भूमिगोल[6] पैग पैग होत दिग मैगल अनाथ से। उलटत पलटत गिरत झुकत उझकत सेस फन बेद पाठिन के हाथ से॥१२॥

जुद्ध को चढ़त दल बुद्ध को जसत[7] तब लंक लौं अतंकन के पतरैं तारे[8] से। भूषन भनत भारे घूमत गयंद कारे बाजत नगारे जात प्ररि उर छारे से॥ धस के धरा के गाढ़े कोल की कडाकैं[9] डाढैं आवत ारारे दिग पालन तमारे[10] से। फेन से फनीस फन फूटि बिष छूटि जात

१ समझ पड़ता है कि नालबदी के नाम से कोई खिराज लिया जाता था।

२ राम का द्वार दे देकर काटा अर्थात् राम के यहाँ (उस लोक को) ोज दिया।

३ बंगश नवाब के दरेरे से बाजीराव ने जो छत्रसाल को बचाया था ़सका वर्णन है।

४ मेघ गर्जन से नगाडे बजते है।

५ रावण से प्रतापी गढपति भी भागे।

६ भूगोल पर।

७ यश प्राप्त करता है।

८ शत्रुओं कीपंक्तियाँ पत्तो सी पतली हो जाती हैं।

९ पृथ्वी के धसकने से बली वराह की डाढ़ैं कड़कती (टूटती) हैं।

१० दल के तरारे (दरेरे, धावा) से दिग्पाल को तवांई (अँधेरा छा जाना, बेहोशी) सी आती है।

उछरि उछरि मनो पुरवैं फुहारे से ॥१३॥

रहत अछक पै मिटै न धक[1] पीवन की निपट जु नाँगी डर काहू के डरै नहीं। भोजन बनावै नित चोखे खानखानन के सोनित पचावै तऊ उदर भरै नहीं॥ डगिलत आसौ[2] तऊ सुकल[3] समर बीच राजै रावबुद्ध[4] कर विमुख परै नहीं। तेग या तिहारी मतवारी है अछक तौ लौं जौ लौं गजराजन की गजक[5] करै नहीं॥ १४॥

जा दिन चढ़त दल साजि अवधूतसिंह[6] ता दिन दिगंत लौं दुवन दाटियतु है। प्रलै कैसे धाराधर[7] धमकैं नगारा धूरि धारा ते समुद्रन की धारा पाटियतु है॥ भूषन भनत भुवगोल को कहर तहाँ हहरत

---

१ बड़ी चोप।

२ आसव, मदिरा। तलवार के लिये लाल रंग का खून, क्योंकि उत्तम मद्य भी लाल रंग का माना गया है।

३ सफेद।

४ छत्रसाल हाड़ा बूँदी नरेश के भाई भीमसिंह के पौत्र अनिरुद्धसिंह थे। राव बुद्धसिंह इन्हीं अनिरुद्धसिंह के पुत्र थे। औरंगजेब के मरने पर उसके पुत्र मुअजम (बहादुर शाह) और आजम में राज्यार्थ जाजऊ पर घोर युद्ध हुआ था। उसमें राव बुद्धसिंह मुअजम की ओर थे। इसी दिन इन्हे रावराजा की उपाधि मिली। जैपुर के राजा जैसिंह ने अंत में राव बुद्ध का राज्य छीन लिया था, परंतु इनके पुत्र उमेदसिंह ने फिर उसे प्राप्त कर लिया।

५ शराबी लोग जो शराब के साथ थोड़ी सी नमकीन या चटपटी गिजा खाते हैं, वही गजक है। यह छंद छत्रसाल दशक से आया है।

६ ये सन् १७०० से १७५५ तक रीवाँ के शासक रहे और केवल छ महीने की अवस्था में गद्दी पर बैठे थे। इनका राज्य बुँदेलों ने दो तीन बार जीता था, किंतु अंत में ये उसे कायम रख सके।

७ मेघ।

तगा[1] जिमि गज काटियतु है। काँच से कचरि जात सेस के असेस फन कमठ की पीठि पै पीठी सी बाँटियतु[2] है ॥ १५ ॥

डंका के दिए ते दल डंबर[3] उमंड्यो, उडमंड्यो[4] उड-मंडल लौं खुर की गुरद्द है। जहाँ दाराशाह बहादुर के चढ़त, पैड़, पैंड़[5] में मढ़त मारु-राग बंब नद्द है ॥ भूषन भनत घने घुम्मत हरौलवारे, किम्मत अमोल बहु हिम्मत दुरद्द है। हद्दन छपद्द महि मद्द फर नद्द होत कद्दन[6] भनद्द से जलद्द[7] हलद्द्द है ॥ १६ ॥

उलद्त[8] मद अनुमद[9] ज्यों जलधि जल बल हद भीम कद काहू के न आह के। प्रबल प्रचंड गंड[10] मंडित मधुप वृंद बिध्य से बुलंद सिंधु सात हू के थाह के ॥ भूषन भनत झूल झंपति झपान झुकि झूमत झुलत झहरात रथ डाह के। मेघ से घमंडित मजेजदार[11] तेज पुंज

---

१ तागा, डोरा।

२ पूर्णोपमा, सबधातिशयोक्ति।

३ धूम धाम।

४ नक्षत्र मंडल तक उड़ाकर धूलि मंडित कर (मढ़) दी।

५ पैंड के अर्थ डग तथा मार्ग दोनों है।

६ ससार की सीमाओं तक (हाथियों के मदजल के कारण) भौंरे मरे हैं अथवा गजों के मद जल से पृथ्वी फट कर नद हो जाते हैं।

७ उन हाथियो के कदो (शरीरों) से नभ नद (आकाश गंगा आदि) के समान बादल हिलते हैं, अर्थात् वे इतने ऊँचे हैं कि उनके द्वारा आकाश नद तथा जलद दोनों हिलते हैं।

८ डालते है, उँड़ेलते हैं।

९ मद पर मद।

१० कनपटी।

११ एक प्रभावसूचक पद, शानदार।

गुंजरत कुंजर कुमाऊँ नरनाह के[1] ॥ १७ ॥

बलख बुखारे मुलतान लौं हहर पार कपि लौं पुकारै कोऊ धरत न सार[2] है। रूम रूंदि डारै खुरासान खूँदि मारै खाक खादर[3] लौं झारै ऐसी साहु[4] की बहार है॥ कक्कर[5] लौं बक्खर[6] लौं मक्कर[7] लौं चले जात टक्कर लेवैया कोऊ वार है न [8]पार है। भूषन सिरोज[9] लौं परावने परत

---

१ अनुप्रास, पूर्णोपमा। इस छंद के साथ एक जनश्रुति है। भूषण ने जब कुमाऊँ नरेश के यहाँ जाकर यह छद सुनाया था, तो उन्हे संदेह हुआ कि स्यात् जो यह सुनते थे कि शिवाजी ने इन्हे लाखों रुपये दिए, वह गलत है, नही तो ये मेरे यहाँ क्यों आते, किंतु तो भी इस बात पर निश्चय न होने से इन्हे राजसंमानित कवि समझ कर उसने एक लाख रुपये बिदाई में दिए, परंतु भूषण ने वह धन कुमायूँ नरेश (उद्योतसिंह) को वापस करके कहा कि मेरा प्रयोजन कुमायूँ आने से केवल शिवाजी का यशवर्द्धन था। शिवाजी की कृपा से अब रुपए पैसे की उन्हे कोई आवश्यकता नहीं रह गई थी। यह कथन चिटनीस बखर के आधार पर है।

२ लोहे का सार, इस्पात के अस्त्र।

३ खादर नदी के निकट की नीची भूमि को कहते हैं। इसमें रूखापन भी बहुत होता है।

४ शिवाजी का पौत्र। छं० द० छं० न० १० का नोट देखो।

५ एक कोकर देश मुलतान के पास है। एक कोकरा देश उड़ीसा और दक्षिण के बीच मे है। कोकरमंडा का एक दुर्ग तापती नदी के उत्तर किनारे पर था।

६ एक भक्खर गुजरात के पास और एक भाकर मुलतान के निकट था।

७ मकरान नामक एक स्थान सिंध के निकट था।

८ नर्मदा नदी के वार पार का प्रयोजन है।

९ शीराज हो सकता है। सिरोज नामक एक स्थान बुँदेलखंड के पास है और एक सागर के निकट भी।

फेरि दिल्ली पर परति परिंदन की छार[1] है ॥ १८ ॥

सारस से सूबा करबानक से साहिजादे मोर से मुगल मीर धीर मैं धचै[2] नहीं। बगुला से बंगस बलूचियौ बतक ऐसे काबिली कुलंग याते रन मैं रचै नहीं ॥ भूषन जू खेलत सितारे मै सिकार संभा[3] सिवा को सुवन जाते दुवन सचै[4] नहीं। बाजीं सब बाज की चपेटैं चंग चहूँ ओर तीतर तुरक दिल्लो भीतर बचै नहीं[5] ॥ १९ ॥

देखतही जीवन बिडारौ तौ तिहारौ जान्यो जीवनद[6] नाम कहिबेही को कहानी मैं। कैधौं घनस्याम जो कहावैं सो सतावैं मोहि निहिचै कै आजु यह बात उर आनी मैं ॥ भूषन सुकबि कीजै कौन पर रोसु निज भागिही को दोसु आगि उठति ज्यो पानी मैं। रावरेहू आये हाय हाय मेघराय सब धरती जुड़ानी पैन बरती जुड़ानी मैं ॥ २० ॥

बन-उपवन फूले अंबनि के झौर[7] झूले, अवनि सुहाति आभा औरे सरसाई है। अलि मदमत्त भये केतकी[8] बसंती फूली, भूषन बखानै

---

१ पूर्णोपमा, भयानक रस।

२ धरै नही।

३ शभाजी महाराज शिवाजी के पुत्र थे। इन्होंने ९ वर्ष सन् १६८९ ई० तक राज किया। ये महाराज बहादुर थे, परतु अपने पिता की भाँति मुतज्जिम न थे। सन् १६८९ ई० मे औरगजेब ने इन्हे पकड़ लिया और कहा—"यदि तुम मुसलमान हो जाओ तो तुम्हारा राज्य तुमको वापस कर दिया जाय।" इस पर इन्होंने कहा—"तुष्ट तुझपर थू और तेरे मत पर थू।" इस पर औरग-जेब ने बड़ी निर्दयता से इन्हे मरवा डाला।

४ सचार नहीं करता।

५ ये छद न० १८ व १९ शिवाबावनी से यहाँ आए हैं।

६ जीवन देनेवाला। वियोग का वर्णन है।

७ झाड़ैं, बहुत सी पत्तीवाली डालैं।

८ पीली केतकी जो बसत ऋतु मे फूलती है। श्वेत केतकी वर्षा मे फूलती है।

सोभा सबै सुखदाई है ॥ बिषम बिड़ारिबे को बहत समीर मद[1], कोकिला की कूक कान कानन सुनाई है। इतनो सँदेसो है जू पथिक, तुम्हारे हाथ, कहौ जाय कंत सों बसंत ऋतु आई है ॥२१॥

मलय-समीर परलै जो करत महा, जमकी दिसा ते आयो जम ही को गोतु है। साँपन को साथी न्याय चंदन छुए ते डसै, सदा सहबासी बिष गुन को उदोतु है ॥ सिधु को सपूत कलपद्रुम को बंधु, दीनबंधु को है लोचन, सुधा को तनु सोत है। भूषन भनैरे भुव भूषन द्विजेस तै कलानिधि कहाय कै कसाई कत होत है[2] ॥२२॥

जिन[3] किरनन मेरो अंग छुयो तिनही सों पिय अंगछुवै क्यों न मैन-दुख दाहे को। भूषन भनत तू तो जगत को भूषन है, हौं कहा सराहौं ऐसे जगत सराहे को ॥ चंद[4]-ऐसी चाँदनी न प्यारै पै बरसि,

---

१ (मानिनी का) विषम मद बिदारिबे को समीर बहत ।

२ विरह का वर्णन है। उद्दीपनों से शिकायत है। मलय समीर का तो कष्ट देना उसकी यमराज की दिशा (दक्षिण) से आने तथा साँपों के साथी होने से क्षम्य है, किंतु चद्रमा को (चाँदनी) छुये से न डसना चाहिये, क्योंकि वह समुद्र का सपूत, कल्पवृक्ष का भाई (कल्पवृक्ष और चद्र दोनों उन १४ रत्नों में से है जो समुद्र मंथन से प्राप्त हुए थे) दीनबंधु शिव भगवान् का नेत्र (सूर्य और चंद्र भगवान् के नेत्र कहे गए हैं)। सुधाकर, भुवनभूषण, द्विजेश [चंद्रमा को द्विजराज भी कहते हैं] तथा कलानिधि है।

३ हे निशाकर [चंद्र], तू ने जिन अपनी किरणों से मेरे कामदेव से जले हुए अग को छुआ है, उन्हीं से प्रियतम के अग को क्यों नहीं छूता (जिससे उन्हे भी मेरे ही समान काम पीड़ा उत्पन्न हो और हम दोनों का वियोग दूर हो) ?

४ हे चंद्र, ऐसी चंद्रिकाओं को प्यारे पर बरसाओ जिसमें कि वह विदेश में न रह सके और उस चितचाहे से मेरा मिलाप हो जाय।

उतैरहि न सकै मिलाप होय चित-चाहे को। तू तो निसाकर सब ही की निसा करै, मेरी जो न निसा[1] करै तौ तू निसाकर काहे को ॥२३॥

कारो जल जमुना को काल सो लगत आली, मानो विष भरयौ रोम रोम कारे नाग को। तैसियै भई है कारी कोयल निगोड़ी यह, तैसोई भँवर सदा बासी बन-बाग को ॥ भूषन कहत कारे कान्ह को वियोग हमैं ऐसे मे सँजोग कहँ बर अनुराग को। कारो घन घेरि-घेरि मारयो अब चाहत है, तापै तू भरोसो री करत कारे काग को ॥२४॥

मेचक[2] कवच साजि बाहन बयारि बाजि गाढ़े दल गाजि रहे दीरघ बदन के। भूषन भनत समसेर सोई दामिनी है हेतु नर कामिनी के मान के कदन के ॥ पैदरि बलाका[3] धुरवान[4] के पताका गहे घेरियतु चहूँ ओर सूते ही सदन के। ना करु निरादर पिया सो मिलु सादर ये आये बीर बादर बहादर मदन के ॥२५॥

सुभ सौंधे भरी सुखमा सुखरी मुख ऊपर आय रही अलकै।
कबि 'भूषन' अंग नवीन बिराजत मोतिन-माल हिए झलकै ॥

---

१ निसा तसल्ली को कहते है। चद्रमा निसाकर [निशाकर] ही है और तसल्ली करनेवाला भी कहा गया है, क्योंकि वह निसा [तसल्ली, चित्त की प्रसन्नता] कर (करनेवाला) है। मतलब यह है कि तू सबकी तसल्ली अवश्य करता है, किंतु यदि मेरी न करे तो मैं तुझे तसल्ली करनेवाला कैसे कहूँ ? निसा साधारण बोलचाल का शब्द है। उसकी अच्छी निसा खातरी हो गई, ऐसे वाक्य में इसका प्रयोग होता है।

२ काला।

३ बगुला।

४ जब बादल बड़े जोर से उठता है, तब उसमें दूर से जो लबे लबे खड़े दूसरे प्रकार के पतले धूम्र वर्ण बादल दौड़ते हैं, उन्हे धुरवा कहते हैं।

उन दोउन की मनसा मनसी नित होत नई ललना ललकै।
भरि भाजन बाहिर जात मनौ मुसुकानि किधौ छबि की छलकै ॥२६॥

[1]नैन जुग नेनन सो प्रथमैं लडे है धाय, अधर कपोल तेऊ टरे नाहि टेरे है। अड़ि अडि पिलि-पिलि लडे है उरोज बीर देखो लगे सीसन[2] पै घाव ये घनेरे है॥ पिय को चखायो स्वाद कैसो रति सगर को, भए अग अंगनि ते केते मुठभेरे हैं। पाछे परे बारन को बाँधि कहै आलिन सो, भूषन सुभट ये ही पाछे परे मेरे है॥२७॥

सुने हूजै बेसुख सुने बिन रह्यो न जाय, याही ते बिकल सी बिहाती दिन राती है। भूषन सुकवि देखि बावरी बिचार काज भूलिबे के मिस सास नद अनखाती[3] है॥ सोई गति जानै जाके भिदी होय कानै सखि जेती कढै तानै तेती छेदि छेदि जाती है। हूक पाँसुरी मै, क्यो भरौ न आँसुरी मै, थोरे छेद बाँसुरी मैं, घने-छेद किए छाती हैं॥२८॥

देह[4]-देह देह फेरि पाइए न ऐसी देह, जौन तौन जो न जानै कौन तौन आइबो। जेते[5] मन मानिक है तेते मन मानि कहै, धराई मे धरे

---

१ सम अभेद रूपक, उत्तमा दूती की मानवती नायिका प्रति शिक्षा।

२ सुरति सग्राम का वर्णन है। कुचो के शिरोभाग पर नख क्षत का प्रयोजन है। रतिसमर मे बालों के पीछे पडने का भाव अब तक शेख या आलम कवि का पहिला समझा जाता था, किंतु जान पडता है कि वास्तव मे यह भाव भूषण का था। देवजी ने भी इस भाव पर एक छद कहा है।

३ सास तथा ननद नायिका को प्रेम से बावली समझ कर विचार करने (चेतने) के अभिप्राय से भूलो के बहाने उससे नाराज होती है।

४ शात रस का वर्णन है। दान करो, दान करो, दान करो, ऐसा शरीर फिर नही मिलता है, जो जौन तौन (इधर उधर की) नही जानता उस किसको आना है (उसे पुनर्जन्म नहीं लेना है, क्योंकि वह मुक्त हो जायगा।)

५ जितने मणि माणिक्य हैं, उन्हे मन मे मानकर हम कहते हैं कि वे

ते तौ धराई धराइबो ॥ एक[1] भूख राख, भूख राखै मत भूषन की, यही भूख राख भूप भूख न बनाइबो । गगन[2] के गौन जम गिनन न देहैं, नग नग न चलैगो साथ नगन चलाइबो ॥२९॥

सैयद मुगल पठान सेख चंदावत दुच्छन ।
सोम सूर द्वै बंस राव राना रन रच्छन ॥
इमि भूषण अवरंग और एदिल दलजंगी ।
कुल करनाटक कोट, भोट कुल हबस फिरंगी ॥
चहुँओर बैर महि मेर, लगि साहि तनै साहस झलक ।
फिर एक ओर सिवराज नृप एक ओर सारी खलक ॥ ३० ॥

कोप करि चढ्यो महाराज सिवराज बीर, धौंसा की धुकार ते पहार दरकत हैं । गिरे कुंभ मतवारे सो नित फुहारे छूटे, कड़ाकड़ छिति नाल[3] लाखों करकत हैं ॥ मारे रन जोम के जवान खुरासान केते, काटि काटि दाटि दाबे छाती थरकत है । रनभूमि लेटे वे चपेटे पठनेते पर, रुधित लपेटे मुगलेटे फरकत हैं ॥३१॥

दिली दल दलै सलहेरि के समर सिवा भूषन तमासे आप देव दमकत हैं । किलकत कालिका कलेजे की कलल[4] करि करि कै अलल[5] भूत

पृथ्वी पर ही धरे है और उन्हे पृथ्वी पर ही धरना चाहिए (प्रयोजन यह है कि पार्थिव पदार्थ साथ नही जाते, सो उनसे अधिक संलग्न न होना चाहिए) ।

१ एक ही (ईश्वर की) क्षुधा रख, अलंकारों की क्षुधा मत रख, केवल यही क्षुधा (भूख, इच्छा) रख कि अपने को भूखों का राजा नही बनाना है ।

२ आकाश को गमन (मरण) के समय यमराज (पार्थिव वस्तुओं को) गिनने न देगा, पहाड़ और नगीना साथ न चलैगा और नंगे चलना होगा ।

३ घोड़े की नालैं जो पृथ्वी पर पड़ी हैं ।

४ कल्लोल, उछल कूद, खुशी ।

५ अलल्लै; तलल्लै, मजेदारी ।

भैरों तमकत हैं ॥ कहूँ रुंड मुंड कहूँ कुंड भरे सोनित के, कहूँ[1] बखतर करि भुंड भमकत हैं। खुले खग्ग कंध धरि ताल गति बंबपरि धाय धाय धरनि कबंध धमकत हैं ॥३२॥

भूप सिवराज करि कोपि रन मंडल मे खग्ग धरि कुद्यो चुकता के दरबारे मैं। काटे भट बिकट त्यों गजन की सुंड काटे, पाटे रनभूमि काटे दुवन सितारे मैं ॥ भूषन भनत चैन उपजे सिवा के चित्त चौंसठि[2] नचाई जबै रेवा के किनारे मै। आँतन की तांति बाजो, खाल की मृदंग बाजी, खोपरी की ताल बसुपाल के अखारे मैं ॥३३॥

मारेदल मुगल तिहारी तरवारि आगु उछलि बिछलि म्यान बांबीते निकासतीं। तेरी तरवारि लागे दूसरी न मांगै कोऊ काटि कै कलेजा शोन पीवत बिनासतीं ॥ साहि के सपूत महाराज सिवराज बीर तेरी तरवारि स्याह नागिनी सी भासतीं। ऊंट हय पैदरि सवारन के भुंड काटि, हाथिन के मुंड तरबूज लौं तरासतीं ॥३४॥

तेरी स्वारी माँझ महराज सिवराज बली ! केते गढ़पतिन के पंजर मचकिगे। केते बीर मारि कै बिडारे किरवानन ते, केते गिद्ध खाय केते अंबिका [3]अचकिगे ॥ भूषन भनत रुंड मुंडन की माल करि चारि पायँ नदिया के भारते[4] भचकिगे। टूटिगे पहार बिकराल भुव मंडल के, सेस के सहस फन कच्छप [5]कचकिगे ॥३५॥

तेग बरदार स्याह, पंखाबरदार स्याह निखिल नकीब स्याह बोलत

---

१ कहीं जिरह बख्तर और कहीं हाथियों के समूह झमाझम गिर रहे हैं।

२ नर्मद के तट पर चौसठि जोगिनी का एक मंदिर अब भी है।

३ काली द्वारा छक कर खाये गये।

४ बोझ से टेढ़े पड़ गये।

५ कचका खा गये; गड्ढे पड़ गये।

बेराह को। पान पीकदानी स्याह,[1] सेनापति मुखस्याह, जहाँ तहाँ ठाढ़े गनैं भूषन सिपाह को॥ स्याह भये सारी पातसाही के अमीर खान, काहू को न रहो जोम[2] समर उमाह[3] को। सिह सिवराज दल मुगल बिनास करि घास ज्यों पजारयो[4] आमखास पातसाह को॥ ३६॥

औरँग अठाना साह[5] सूरकी न मानै आनि, जब्बर जराना[6] भयो जालम जमाना को। देवल डिगाना, रावराना मुरझाना अरु धरम ढहाना पनमेट्यो है पुराना को॥ कीनो घमसाना, मुगलाना को मसाना[7] भरे, जपत जहाना जस बिरद बखाना को। साहिके सपूत मरदाना किरवाना गहि राख्यो है खुमाना बखाना हिंदुवाना को॥ ३७॥

सिहल के सिह समरन सरजा की हाँक, सुनि चौंकि चलत बधाई पाटसादी[8] के। भूषन भनत ते भुवाल दुरे द्राविड़ के, ऐल फैल गैल गैल भूले उनमादी के॥ उछलि उछलि ऊँचे सिंह गिरैं लंकमाहि, बूड़ि गये महल बिभीषन की दादी के। महि हाले, मेरु हाले, अलका कुबेर हाले जादिन नगारे बाजे सिव साहि[9] जादीके॥ ३८॥

---

१ पान रक्खे रक्खे सूखकर स्याह हो गये, तथा पीकदानी में नया थूक न पड़ने से पुराना सूखकर काला हो गया।

२ घमंड।

३ उत्साह।

४ जलाया—यथा, पजरे सहर साहि के बाँके।

५ शेरशाह सूर ने हुमायूँ को जीत कर शाहपद पाया था। वह हिंदुओं से भी अच्छा सलूक करता था।

६ जबरदस्त तथा देश जलाने वाला।

७ मोगल राज्य को श्मशान में भर दिया।

८ शादी के कपड़ों तक से बधाई भागती है।

९ शिवाजी की कन्या के।

प्रबल पठान फौज काढ़ि कै कराल महा अपनी मनाय आन जाहिर जहान को। दौरि करनाटक में तोरिगढ़ कोट लीन्हें मोदी सो पकरि लोदी सेर खाँ अचान[1] को॥ भूषन भनत सब मारि कै बिहाल करि साहि के सुवन राचे अकथ कथानको। बारगीर[2] बाज सिवराज के सिकार खेले, साह सैन सकुन मैं ग्राही किरवान को॥ ३९॥

पक्कर प्रबलदल भक्कर सों दौरि करि आप साहि जू को नंद बाँधि तेग बाँकरी। सहर मिलायो मारि गरद मिळायो गढ़ उबरे न आगे पाछे भूप कितनां करी॥ हीरा मनि मानिक की लाख पोटि[3] लादि गयो, मदिर ढहायो जो पै काढ़ी मूल कांकरी[4]। आलम पुकार करै आलम-पनाह जूपै होरी सी जराय सिवा सूरति फनां करी॥ ४०॥

साहि के सपूत सिवराज वीर तेरे डर अडग[5] अपार महा दिग्गज सो डौलिया। बंदर बिलाइति लौं डर अकुलाने अरु संकित सदाई रहे बेस बहलौलिया॥ भूषन भनत कौल करत कुतुबसाहि, चाहैं चहुँ ओर इच्छा[6] एदिलशा भौ लिया। दाहि दाहि दिल कीन्हे दुख दही दाग ताते आहि आहि करत औरंग साहिऔलिया॥ ४१॥

जानिपति बागवान मुगल पठान सेख बैल सम फिरत रहत दिन रात हैं। ताते ह्वै अनेक जोई सामने चलत सोई पीठि दै चलत मुखनाई सरसात है॥ भूषन भनत जुरे जहाँ जहाँ जुद्ध भूमि, सरजा सिवा के जस

---

१ अचानक, एकाएकी।

२ शिवाजी के बाजरूपी घोड़सवारों के शिकार खेलने से शकुन पक्षी रूपी शाही दल मे तलवार पकडने वाला कौन हुआ?

३ पोटली।

४ नीव का ककड़ तक खोद डाला। सूरत शहर की लूट का वर्णन है।

५ अचल; न भागनेवाला; डग न देनेवाला।

६ आदिल शाह डर कर चारों तरफ इच्छाये चलाते हैं।

बाग न समात हैं। रहट की घरी जैसे औरँग के उमराव पानिप दिलीते लाय ढोरि ढोरि जात है ॥ ४२ ॥

साहिते बिसाल भूमि जीती दस दिसन ते महि मैं प्रताप कीन्हों भारी भूप भान सों। जैसो भयो साहि के सपूत सिवराज बीर तैसो भयो होत है न ह्वै है कोऊ आन सो ॥ एदिल कुतुब साहि नौरँग के मारिबे को भूषन भनत को है सरजा खुमान सों। तीनि पुर त्रिपुर के मारे सिव तीनि बान, तीनि पातसाही हनीं एक किरवान सों ॥ ४३ ॥

तेरी धाकही ते नित हबसी फिरंगियो बिलायती बिलंदे[1] करै बारिधि बिहरनो। भूषन भनत बीजापुर भागनेर दिल्ली तेरे बैर भयो उमरावन को मरनो ॥ चारौं दिसि दौरि केते ज़ोर कै मुलुक लूटें कहा लगि साहस सिवाजी तेरो बरनो। आठ दिगपाल त्रासि आठौ दिसि जीतिबे को आठ पातसाहनसो आठौं जाम लरनो ॥ ४४ ॥

दौरि चढ़ि ऊँट फरियाद चहुँ खूँट किये सूरति को कूटि सिवा लूटि धन लै गयो। कहै ऐसे आप आमखास बीच साहही सो कौन ठौर जायँ दाग छाती बीच दै गयो ॥ सुनि बैन साह कहैं यारौ उमराओ जाओ सौ गुनाह राव एती बेर बीच कै गयो। भूषन भनत मुगलान सबै चौथि दीन्ही हिंद मैं हुकुम साहि नंद जू को है गयो ॥ ४५ ॥

तखत तखत पर तपत प्रताप पुनि नृपति नृपति पर सुनिये अवाज की। दंड सातौ दीप नव खंडन अदंडन पै नगर नगर पर छावनी समाज की ॥ उदधि उदधि पर दाबनी खुमान जू की थल थल ऊपर है बानी कबिराज की। नग नग ऊपर निसान झरि जगमगै, पग पग ऊपर दोहाई सिवराज की ॥ ४६ ॥

बारह हजार असवार ज़ोर दलदार ऐसे अफजल खान आयो सुरसाल है। सरजा खुमान मरदान सिवराज बीर गंजन गनीम आयो गाढ़ो

---

१ बिल्ली। मतलब यह है कि समुद्र में फिरने वाली याने भीगी बिल्ली हो गये।

गढपाल है ॥ भूषन भनत दोऊ दल मिलि गये बीर, भारत सो भारी भयो जुद्ध बिकराल है। पार जावली के बीच गढ परताप तरे सुनौ भई सोनित सो अजौं धरा लाल है ॥ ४७ ॥

कत्ता के कसैया महाबीर सिवराज तेरी रूमके[1] चकत्ता तक सका सरसात है। कासमीर काबुल कलिग[2] कलकत्ता अरु कुलि करनाटक की हिम्मति हेराति है ॥ बिकट बिराट[3] बग ब्याकुल बलख बीर बारहौ बिलायती सकल बिललात है। तेरी धाक धुधरि[4] धरा मे अरु धाम धाम अधाधुध[5] आँधी सी हुमेस हहरात है ॥ ४८ ॥

बद कीन्हे बलख सो, बैर कीन्हो खुरासान, कीनी हबसान पर पातसाही पलहीं[6]। बेद कल्यान घमसान कै छिनाय लीन्हे जाहिर जहान उपखान येही चलहीं ॥ जग करि जोर सो निजाम साहि जेर कीनो, रन मे नमाये है, रुहेले छल बलहीं। साहन के देस लूटे साहजी के सिवराज कूटी फौज अजौ मुगलान हाथ मलहीं ॥ ४९ ॥

कूरम कबध हाड़ा तूबर बघेला बीर प्रबल बुदेला हूते जेते दल मानी सो। देवल गिरन लागे मूरति लै बिप्र भागे नेकहू न जागे सोइ रहे रजधानीं सो ॥ म्बन पुकार करी सुरन मनायबे को सुरन पुकार भारी करी विश्वधनी सो। धरम रसातळ को बूड़त उबारयो सिवा मारि तुरकान घोर बल्लम की अनी[7] सो ॥ ५० ॥

---

१ रूम (टर्की) के चगताई खाँ के यहाँ तक।

२ उडीसा।

३ अलवर और जैपूर का प्रदेश।

४ धुधी, आसमान में उडती हुई मिट्टी।

५ धुधी हल्की होती है किंतु शिवाजी की धाक की धुधी भारी आँधी के समान हाहाकार मचाए हुए है।

६ एक पल भर में।

७ नोक।

जोर रूसियन को है, तेग खुरासान की है, नीति इँगलैंड चीन हुन्नर महादरी[1]। हिम्मति अमान मरदान हिंदुवानहू की, रूम अभिमान हबसान हद नादरी ॥ नेकी अरबान सान अदब इरान त्योंहीं, क्रोध है तुरान त्यों फरांस फंद आदरी। भूषन भनत इमि देखिये महीतल पै बीर सिरताज सिवराज की बहादरी ॥ ५१ ॥

आपस की फूट ही ते सारे हिंदुवान टूटे, टूट्यो कुल रावन अनीति अति करते। पैठि गो पताल बलि बज्रधर ईरषाते, टूट्यो हिरन्याक्ष अभिमान चित धरते ॥ टूट्यो सिसुपाल बासुदेव जू सो बैर करि, टूटो है महिष दैत्य अधम बिचरते। रामकर छुवतही टूटो ज्यों महेस चाप, टूटी पातसाही सिवराज संग लरते ॥५२॥

चोरी रही मन मैं, ठगोरी रही रूप ही मैं, नाहीं तौ रही है एक मानिनी के मान मै। केस मे कुटिलताई नैन में चपलताई, भौंह में बँकाई हीनताई कटियान मैं ॥ भूषन भनत पातसाही पातसाहन[2] मैं तेरे सिवराज आज अदल जहान मैं। कुच मैं कठोरताई रति मैं निलजताई छाँड़ि सब ठौर रही आनि अबलान मैं ॥ ५३ ॥

साहू जी की साहिबी दिखाती कछू होनहार जाके रजपूत भरे जोम बमकत हैं। भारेऊ नगर वारे भागे घर तारे दै दै बाजे ज्यों नगारे घनघोर घमकत हैं ॥ ब्याकुल पठानी मुगलानी अकुलानी फिरैं भूषन भनत मांग मोती दमकत हैं। दच्छिन के आमिल भगत डरि चहुँ ओर चंबल[3] के आरपार नेजे चमकत हैं ॥ ५४ ॥

---

१ महान, महत् अरी, भारी दरें।

२ बादशाही देश में न रहकर बादशाहों के शरीर भर में रह गई।

३ नदी चंबल के दक्षिण तक शिवाजी राज फैलाना चाहते थे।